प्रकाशक

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्

पटना

शकाब्द १८८२, विक्रमाब्द २०१८, ख्रीष्टाब्द १९६१

मूल्य सजिल्द—११.००

किये गये हैं, जिनका यहाँ सन्निवेश किया गया है। हमें प्रसन्नता है कि इस पुस्तक के सजाने-सँवारने में भी उन्होंने अपना अमूल्य समय देकर इसे आकर्षक बनाया है।

इस ग्रन्थ की उत्तमता और उपादेयता के मूल्यांकन का भार हम सुधी पाठकों पर छोड़ते हैं। हम इतना ही कहेंगे कि कला में उपयोगिता और सुन्दरता का ऐसा मणि-कांचन योग सर्वथा विरल है। लेखक ने यथास्थान अपनी विशद प्रस्तावना और विषय-प्रवेश में इसकी महत्ता सिद्ध कर दी है। इस पुस्तक से वेणु-शिल्प-जिज्ञासु पाठक निश्चित रूप से लाभान्वित होंगे।

श्रीमती कमलादेवी चट्टोपाध्याय ने इस पुस्तक का 'आमुख' लिखकर इसका जो शृंगार किया है, उसके लिए हम उनका आभार स्वीकार करते हैं। स्वयं यह आमुख ही इस पुस्तक में वर्णित वेणु-कला की सम्भावनाओं एवं इस ग्रन्थ की मौलिकता पर 'सर्चलाइट' फेंकता है, और अपने आप में ही यह 'पूर्णमदः पूर्णमिदं' है। श्रीमती चट्टोपाध्याय ने अपना यह आमुख अँगरेजी में लिखा है, उसे ज्यों-का-त्यों हम दे रहे हैं और हिन्दी पाठकों के लाभार्थ उसका अनुवाद भी साथ-ही-साथ दे दिया गया है। हमारा विश्वास है, परिषद् के अन्य प्रकाशनों की तरह यह पुस्तक भी कला, संस्कृति एवं साधना के जिज्ञासुओं का मनस्तोष कर सकेगी।

संसार जानता है, श्रीमहारथी कूची, रंग और कल्पना के धनी हैं। इस ग्रन्थ ने उनका एक नया पहलू हमारे समक्ष उपस्थित किया और वह यह कि वे हृदय और लेखनी के और भी बड़े धनी हैं। कलाकार का यह परम मनोहारी शाब्दिक रूप इस ग्रन्थ में वस्तुतः निखर आया है।

दोल-पूर्णिमा, २०१७ वि०

भुवनेश्वरनाथ मिश्र 'माधव'
संचालक

been an honoured tree in this country before the sophisticated Japanese bamboos got introduced to us from that far off land In fact, bamboo chips like pith have long been in use for decoration and prove in effect that they have almost the same delicacy and texture of the ivory at a glance

Shri Maharathi places us under a deep debt of gratitude for his excellent treatise on the bamboo and its uses, especially his practical hints to enable whoever is interested and has the aptitude, to make many useful items In highlighting the bamboo, he has done a distinctive service not only in popularising this multipurpose plant, but also in restoring to it its natural place of dignity and status of respect I would commend this book for translation into as many languages as possible to provide a fine handbook on bamboo

रहा है। वास्तव मे, सजावट के निमित्त लोहे की पतीलियों के समान वेणु की कमचियों का व्यवहार बहुत दिनो से होता आ रहा है। रचना की दृढता और लालित्य की दृष्टि से तो वणुशिल्प हाथी दाँत के वने शिल्प-जैसा ही प्रतीत होता है।

वेणु तथा इसकी उपयोगी प्रणालियों से समृद्ध-सवलित इस सर्वोत्कृष्ट कृति के कारण हमलोग श्रीमहारथीजी के प्रति अत्यन्त आभारी हैं। विशेषकर उन्होने इस पुस्तक मे वेणु के उपयोग के जो व्यावहारिक सकेत प्रस्तुत किये हैं, उनसे इस क्षेत्र मे काम करने एव रुचि रखनेवाले लोग इसका विविध भाँति से उपयोग करके बहुत अधिक लाभान्वित होगे। वेणु के महत्त्व को प्रकाश मे लाने मे उन्होने केवल विविध उपयोगो मे आनेवाली इस अतिशय महत्त्वपूर्ण वनस्पति को लोकप्रिय बनाकर ही नही, अपितु इसकी प्रतिष्ठा एव सर्वमान्यता की मर्यादा को पुनरुज्जीवित करके एक विशिष्ट सेवा कार्य सम्पन्न किया है। मेरा यह अनुरोध है कि इस पुस्तक का अनुवाद यथासम्भव अनेकानेक भाषाओ मे हो, ताकि वेणु से सबद्ध यह सुन्दर पुस्तक अधिकाधिक लोगों को सुलभ हो सके।

—कमलादेवी चट्टोपाध्याय

नई-नई आवश्यकताएँ आती गई और हर आवश्यकता को पूरा करने के लिए नई-नई चीजों का निर्माण होने लगा। कृषि-कार्य में दिन-प्रतिदिन प्रगति होती गई और साथ-साथ कृषि-कार्य के लिए आवश्यक चीजो का भी आविष्कार होने लगा। प्रकृति मनुष्य के सामने सहायिका के रूप मे अब खडी हुई। समाज-व्यवस्था के सिलसिले मे एक जगह स्थायी रूप से वास करने के कारण गृह-निर्माण की ओर भी उसका ध्यान गया। जहाँ अच्छे औजार के अभाव में किसी भी वस्तु को सुन्दर रूपरेखा देना मनुष्य के लिए असभव जान पडा था, वहाँ अब खोज के आधार पर धातु के हथियार बनने लगे। उन हथियारों के द्वारा प्रत्येक चीज में सुन्दरता का रूप-निरूपण करना भी उसके लिए अब सहज हो गया। उन धातु-निर्मित हथियारो के द्वारा बनी प्रत्येक चीज में सादगी के साथ अपूर्व भव्यता प्रस्फुटित होने लगी। गृह-निर्माण और कृषि-कार्य में भी उन चीजों का उपयोग बराबर होने लगा। आवश्यकता के अनुसार नये-नये औजार बनाने की दिशा में मनुष्य की खोज जारी रही, जिससे उसमे बौद्धिक विकास का क्रम बढता गया और आशातीत प्रगति होती रही।

सुतराम्, उस समय उन औजारों की प्राप्ति प्राकृतिक कच्चे सामानो से हुई, जो सहज सुलभ थे और जो उन औजारो के लिए आसान थे। नाना वृक्षों, वनस्पतियों, प्रस्तर आदि की प्राप्ति के क्रम में सबसे आसान उसे बाँस मिला। बाँस की बनावट सीधी होने के कारण वह उनकी कमचियाँ सरलतापूर्वक काट लेता था, और आसानी से उनका व्यवहार कर लिया करता था। गाँठ या गिरह को छोडकर बाँस के पोर की बनावट मे प्रकृति-दत्त सुन्दरता और चिकनापन होने के कारण मामूली औजारों से मजे में काम चल जाता था। सच तो यह है कि जिस समय धातु की उपादेयता सामने नही आई थी एव धातु-निर्मित बरतनो का चलन नही हुआ था, उस समय एकमात्र बाँस ही उसके सभी तरह की आवश्यकताओ की पूर्त्ति करने का सबल था। धातु से सामान आविष्कृत होने तक बाँस से बने जलपात्र, तेल रखने के पात्र, धान आदि अन्नो को मापने के बरतन आदि वस्तुएँ काम में लाई जाती थी। बाँस मे सबसे बडी विशेषता यह थी कि उसको किसी औजार विशेष से खोखला बनाने की आवश्यकता नही होती थी। उसके लिए बाँस मे स्वत वे सब चिह्न मिले थे, जिनकी उसे प्रतिदिन जरूरत पडती थी।

हमारा आदि-साहित्य ऋग्वेद है। उससे प्राचीन सभ्यता अभी हमे प्राप्त नही हो सकी है। ऋग्वेद का साहित्य कई हजार वर्षो का है, जिसमे अनेक शिल्पो के साथ वेणु-शिल्प की भी चर्चा है। ऋग्वेद ६, ४७, २६ और १०, १०२, २ मे चर्म-उद्योग, १०, २६, ६ और २, ३, ६ में वस्त्र और ऊन-उद्योग की चर्चा है। १०, १०६, १ मे तन्तुवाय जाति का उल्लेख है। इसी तरह स्वर्ण-शिल्प की चर्चा ५, ५८, ३, ५, ५३, ४ और ८, ४७, १५ में मिलती है। ऋग्वेद में ही वास्तु-शिल्प का वर्णन भी ७, ८८, ५, १, ११६, ८, ७ ३, ७ और ७, १५, १४ मे मिलता है। पायेदार और दो-तल्ले मकान का उल्लेख हमें २, ५, ६ और ५, ६२, ६ मे प्राप्त होता है, जिसमे बाँसो का उपयोग अवश्य होता होगा। पिंजडा बनाने का शिल्प भी ऋग्वेद-काल में विकसित था, जिसका उल्लेख १०, २८, १० में है। रथ-निर्माण की चर्चा ३, ६१, २ और १०, ८५, २ में प्राप्त होती है और १०, ३९, ४ में कहा गया है कि यहाँ का भृगुवश रथ-निर्माण के शिल्प में सभी गोत्रो से आगे बढा था। उस समय तक तलवार, भाले, फरसे से कही अधिक धनुष-निर्माण की विद्या में लोग निपुण हो चुके थे और धनुष-निर्माण इस बात का साक्षी है कि वेणु-शिल्प की कारीगरी की जानकारी ऋग्वेदकालीन जनता को अच्छी तरह थी। ऋग्वेद मे अश्वत्थ, शमी, पलाश, शाल्मली, खदिर, शिंशपा, वट, उदुम्बर आदि वृक्षो के साथ वेणु-वनस्पति की भी चर्चा प्राप्त होती है और वेणु वन की महत्ता हमारे ऋषियो को अच्छी तरह ज्ञात थी। इसीलिए हमारे ऋषि अन्य उपयोगी वस्तुओं के साथ वेणु-वन प्राप्त करने की भी कामना करते थे। मत्र में 'कृश-काण्व' ऋषि इन्द्र से याचना करते हैं—

शत वेणूञ्छत शुन शत चर्माणि म्लातानि।
शत मे बल्वजस्तुका अरुषीणा चतु शतम् ॥—ऋग्वेद ८, ५५, ३

अर्थात्—'सौ बाँसो की कोठियाँ, सौ कुत्ते, सैकडो बनाये गये चर्म, सैकडों मूँज-वन, और चार सो उपजाऊ भूमि हमें प्राप्त हो।'

इन सबसे अधिक वेणु-शिल्प की चर्चा हमे ऋग्वेद के उस मत्र में मिलती है, जहाँ सत्तू चालनेवाली चलनी की चर्चा है—

सक्तुमिव तितउना पुनन्तो यत्र धीरा मनसा वाचमक्रत।
अत्रा सखाय सख्यानि जानते भद्रैषा लक्ष्मीर्निहिताधि वाचि ॥—ऋग्वेद १०, ७१, २

अर्थात्—'जिस तरह चलनी से सत्तू परिष्कृत किया जाता है, उसी तरह बुद्धिमान् लोग मन से वचन को परिष्कृत करते हैं।' चलनी बाँस की ही बनती थी। उपर्युक्त ऋचा हमारे वेणु-शिल्प के विकास को भली भाँति प्रमाणित कर देती है।

अथर्ववेद मे भी वेणु (बाँस) और उसकी डालियो की चर्चा है। कामना है कि हमारे [illegible] शत्रु इस तरह फैले हैं, जैसे बाँस मे डालियो का जाल फैला रहता है। पर वे सभी अनेक वज्रो की तरह हमारे ऊपर आघात करने मे समर्थ न हो—

न वंश इव समग्रशाखिका अमिदाधृषु।
वेणा एना इवाभिताऽसमृद्धा अघायव ॥—१, २७, ३

हमारा आदि-साहित्य ऋग्वेद है। उससे प्राचीन सभ्यता अभी हमे प्राप्त नही हो सकी है। ऋग्वेद का साहित्य कई हजार वर्षों का है, जिसमे अनेक शिल्पो के साथ वेणु-शिल्प की भी चर्चा है। ऋग्वेद ६, ४७, २६ और १०, १०२, २ में चर्म-उद्योग, १०, २६, ६ और २, ३, ६ में वस्त्र और ऊन-उद्योग की चर्चा है। १०, १०६, १ मे तन्तुवाय जाति का उल्लेख है। इसी तरह स्वर्ण-शिल्प की चर्चा ५, ५८, ३, ५, ५३, ४ और ८, ४७, १५ में मिलती है। ऋग्वेद में ही वास्तु-शिल्प का वर्णन भी ७, ८८, ५, १, ११६, ८, ७ ३, ७ और ७, १५, १४ में मिलता है। पायेदार और दो-तल्ले मकान का उल्लेख हमें २, ५, ९ और ५, ६२, ६ में प्राप्त होता है, जिसमे बाँसो का उपयोग अवश्य होता होगा। पिंजड़ा बनाने का शिल्प भी ऋग्वेद-काल मे विकसित था, जिसका उल्लेख १०, २८, १० मे है। रथ-निर्माण की चर्चा ३, ६१, २ और १०, ८५, २ में प्राप्त होती है और १०, ३९, ४ में कहा गया है कि यहाँ का भृगुवंश रथ-निर्माण के शिल्प में सभी गोत्रों से आगे बढ़ा था। उस समय तक तलवार, भाले, फरसे से कही अधिक धनुष-निर्माण की विद्या मे लोग निपुण हो चुके थे और धनुष-निर्माण इस बात का साक्षी है कि वेणु-शिल्प की कारीगरी की जानकारी ऋग्वेदकालीन जनता को अच्छी तरह थी। ऋग्वेद मे अश्वत्थ, शमी, पलाश, शाल्मली, खदिर, शिंशपा, वट, उदुम्बर आदि वृक्षों के साथ वेणु-वनस्पति की भी चर्चा प्राप्त होती है और वेणु-वन की महत्ता हमारे ऋषियों को अच्छी तरह ज्ञात थी। इसीलिए हमारे ऋषि अन्य उपयोगी वस्तुओं के साथ वेणु-वन प्राप्त करने की भी कामना करते थे। मत्र में 'कृश'काण्व' ऋषि इन्द्र से याचना करते हैं—

शत वेणूञ्छत शुन शत चर्माणि म्लातानि।
शत मे बल्वजस्तुका अरुषीणा चतु शतम् ॥—ऋग्वेद ८, ५५, ३

अर्थात्—'सौ बाँसों की कोठियाँ, सौ कुत्ते, सैकडो बनाये गये चर्म, सैकडो मूँज-वन, और चार सौ उपजाऊ भूमि हमें प्राप्त हो।'

इन सबसे अधिक वेणु-शिल्प की चर्चा हमें ऋग्वेद के उस मत्र में मिलती है, जहाँ सत्तू चालनेवाली चलनी की चर्चा है—

सक्तुमिव तितउना पुनन्तो यत्र धीरा मनसा वाचमक्रत।
अत्रा सखाय सख्यानि जानते भद्रैषा लक्ष्मीर्निहिताधि वाचि ॥—ऋग्वेद १०, ७१, २

अर्थात्—'जिस तरह चलनी से सत्तू परिष्कृत किया जाता है, उसी तरह बुद्धिमान् लोग मन से वचन को परिष्कृत करते हैं।' चलनी बाँस की ही बनती थी। उपर्युक्त ऋचा हमारे वेणु-शिल्प के विकास को भली भाँति प्रमाणित कर देती है।

अथर्ववेद मे भी वेणु (बाँस) और उसकी डालियो की चर्चा है। कामना है कि हमारे शत्रु ने पाप रूपी शत्रु इस तरह फैले हैं, जैसे बाँस मे डालियों का जाल फैला रहता है। पर वे सभी अनेक वज्रो की तरह हमारे ऊपर आघात करने मे समर्थ न हो—

न वत्र ममशत्रवोमेना अभिदासृपु।
वेणा इना व्वामिनात्सत्सृहा अवायव ॥—[illegible], [illegible]७, ३

वाल्मीकीय रामायण में भी बाँस की चर्चा है। रामचन्द्र वनवास के काल मे एक दिन 'शैलोदा' नामक नदी के तीर पर पहुँचे, जिसके दोनो तटो पर 'कीचक' जाति के बाँसों का जगल लगा था—

त तु देशमतिक्रम्य शैलोदा नाम निम्नगा।
उभयोस्तीरयोस्तस्याः कीचका नाम वेणव ।

इतना ही नही, भगवान् राम को अपने वनगमन के समय जब यमुना नदी पार करना पड़ा, तब उन्होंने सूखे बाँसों का बेडा बनाया और उसी बेडे से यमुना को पार किया—

शुष्कैर्वंशै समास्तीर्णमुशिरैश्च समावृतम ।
ततो वेतसशाखाश्च जम्बूशाखाश्चवीर्यवान् ॥—अयो० ५५, १५

महाभारत-काल मे बाँस के ऐसे बाजे बनाये जाते थे, जो विजय या उल्लास के समय और अन्य बाजो के साथ बजाये जाते थे—

भेरीमृदङ्गनिनदै शखवैणवनिस्वनै ।—महा० ५, ९०, १६,

'हरिवश पुराण' के 'भविष्य पर्व' के ३९वें श्लोक मे अन्य शिल्पो के साथ वेणु-शिल्प का भी नाम आया है—

पश्येद बहुधादेव भिन्न-भिन्न सहस्रश ।
शिक्यञ्च दारव पात्र द्विदलान् वेणुकान् बहुम् ॥

उपर्युक्त वेणु-शिल्प-सम्बन्धी उल्लेख प्रागैतिहासिक काल का है। ऐतिहासिक काल में लगभग चार सौ वर्ष ईसा-पूर्व बौद्धकालिक ग्रन्थ 'महावग्ग' के 'कट्ठपादुका-परिक्खेपो' (५, ७, १५) प्रकरण में भिक्षुओं के धारण करने के लिए जूते और खडाऊँ का विधान किया गया है। भिक्षुओं के लिए चमडे के जूते का निषेध था, इसलिए बल्वज, हिंताल-पत्र, कमल-पत्र, कम्बल, ताडपत्र और बाँस के पत्रों से बननेवाले जूते पहनने का विधान किया गया है। बाँस के पत्तोंवाले जूते की चर्चा इस प्रकार है—

वेणुतरुणे छेदापेत्वा वेणुपत्तोपादुकयो धारेन्ति।
तानि वेणुतरुणानि छिन्नानि मिलापयन्ति ॥

इतना ही नही, महावग्ग के अनुसार बुद्ध ने भिक्षुओ के लिए बाँस की बनी आटा चालने की चलनी और आँख मे आँजन करने के लिए बाँस की सलाई के रखने की अनुमति दी थी। इसी तरह 'चुल्लवग्ग' के 'खुद्दकवत्थुक्खन्धक' (५, ६, १४ १५) में बाँस की अलगनी, कनखोदनी, पखा, चीवर सीने की सुई आदि का उल्लेख है। भिक्षुओं के लिए बाँस की बनी बहँगी पर भार ढोने का निषेध किया गया है।

सम्राट् अशोक के पितामह मौर्य चन्द्रगुप्त के मत्री 'चाणक्य' ने 'कौटलीय अर्थशास्त्र' का निर्माण किया था, जिसका समय लगभग ३०० ईसा-पूर्व था। 'कौटलीय अर्थशास्त्र' मे शिल्पों की चर्चा की भरमार है। उस समय भिन्न-भिन्न शिल्प के काम करनेवालो की श्रेणियाँ सुव्यवस्थित हो गई थी और 'चाणक्य' ने उनसे दण्ड तथा कर-ग्रहण की सुदृढ व्यवस्था कर दी थी। ये शिल्पी राज्य के प्रमुख अगो मे से थे, जिनके निवास और रोजी की समुचित व्यवस्था राज्य की ओर से होती थी। उस समय राज्य की सम्पत्ति में अन्य वृक्षों के साथ बाँस का महत्वपूर्ण स्थान था। वनस्पतियो के वर्ग की चर्चा करते हुए 'चाणक्य' लता-

इससे पता चलता है कि इस पुस्तक में दिये गये बाँस से बननेवाले सूप, चलनी, चँगेरी, भात रखने की पिटारी आदि उस समय भी बनते थे। चलनी की चर्चा तो हमें ऋग्वेद में भी मिलती है, जिसका उल्लेख पहले किया गया है।

उस समय बाजार में जिन शिल्पो की बिक्री होती थी, उन पर २०वाँ या २५वाँ हिस्सा 'कर' के रूप में लिया जाता था, जिनमे से एक वेणु-शिल्प भी था—

वस्त्रचतुष्पदद्विपदसूत्रकार्पासगन्धभैषज्यकाष्ठवेणुवल्कलचर्ममृतभाण्डाना धान्यस्नेहक्षारलवणमद्यपक्वान्नादीना च विंशतिभाग पञ्चविंशतिभागो वा।

इसी तरह यदि कोई वेणु-शिल्प की छोटी चीजो की चोरी करता था, तो उसपर १२ पण और बडी वस्तु की चोरी करने पर २४ पण का दण्ड लगता था—

चर्मवेणुमृद्भाण्डादीना क्षुद्रकद्रव्याणा द्वादशपणावरश्चतुर्विंशतिपणपरो दण्ड ।

— अधि० ३, अध्या० १७

वर्षाकाल मे लोग नदियो का सतरण काठ या बाँस के बेडे बनाकर भी करते थे, जिसकी चर्चा चाणक्य' भी करता है—

काष्ठवेणुनावश्चावगृह्णीयु । — अधि० ४, अध्या० ३

हमारे कविकुलगुरु कालिदास ने भी वाल्मीकीय रामायणवाले कीचक-बाँसो की चर्चा 'रघुवश' (२।१२) में की है, जिसमे कहा गया है कि जगली बाँसो के रन्ध्रों में तेज वायु के प्रवेश से जो मधुर ध्वनि उत्पन्न होती थी, वह मानो वन-देवता बशी वजा-वजाकर दिलीप-वश की कीर्त्ति का गान करते थे, जिसे दिलीप ने सुना—

सकीचकैर्मारुतपूर्णरन्ध्रै कूजद्भिरापादितवशकृत्यम्।
सुश्राव कुजेषु यश समुच्चैरुद्गीयमान वनदेवताभि ।

कालिदास ने बाँस के कठोर और लम्बे पोरो का भी उल्लेख किया है, जिसमें बतलाया गया है कि 'शूपणखा' की अँगुलियाँ बाँसो के लम्बे और मोटे-मोटे पोरों की तरह थी—

सा वक्रनखधारिण्या वेणुकर्कशपर्वया। —रघु० १२, ४१

स्वय 'शूर्पणखा' शब्द ही बतलाता है कि वेणु-शिल्पयो द्वारा धान-चावल फटकने के लिए सूप का निर्माण प्रागैतिहासिक काल मे ही हो चुका था।

सातवीं सदी के सम्राट् 'हर्ष' के दरबारी कवि 'बाणभट्ट' के काव्यों में भी वेणु-शिल्प की चर्चा है। बाणभट्ट लिखता है कि 'हर्षवर्द्धन' के पूर्वज 'पुष्यभूति' ने अपने दरबार में जब 'भैरवाचार्य' के शिष्य मस्करी परिव्राजक को देखा, तब उसके कन्धे पर एक डंडा था, जिसमें मिट्टी चालनेवाली बाँस की कमची की बनी चलनी टँगी थी और उसके हाथ में खजूर के पत्रों का बना भिक्षाकपाल लटक रहा था। वह वाक्य है—

बद्धमृद्परिशोधनवंशत्वक्तितउनाकौपीनसनाथशिखरेण खर्जूरपुटसमुद्गकगर्भीकृतभिक्षाकपालकेन योगभारकेणाध्यासितस्कन्धम्॥ —हर्षचरित, उच्छ्वास-३

इसी तरह 'पुष्यभूति' ने जब 'भैरवाचार्य' को देखा, तब उस आचार्य के पास बाँस की एक वैशाखी भी थी, जिसके ऊपरी भाग में लोहे का कीलनुमा अंकुश ठोंका हुआ था—

शिखरनिखातकुब्जकालायसकण्टकेन वैणवेन
विशाखादण्डेन विराजमानम्॥ —उच्छ्वास-३

सातवीं सदी के अन्तिम भाग में रचित दण्डीकृत 'दशकुमारचरित' में अनेक शिल्पों का प्रसंग मिलता है। इसमें चर्मशिल्प (चर्मभस्त्रिका), वेत्र-शिल्प (वर्ङ्करिका), मृद्-शिल्प (शराव=कुरवा), व्याघ्र-चर्म की पेटी (व्याघ्र-त्वचोद्दतीश्च), मुसल, ऊखल, लोह-शिल्प (कैंची, सँडसी) आदि अनेक शिल्पों की चर्चा है। उसी में वेणु-शिल्प के शूर्प का भी उल्लेख है—

असकृदङ्गुलीभिरुद्धृत्योद्धृत्यावहत्य शूर्पशोधितकणकिंशारुकांस्तण्डुलान् प्रक्षाल्य।
—छठा उच्छ्वास

अर्थात्—कन्या ने बार-बार अँगुलियों से चावल को चुना और सूप से फटककर भुस्सी को निकाल दिया तथा चावल को धो दिया।

वेणु-शिल्प की इतनी लम्बी परम्परा पर एक विहंगम दृष्टि डालने के बाद इधर के वेणु सम्बन्धी शिल्पों की चर्चा अनावश्यक है। इससे तो यह नितान्त सिद्ध है कि भारत में वेणु-शिल्प अतिप्राचीन काल से स्थित है और अन्य किसी भी शिल्प का समकक्षी है। एक ओर जहाँ यह दुर्भाग्य रहा कि भारत में धातु-शिल्प और मृद्-शिल्प की तरह यह वेणु-शिल्प अपना उत्तरोत्तर विकास नहीं कर सका, वहाँ इसे यह सौभाग्य भी प्राप्त है कि अपनी उपयोगिता के बल पर मुमूर्षु होकर भी अस्तित्व बनाये रहा, नष्ट नहीं हो सका।

रूप से उल्लेखनीय हैं। मेरी शिक्षा का प्रबन्ध जापान-सरकार की ओर से हुआ, अतः वहाँ के प्रसिद्ध शिल्पियो के तत्त्वावधान मे शिक्षा प्राप्त करने का सौभाग्य मुझे मिला। इसलिए, मै अनेक विख्यात शिल्पियो के सम्पर्क मे आया और उनसे वेणु-शिल्प-सम्बन्धी बहुत-सी वस्तुओ की जानकारी हासिल की। वहाँ मैने यह भी देखा कि देश के प्रत्येक शिल्प-केन्द्र में बाँस की जो भी वस्तुएँ बनती हैं, उनमें सर्वत्र विभिन्नता और अपना-अपना वैशिष्ट्य है। उनके आकार-प्रकार, व्यावहारिकता और शिल्प में एक दूसरे से कही साम्य नही है, फलतः व्यावसायिक दृष्टि से इन उत्पादित वस्तुओ में परस्पर प्रतियोगिता का कही प्रश्न ही नही उठता है। अगर व्यावहारिक दृष्टि से इनमें समानता भी है, तो बनावट और आकृति में इतनी विभिन्नता है कि इनमे प्रतियोगिता की टक्कर हो ही नही पाती है। ये शिल्प-केन्द्र अपनी-अपनी विशिष्टता के लिए सर्वत्र प्रसिद्ध हैं और सबका अपना एक मौलिक स्थान है—उनमें एकरूपता और पिष्टपेषण का दोष कही दृष्टिगत नही होता। यह देखकर मेरे लिए आवश्यक हो गया कि जितना ही ज्यादा शिल्प-केन्द्रो के सम्पर्क में आऊँ, उतना ही मुझे शिल्प-शिक्षा-क्रम मे लाभ होगा। अत प्रायः सभी विख्यात वेणु-शिल्प-केन्द्रो तथा प्रसिद्ध शिल्पियो से मुझे सम्पर्क स्थापित करना पडा और उनसे वेणु-शिल्प की विशेषज्ञता हासिल करनी पडी। इस क्रम में मुझे नोटबुक रखनी पडती थी और जानकारी की वस्तुओ का नोट लेना पडता था। इस तरह अपने-आप वेणु-शिल्प-सम्बन्धी एक विस्तृत नोट तैयार हो गया।

अपने देश मे बाँस की प्रचुरता मै देख चुका था और इससे उत्पादित शिल्पो का लाभ भी तबतक मै अच्छी तरह समझ चुका था। इसलिए मेरे मन में अब यह भी विचार आया कि वेणु-शिल्प-सम्बन्धी अपने इन नोटो के आधार पर यदि मैं हिन्दी में एक पुस्तक तैयार करूँ, तो भारतीय शिल्पियो का बहुत बडा कल्याण हो सकता है।

सभी प्रकार की विधियों से इसे अपनाया। घास-पात से भरे तथा टेले या कीचड़दार खेतों में रहने की जब समस्या आई, तब भी बाँस की मचान बनाने के काम में सर्वसुलभ प्रमाणित हुआ। वह अपने घर को भी बाँसों के घेरे में घेरकर वन्य पशुओं के भय से रहित हुआ। नदी की तेज धारा से गृह या खेतों का कटाव रोकने के लिए उसने बाँस के लम्बे-लम्बे खूँटे गाड़कर, घास-पुआल देकर मिट्टी से भर दिया और उन्हें कटाव से बचाया। मनुष्य जब फराठियों को जोड़कर दीवार खड़ी करने लगा और उसके छिद्रों से जब विषैले कीड़े घुसने लगे, तब बाँस की पतली कमाचियाँ बनाकर उसने चटाई बनाई और दीवार में लगाकर उस पर मिट्टी का गाढ़ा लेप दिया और घर को सुघड़ तथा सुरक्षित बनाया।

यह पहले कहा गया है कि आदिम मानव पूर्ण विचरणशील था और स्थायी सम्पत्ति उसके पास नहीं थी। किन्तु, वर्षा, हिमपात या अन्य आपत्तिकाल में जब उसका विचरण रुक जाता था, तब भोजन प्राप्त करने की समस्या उपस्थित हो जाती थी। इसके अतिरिक्त जब कृषि-कर्म का विस्तार हुआ और अतिरिक्त भोज्य पदार्थ पैदा होने लगा, तब उसके सचय की भी चिन्ता मानव को सताने लगी। उसने घर में या द्वार पर कोठी या बखार बनाने को सोचा, और इस काम में भी बाँस की फराठियों तथा उसकी कमाचियों से बनी चटाइयाँ बड़ी ही उपयोगी साबित हुई और इन सामानों से अन्न की कोठियाँ भी बनने लगी। साथ ही अन्नों को यहाँ से वहाँ ले जाने के लिए उसने बाँस की छोटी-बड़ी टोकरियाँ बनाई और उन्हें वह व्यवहार में लाया। घर के अन्दर भी सामानों के सचय करने में बाँस के बने मचान बड़े काम के प्रमाणित हुए। मचान पर रखे गये अनाज में चूहों के आक्रमण और सील लगने के भय की आशंका नहीं रही। इस प्रकार क्रमशः बाँस-शिल्प में कालक्रम से अधिकाधिक विकास होता गया और वह जीवन और समाज का प्रमुख अंग बन गया।

हम देखते हैं कि धातु-शिल्प और कृषि-कार्य जैसे-जैसे विकसित होते गये, वैसे-वैसे बाँस से बननेवाले सामानों में सुरुचिपूर्ण शिल्प का विकास होता गया। हम यह भी देखते हैं कि जगलों को काटकर या ऊँची-नीची जमीन को बराबर कर खेत बनाये गये और उसपर अधिकार प्राप्त करके मानव ने अचल सम्पत्ति का निर्माण आरम्भ किया। सिंचाई की व्यवस्था कर कृषि में विकास किया। तब अचल सम्पत्ति के लोभ से मानव ने समूह में रहकर स्थिर निवास की आदत अपने में डाली और इससे टिकाऊ सभ्यता का विकास हुआ। समूहों, उपसमूहों और कुलों के बसने से गाँव तथा जनपद का विकास हुआ और इस स्थिरीकरण से आवश्यकता तथा उपयोगिता के आधार पर बाँस-शिल्प के विकास में बहुत बड़ी मदद मिली। इस तरह बाँस-शिल्प द्रुत वेग से छलाँग मारता हुआ (मण्डूकप्लुत गति से) विकास के शिखर पर पहुँच गया।

हमारे लिए यह बतलाना कठिन है कि बाँस से बननेवाली प्रत्येक वस्तु की उत्पत्ति-कथा का तथा इसके सिलसिलेवार विकास का इतिहास क्या है? ऐसा इतिहास न तो किसी पुस्तक में प्राप्त है और न राजनीतिक तथा सांस्कृतिक इतिहास की तरह शिला-लेखों में। मिट्टी, प्रस्तर तथा अन्य धातु-सामग्रियाँ जिस तरह अपने शिल्प-कथा का इतिहास

तब दोनो की एकरूपता पर हमें आश्चर्य होता है। ये वणु-शिल्प ही इस बात के प्रमाण हैं कि भारत से बौद्धधर्म के साथ ही उन देशों में वणु-शिल्प गया। इन देशों में वणु-शिल्प के व्यवहार का विस्तार और उनके उच्च कलापूर्ण नमूने इस बात के साक्षी हैं कि भारत में इस शिल्प का अतीत कितना उज्ज्वल था। उन देशों में जापान, चीन, स्याम, फारमोसा, इण्डोचाइना, इण्डोनेशिया, कम्बोडिया, मलाया, बर्मा आदि देश हैं। केवल जापान में ही ३००० किस्म के बाँस के व्यावहारिक शिल्प बनते हैं। वहाँ जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में बाँस का स्थान सर्वोपरि है। पूजा-पाठ तथा पर्वोत्सवों के समय भी इसका व्यवहार अनिवार्य है। हमारे देश में भी ऐसे अवसरों पर इसकी अनिवार्यता मानी गई है। वेणु-शिल्प के अनिवार्य विकास तथा सुरक्षा के लिए ही जापान में यह प्रथा प्रचलित है कि प्रत्येक अविवाहित कन्या, अपने विवाह के पूर्व इस कला में दक्षता प्राप्त कर ले। वहाँ जो कन्या इस शिल्प में जितना ही ज्यादा निपुण होती है, उतना ही उत्तम, रूप-गुण-सम्पन्न, वर उसे प्राप्त होता है। जापान की इस व्यवस्था को मैंने अपनी आँखों देखा है। जिस तरह हमारे देश में अच्छे वर प्राप्त करने के लिए पहले प्रत्येक लड़की को घर-गृहस्थी (चूल्हा-चक्की, कसीदा और सीकी-शिल्प) के काम में निपुण होना अनिवार्य था और जैसे आजकल स्कूली शिक्षा, नृत्य-संगीत आदि आवश्यक हो गये हैं, उसी तरह जापान में वेणु-शिल्प की जानकारी अत्यन्त आवश्यक है। वहाँ वेणु-शिल्प गृहस्थी के प्रमुख कार्यों में सर्वोपरि माना गया है। हमारे देश में जिस कला का जितना ही ज्यादा महत्त्व होता था, उसकी सुरक्षा के लिए ऐसा ही नियम लागू था। हमारे पूर्वजों ने ऐसी वस्तुओं को अपने जीवन और संस्कृति के अंग के रूप में समाविष्ट कर लिया था।

वेणु-शिल्प के प्राचीन इतिहास और सांस्कृतिक एकात्मता का एक उदाहरण ही यहाँ देना अधिक होगा और वह है—बाँसुरी। बाँसुरी का इतिहास ईसवी सन् से लगभग १५०० वर्ष पहले महाभारत-काल में, भगवान् कृष्ण के जीवन के साथ, हमें मिलता है। इस बाँसुरी में दूसरी किसी वस्तु का साहाय्य अपेक्षित नहीं है। यह मानी हुई बात है कि जिस कला में जितने कम साहाय्य-आधारों की अपेक्षा होगी, वह कला उतनी ही महत्त्वपूर्ण मानी जाती है। अतः, वाद्य में बाँसुरी सर्वोपरि है। साथ ही हमारी भागवत संस्कृति का एकमात्र आधार बाँसुरी है। भगवान् कृष्ण की सम्पूर्ण कोमल कला बाँसुरी से आच्छादित है। अत, वणु-शिल्प का विकास हम उस काल से ही कुछ समझ सकते हैं।

बाँस एक ऐसी वस्तु है, जो ज्यादा पूँजी के बिना भी सर्वसुलभ है और बिना पूँजी लगाये सुन्दर-से-सुन्दर वस्तुएँ बना ली जा सकती हैं। इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हमारे विभिन्न प्रदेशों—जैसे मणिपुर, आसाम, त्रिपुरा, बिहार, उड़ीसा, मद्रास आदि—में आज भी प्राप्य हैं। इन स्थानों में कम पूँजी की लागत से बाँस की उत्कृष्ट और कलापूर्ण वस्तुएँ बनाई जाती हैं, जो जापान के वणु-शिल्प से टक्कर ले सकती हैं। किन्तु साधारण तौर पर हमारे देश में बाँस का वही शिल्प जीवित है, जो गृहस्थी के दैनिक जीवन में अथवा संस्कृति में निष्ठ कर लेने के कारण पूजा-पर्व में व्यवहृत होता है। बाँस की अपनी यह विशेषता है कि दैनिक जीवन में इसे कभी हटाया नहीं जा सकता। विवाह आदि उत्सवों के समय

रुधिर-विकार, मन्दाग्नि, रक्त-पित्त, ज्वर, कुष्ठ, कामला, पाडु, दाह, तृषा, व्रण, मूत्रकृच्छ्र और वात को नष्ट करता ह। इसमे ७० प्रतिशत सेलिसिक एसिड और ३० प्रतिशत पोटाश तथा चूना रहता है।

जिस वशलोचन मे जितनी अधिक सेलिसिक एसिड रहती है, वह उतना ही उत्तम होता है। इसके प्रयोग से श्वासेन्द्रिय की श्लेष्म-त्वचा को बल मिलता है तथा श्वास-नालिका मे उत्पन्न होनेवाले कफ का क्षय हो जाता ह। इस कार्य के लिए सितोपलादि का चूण उत्तम प्रमाणित हुआ ह।

आयुर्वेदिक ग्रन्थ 'राजनिघटु' के अनुसार दोनो प्रकार के बाँस (नर और मादा) खट्टे, कसैले, किचित् कडवे, शीतल तथा मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह, बवासीर, पित्त, दाह और रक्त-विकार को शमन करनेवाले हैं।

मादा बॉस अग्नि को दीप्त करनेवाला, अजीणनाशक, रुचिवर्द्धक, पाचक, हृदय-पुष्टिकारक तथा शूल और गुल्म को नष्ट करनेवाला होता है।

बाँस के चावल भी होते हैं। कभी-कभी बाँस में जौ के बराबर फल निकल आते हैं। इन्ही फलो से चावल के दाने निकलते हैं। इन्ही दानो को बाँस के चावल कहते हैं। ये चावल कसैले, मधुर, पौष्टिक, बलवर्द्धक तथा कफ, पित्त, विष और प्रमेह को दूर करनेवाले हैं।

गर्भाशय के ऊपर बाँस का प्रयोग विशेष रूप से लाभदायक है। इसके प्रयोग से गर्भाशय का सकोचन होता है। इसीलिए प्रसूति के समय इसके कोमल पत्तों का काढा स्त्रियो को पिलाया जाता है। इससे प्रसूता के गर्भाशय की गन्दगी बिलकुल साफ हो जाती है और गर्भाशय अपनी पूर्वावस्था में आ जाता है। बच्चा जनने के पश्चात् जानवरो को भी बॉस के पत्ते इसीलिए खिलाये जाते हैं कि उनका गर्भाशय शुद्ध हो जाय।

प्रसूता के अतिरिक्त अन्य स्त्रियों को भी, मासिक शुद्ध न होने पर, बाँस के कोमल पत्तो तथा कोपलो का, अन्य ओषधियों के मिश्रण से बनाया काढा पिलाया जाता है, जिनसे उनका मासिक-धर्म शुद्ध हो जाता है।

महत्त्वपूर्ण अग है। यह बचपन मे हमारे लिए गुली-डण्डा, जवानी मे लाठी-भाला, तीर-धनुष, बुढापे मे लकुटी और मरघट तक ले जाने मे रथी बनता है और क्रमश. आनन्द, साहस, सहारा और साथी बनकर सहायता करता है। तब अपने ऐसे सच्चे बन्धु बाँस को हम कैसे भूल सकते हैं। हमारे गृह-कार्य और पर्व-पूजाओ के कार्य भी इसके बिना कभी पूरे नही हो सकते। हमारे पूर्वजो ने, बाँस की ऐसी उपयोगिता और महत्ता जानकर ही, सामाजिक जीवन और संस्कृति मे इसे इतना महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है।

किन्तु मजबूत बॉस, जो किसी भी ओर मोडे जा सकते हैं या जिन्हें किसी भी आकार में विभक्त किया जा सकता है अथवा बहुत ही पतली-पतली कमाचियाँ बनाई जा सकती हैं। इसी कारण प्राचीन काल से ही गृह-सम्बन्धी अनेक कार्यों में, वास्तुकला अथवा कृषि-सम्बन्धी वस्तुओं में तथा औद्योगिक कला-कृतियों में बॉस व्यवहृत होता आ रहा है। हमारे देश में बॉस से काम करनेवाले कारीगरों की कमी नहीं है। कहीं-कहीं ऐसे भी कारीगर हैं, जो बॉस से उत्तम-से-उत्तम बहुमूल्य शिल्प-सामग्री बनाते हैं। बॉस के कार्यों का इतना विस्तृत रूप है, जो भारत के सभी प्रान्तों में बॉस के काम करनेवालों की अलग जाति ही बन गई है। साथ ही ऐसा कोई गाँव नहीं है, जिसमें या जिसके आस-पास यह जाति नहीं हो। ये लोग केवल बॉस के पेशे से ही अपना और अपने परिवार का भरण-पोषण करते हैं। लेकिन वे अभी तक जिस रूप में बॉस का काम करते आ रहे हैं, उसका रूप कलात्मक नहीं कहा जा सकता है। क्योंकि, जापान आदि जगहों से बाँस की बनी वस्तुओं के जो नमूने हमारे देश में आ रहे हैं, उन नमूनों के सामने हमारे यहाँ के पेशेवर कारीगरों की चीजें बराबरी में नहीं टिक पाती। उनकी बराबरी में नहीं आने के कारण ही बाजार में भारतीय कारीगरों की चीजों की मॉग तेज नहीं होती है। हॉ, एक जमाना था कि भारतीय कारीगरों द्वारा बनाई बॉस की सामग्री सूक्ष्म-से-सूक्ष्म और उच्च कोटि की होती थी। आज भी कई प्रान्तों में उनके नमूने हमें उपलब्ध होते हैं। इनमें आसाम, त्रिपुरा, बिहार, मद्रास आदि प्रमुख हैं। आज भी यदि भारतीय कारीगरों को आधुनिक औजारों के व्यवहार की शिक्षा दी जाय और उन्हें वस्तुओं को कलात्मक बनाने की ओर आकृष्ट किया जाय, तो इसमें संदेह नहीं कि बाँस के कार्य का भविष्य अत्यन्त उज्ज्वल हो जाय और हमारी आर्थिक दुरवस्था भी सुधर जाय।

बाँस और उससे बननेवाले सामान

बाँस पोले नल के आकार के होते हैं। उनमें 'सिलिकेट ऑक्साइड' (पाषाणमय प्राणतत्त्व) होता है, जिससे बॉस की मजबूती में स्थायी शक्ति स्वतः काम करती है। यही कारण है कि बॉस हलका होते हुए भी अपने से कई गुना अधिक वजन को वहन कर लेता है। बॉस को मजबूती के आधार पर कुछ बॉसों के और उनसे बननेवाली वस्तुओं के नाम नीचे दिये जा रहे हैं। इनकी मजबूती के साथ इनकी उपयोगिता की जानकारी प्राप्त हो सकती है। हरौती, चाभ, पहाड़ी, मकोर, फूलबॉस, बसहा, जोन्हिया आदि जाति के बॉस अपनी मजबूती के लिए प्रसिद्ध हैं। उपयोगिता की दृष्टि से भी इनकी अपनी अलग विशेषता है। जैसे—

१. मकोर से—कूँची, छडी, बुनने की सामग्री आदि।

२. चाभ से—घर-गृहस्थी के व्यावहारिक सामान।

३. हरौती से—छप्पर के कोरे, बीम, बर्रा, खूँटा, बैलगाडी के बल्ले, लाठी, मछली मारने की लग्गी, सीढियाँ आदि।

काम मे लाये जाते हैं और फर्श तथा दीवार बनाने के लिए इसे फाडकर चटाई की तरह बुन लेते हैं। ईटो से मकान बनाते समय मचान के लिए बाँसो की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त सीढी, नावो के मस्तूल, पहिये की धुरी (axle), खटिया, लाठी, टेण्ट के खम्भे, ब्रश (brushes), पाइप (pipes), पखा, छाते की बट, खिलोना, तीर, टोपी, टोकरी, चटाई, टिफिन के लिए बक्स (tiffin-boxes), कुर्सी-टेबुल वगैरह वस्तुएँ भी बाँस से बनती हैं।

२ Oxytenenthera monostigma (ओक्सिटेनेन्थेरा मोनो स्टिग्मा) तथा Pseudostachyam polymorpha (सीउडोस्टाकियम पोलिमोर्फा) से छाते की बेंट (umbrella handle) बनती है।

३ Arundinaria falcata (अरुण्डिनारिया फाल्केटा) से टोकरी, हुक्के की नली (Hookah-tubes) और मछली मारने की लग्गी (fishing rod) बनती है।

४ बाँस के फल, धान के फल की तरह पर कुछ बडे होते हैं और अकाल के समय खाद्य-पदार्थ की तरह उपयोग मे आते हैं।

५ बाँस की पत्तियाँ जानवरो के लिए खाद्य पदार्थ हैं। जगलो मे बाँस की पत्तियाँ हाथियो का प्रमुख भोजन होती हैं।

६ नवजात बाँस का कोमल भीतरी भाग तरकारी और अँचार बनाने के लिए उपयोग मे आता है।

७ भारतवर्ष मे बाँस का सबसे बडा उपयोग कागज बनाने के काम में होता है, जो इसके सर्वनाश का कारण है।

८ आजकल बाँस से रेयन (rayon) भी बनने लगा है।

बाँस द्वारा बननेवाली शिल्प सामग्री के निर्माण मे आवश्यक जानकारी—

१ बाँस का उत्पादन करना अथवा खरीदना।
२ कार्यो के अनुसार बाँस का चुनाव।
३ वस्तुओ के योग्य बाँस को काटना, रँगना तथा कमचियाँ बनाना।
४ कमचियों से विभिन्न प्रकार की वस्तुएँ बनाना।

बाँस—एक अध्ययन

बृहत्तृण, धानुष्य, दृढग्रन्थ, दृढकाण्ड, दुरारोह, कमठ, कंटकी, कटालु, कीचक, मृत्युबीज, मस्कर, वश, वेणु, यवफल आदि।

हिन्दी में—बाँस, काँटा बाँस, मगर बाँस, मल बाँस, कटक। (जो बाँस विशेषतः औषध के कार्य में, आयुर्वेदानुसार, व्यवहृत होता है, उन्हीं बाँसों के नाम यहाँ दिये गये हैं।)

बंगाल में—बाँस, वेहुर बाँस।

बम्बई में—दोगी, कलक, माडमे।

मध्यप्रदेश में—कंटक।

गुजरात में—बाँस तीनकोर।

महाराष्ट्र में—कलक, वाबु।

पंजाब में—नल, मगर, मगेरी।

तमिल में—अवल, अबु, वेणु।

तेलुगु में—बोगु, बोगूवद्देस।

सन्थाली में—मद।

फारसी में—नाई।

उर्दू में—बाँस।

अँगरेजी में—स्पेनी बम्बोसा (Spiny Bambosa), थॉर्नी बम्बू (Thorny Bamboo)।

लैटिन में—बाबुसा आरडीनेसिया (Bambusa arundinacea)।

भारत में जो १३६ प्रकार के बाँस पाये जाते हैं, उनमें निम्नलिखित बाँस अधिक प्रसिद्ध हैं। इनके हिन्दी नाम उपलब्ध नहीं हो सके, अतः अँगरेजी नामों के साथ संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है—

१ Arundinaria wightiana (अरुण्डिनारिया वाइटियाना)—इसकी लम्बाई ६ से १० फुट तक होती है और यह नीलगिरि पहाड़ पर पाया जाता है।

२ Arundinaria recemosa (अरुण्डिनारिया रेसिमोजा)—इसे नैपाली में मालिंग कहते हैं। यह पूर्वीय हिमालय में ६,००० से १०,००० फुट की ऊँचाई तक पाया जाता है।

३ Arundinaria falcata (अरुण्डिनारिया फाल्काटा)—जौनसार (टिहरी-गढ़वाल) में इसे गंगल कहते हैं। ६ से १० फुट तक इसकी लम्बाई होती है। पश्चिमी हिमालय में ४,००० फुट से ७,००० फुट तक की ऊँचाई में यह पाया जाता है।

४ Arundinaria spathflora (अरुण्डिनारिया स्पेथिफ्लोरा)—इसकी लम्बाई १० से २० फुट तक होती है। यह सतलज नदी से नैपाल तक ७,००० से ६,००० फुट की ऊँचाई तक में पाया जाता है।

१४ Melocanna bambusoides (मेलोकाना वैम्बुसाइडिस)—इस वॉस की विचित्रता है कि यह करीव २-२ फीट की दूरी पर जमीन के अन्दर से निकलता है। ये वॉस विलकुल सीधे ३०-५० फुट लम्बे और १½-२½ इच मोटे और पोले (फोफडे) होते हैं। ये गारो, खासी और लुसाई पहाडो मे पाये जाते हैं।

१५. **चाभ**—चाभ सवसे मजबूत वाँस होता है। यह जितना अधिक मोटा और पोला होता है, उतना ही अधिक पानी और धूप सहन करता है। इसके आसानी से वहुत पतले भाग बनाये जा सकते हैं और चाहे जिस रूप मे इसे मोड भी सकते हैं। इसलिए मुख्यतः यह पिंजड़े, टोकरी, डगरा, डलिया, पेटी आदि के लिए उपयुक्त होता है।

'चाभ' बाँस के लिए न अति शीत और न अति उष्ण जलवायु की जरूरत पडती है। यह भारत के प्रायः सभी प्रान्तो मे पाया जाता है। यह जापान के मध्य तथा दक्षिण के जिलो में उपजता है। चाभ वाँस जापान के क्योटो सादो-द्वीप, किशु और सिकोकु में उपजाया जाता है। यह भारत के उन हिस्सो मे अधिकतर उत्पन्न होता है, जहाँ की जलवायु समशीतोष्ण होती है। पहाड़ी तराई मे यह वॉस उत्तम प्रकार का पाया जाता है, क्योंकि वैसे स्थानों की मिट्टी मजबूत होती है और उसे आँधी आदि से सर्वदा वचाव मिलता है। ऐसे स्थानो मे वाँस काफी लम्बे होते हैं और उस वाँस की अच्छी उपज के लिए छाया भी मिल जाती है।

सवसे लम्बे किस्म का चाभ ६० फुट तक का होता है। ऐसे चाभ वाँस की गाँठो के वीच की दूरी २ फुट तक की होती है। जलवायु के अनुसार, कही-कही चाभ की गाँठो की दूरी और लम्बी होती है।

जापान में वॉसो के विभिन्न नामकरण किये गये हैं, लेकिन भारत मे उपयोगिता के आधार पर अभी तक वेसा नही हो सका है। जापान के ही समान भारत मे भी अनेक प्रकार के 'चाभ' वाँस लम्बे, पतले और मोटे होते हैं। वहाँ की तरह यहाँ विना गाँठ के वाँस उपलब्ध नही हैं। वहाँ तो ऐसे बाँस पाये जाते हैं, जिनके सिरे पर ही कुछ गाँठें होती हैं। ऐसे वाँस भारत में वहुत कम हैं। ऐसे वाँस का हरेक भाग उपयोग मे आता है।

चाभ वाँस करीव-करीव जापानी 'मादाके' वाँस के समान ही होता है, वल्कि उमसे थोडा अधिक मुलायम होता है। दोनो वाँसो की कमच्चियाँ वनाकर परीक्षण किये जाने पर पाया गया है कि 'मादाके' कमची मोडते समय टूट गई। कारण यह है कि चाभ मे 'मादाके' से अधिक स्निग्धता है। लेकिन, जापान के वॉस अधिक चमकदार होते हैं। इस कारण रँगे जाने पर जो चमक उसमें आती है, वह भारतीय वाँसो मे नहीं आ पाती।

१९ **पहाड़ी बाँस**—यह भारत के पहाड़ी भागों में पाया जाता है। इसके पत्ते लम्बे-लम्बे होते हैं। इसकी ऊँचाई भी १० से १५ फुट तक और व्यास आधे इञ्च से एक इञ्च तक होता है। यह कुछ टेढ़ा होता है, अतः किनारा मढ़ने का काम इससे बहुधा लिया जाता है। इससे पिंजड़े और टोकरियाँ भी बनती हैं। यह लचीला और मजबूत होता है और पथरीली तथा कड़ी भूमि में उपजता है। मकोर जातिवाले उपर्युक्त बाँस से यह ज्यादा मजबूत तथा निमन (छिद्र-रहित) होता है। इसकी फराठी से घर के छप्पर बिटे जाते हैं और बिना फाड़े बाँस से भी मजबूत छप्पर बनाये जाते हैं। इसकी लाठी बड़ी मजबूत होती है। भारत में यही बाँस अधिकतर कागज बनाने के काम में लाया जाता है।

२० **फूल बाँस**—लम्बाई में यह छोटा होता है और इसमें छिद्र बहुत पतला होता है। यह बहुत मुलायम तथा हल्का भी होता है। इसकी कमचियों से आकाशदीप के ढाँचे, बाँसरी, मछली पकड़ने की बंसी, ताजिया, गुड्डी, लटाई इत्यादि बनाये जाते हैं। प्राचीन काल में इससे लिखनेवाली कलम भी बनती थी। इस बाँस से छाते की डंटी बनाई जाती है।

आसाम के बाँसों के नाम और विवरण

१. **माखल**—इस बाँस में दूर-दूर पर गाँठें होती हैं। अन्य बाँसों की अपेक्षा इसकी यह विशेषता है कि इसमें किसी तरह के कीड़े नहीं लगते। बाँस के कारीगर इसे ज्यादा पसन्द करते हैं।

२ **गेन्हिया**—यह बिलकुल ठोस और पतला होता है। इसका उपयोग विशेषतः छड़ी और लाठी के लिए होता है।

३ **बसहा**—इसकी उपज भारत के पड़ोसी देश नैपाल में बहुतायत से होती है। यह खूब मोटा होता है। प्रायः नैपाली लोग कँटिया—तेल नापने और गाय-भैंस दुहने के बरतन—बनाने के काम में लाते हैं।

इनके अतिरिक्त निम्नलिखित बाँस त्रिपुरा (आसाम) के आसपास में होते हैं, जिनका विवरण नीचे दिया जाता है—

४ **मूली बाँस**—इसकी लम्बाई लगभग ८० से ८६ फुट तक की होती है। यह जड़ से आरम्भ कर $\frac{2}{3}$ (दो-तृतीयांश) पर्यन्त एक समान मोटाई का होता है। इसकी गाँठ ऊँचाई लिये होती है। यह सीधा और पतला होता है। प्रायः इसका उपयोग प्रत्येक कार्य में होता है। इसका ऊपरी भाग ८ फुट से १२ फुट तक बराबर मोटाई में होता है। घर की छत में देने के लिए इसका व्यवहार अधिक होता है। कृषक इसे विशेष तौर पर पसन्द करते हैं, क्योंकि उनके दैनिक व्यवहार के कामों में खूब आता है। छत में लगाने पर औसतन इसकी आयु दो वर्ष की होती है। सात से नौ महीने के बाँस का ही व्यवहार प्रायः छत में देने के लिए किया जाता है।

उपयोगी साबित हुआ है। किन्तु, आजकल कागज बनाने के काम मे यह अधिक व्यवहृत हो रहा है, अतः इसके नष्ट हो जाने का भय है।

पंजाब प्रदेश के बाँसों का विवरण

कुछ बाँस के नामो के साथ उनकी उपयोगिता का उल्लेख पहले किया जा चुका है। लेकिन, ऐसे बहुत-से बाँस हैं, जिनका उपयोग, उनके गुणो के आधार पर, अभी तक नही हुआ है और न उनका नामकरण ही हुआ है। प्रायः यह देखा गया है कि जिन बाँसों के नामकरण हो गये हैं और जिनका व्यवहार हो रहा है, वे ही बाँस प्राय भारत में सर्वत्र व्यवहृत होते हैं। व्यवहार करने का ढग भी एक ही जैसा है और वस्तुएँ भी प्राय. एक ही जैसी बनती हैं।

पजाब प्रदेश में लगभग १०० प्रकार के बाँस उपलब्ध हैं, पर वहाँ भी प्रायः आठ-दस प्रकार के ही बाँस व्यवहार मे लाये जाते हैं। इनमे मे कुछ बाँसों के विवरण अँगरेजी नामो के साथ नीचे दिये जा रहे हैं—

१ Dendıocalamus stııctus—यह बाँस प्रायः प्रत्येक कार्य में व्यवहृत होता है। इसकी जाति मादा है और व्यापार-कार्य में अधिकतर इसका उपयोग होता है। किन्तु, मजबूतीवाले कामो में इसका व्यवहार विशेष रूप से होता है।

इसका बाहरी और भीतरी दोनों भाग अत्यन्त चिकना और चमकदार होता है। किसी-किसी भूमि का यह बाँस बहुत लम्बा होता है। यह अत्यन्त गठीला और इसमें डालियाँ अधिक होती हैं। यह अकेले १४-१५ प्रकार का होता है।

२ Bambusa Arundınacea—यह एक प्रकार का जगली बाँस है और भारत के प्राय सभी स्थानों में पाया जाता है। कही इसकी जड़ रोपी भी जाती है। किमी-किसी जगह इसे 'रोपा' बाँस कहते हैं। इसकी लम्बाई भूमिविशेष के कारण ५० से १२० फुट तक की होती है और मुटाई ५ इन्च से ७ इन्च। जब यह कोठ मे होता है, तब कोठ के मभी बाँस ऐसे सटे और परस्पर उलझे होते हैं कि वहाँ से एक बाँस बडी कठिनाई से निकाला जा सकता है। बाँस के भीतर छेद छोटा होता है, अत' इसकी गठन ठोस होती है। इमलिए, इमका व्यवहार टट खडा करनेवाले बाँसो, खूँटे और टोकरी बनाने के मामानो मे होता है। इमके पत्ते मद्य प्रसूता भैंम और अन्य पशुओं के खाने के काम मे भी आते हैं।

बंगाल प्रदेश के बाँसो का विवरण

बेड़ा तैयार किया जाता है। इससे मछली पकड़ने के विभिन्न प्रकार के जाल, मोढा, बैलगाड़ी का ढाँचा आदि बनते हैं। इस बाँस की लम्बाई ५० और ६० फुट तक की होती है और मुटाई १½ फुट की होती है। इसके अगले भाग की गाँठों की दूरी डेढ़-डेढ़ फुट तक की होती है। इसे काँटा बाँस इसलिए कहते हैं कि इसकी डालो मे काँटे होते हैं।

२ **सुन्दर कणिया बाँस**—यह बाँस बहुत बडा और लम्बा होता है और इसकी गाँठ काफी दूर-दूर पर रहती हैं। यह बहुत नरम प्रकृति का बाँस है और बहुत फोफडा होता है, अर्थात् इसमे बडा छिद्र होता है। इससे चटाई, नाव आदि के बेडे बनते हैं, जिसे तलेई कहते हैं। इससे डगरा, टोकरी, डाला इत्यादि भी बनाये जाते हैं।

३ **सालिम्ब बाँस**—इससे बारीक और कलापूर्ण वस्तुएँ बनाई जाती हैं। पेटी, तलारी, छाता, छाते की बेंट आदि इससे विशेष रूप से बनते हैं। इसके भीतर छिद्र छोटा होता है। इसकी मुटाई कम होती है और फाड़ने पर इसमे चिकनापन दिखाई पडता है। यह बाँस जितना सीधा होता है, उतने सीधे दूसरी जाति के बाँस नही होते हैं। अन्य बाँसो की अपेक्षा इसकी गाँठे भी नजदीक-नजदीक होती हैं।

४ **बलागी बाँस**—यह मसृण और सुन्दर होता है। इसकी मुटाई कम और गाँठे दूर-दूर पर होती हैं। अन्य बाँसो की अपेक्षा यह अधिक पतला होता है। बहुधा इससे बाँसुरी आदि वाद्य-यन्त्र बनते हैं। चूल्हा फूँकनेवाली फोफी भी इससे बनती है। इस बाँस से पक्षी पकडने का कम्पा (काँडिआकाठी) भी बनाते हैं। अन्य बाँसो की अपेक्षा इसमें लचक भी अधिक होती है और इसकी गाँठें डेढ-डेढ फुट की दूरी पर होती हैं। मुटाई चार से पाँच इंच की होती है।

यहाँ एक बात कहनी आवश्यक है कि उपर्युक्त बाँसो से मिलते-जुलते अनेक प्रकार के बाँस भारत मे उपलब्ध हैं, जिनका विस्तृत विवरण प्राप्त नही है। उन अनेक प्रकार के बाँसो का अभी नामकरण भी नही हो पाया है। उपर्युक्त विवरणो मे कुछ बाँस एक होते हुए भी नाम-भेद से वर्णित हैं।

बाँस की प्रकृति

शुष्क और आर्द्र जलवायु के अनुसार बाँस मोटा और पतला होता है। बाँस की लम्बाई, चौडाई, मुटाई (व्यास) आदि के अनुसार कारीगर अलग-अलग कार्य के लिए बाँस का चुनाव कर लेते हैं।

उत्तम कोटि के बाँस

(क) जिस बाँस की गाँठें अधिक दूरी लिये और बेत की तरह समतल होती हैं, अर्थात् ऊँची नही होतीं, वह बाँस अत्यन्त उपयोगी होता है। ऐसा बाँस इसलिए उत्तम कोटि का होता है कि फाडने में और कमचियाँ बनाने में आसान होता है।

(ख) जो बाँस सीधे हैं, वे भी उत्तम कोटि के हैं, क्योकि ये आसानी से बराबर फट जाते हैं।

(ग) गाँठो पर से निकलनेवाली डालियाँ ऊपर जाकर बहुत दूर पर निकले, तो वह बाँस उत्तम होता है।

(घ) जिस बाँस का शीर्ष भाग सीधा हो और टूटा न हो, वह भी उत्तम कोटि का बाँस है।

(च) जिस बाँस में किसी तरह का खरोंच या अन्य प्रकार के किसी तरह के दाग नही हों, वह भी उत्तम कोटि का बाँस है।

(छ) आर्द्र और अधिक उर्वर भू-भाग के बाँस अच्छे नही होते। समशीतोष्ण भूभाग के बाँस ही उत्तम कोटि के होते हैं।

(ज) उत्तम कोटि के बाँस के लिए अत्यन्त खुला मैदान नही होना चाहिए, क्योकि वहाँ आँधी-तूफान उसकी जडो को कमजोर करते हैं।

(झ) अच्छे बाँस जहाँ हों, वहाँ दूसरे पेड न हों, जिससे जमीन का बढिया रस बाँस को ही मिलता रहे। इसके साथ चार साल की आयुवाले बाँस काम की दृष्टि से उत्तम कोटि के होते हैं।

कामों के लिए वैसे ही बाँस चुने जायँ, जो आसानी से मुड सकें और फट सकें। उनके चुनने का सरल तरीका यह है—

हरे बाँस को काटने के बाद उसके शीर्ष भाग को नीचे कर और जड को ऊपर करके रख देना चाहिए, जिससे जड की तरफ का रस शीर्ष-भाग की ओर—उसकी डालियों और पत्तों में—चला आवे। इस तरह करने से जडवाले हिस्से रस-रहित और मुलायम हो जाते हैं। उसमें कीडे नही लगते। जो बाँस पतला और नरम होता है, वह मुडने में अच्छा होता है और जो मोटा और कडा होता है, वह ठीक से नही मुड पाता। इसके साथ जो बाँस सिर पर सूख गया है या मर गया है, उसके मोडने में अत्यन्त कठिनाई होती है।

(ठ) जड मे चारो तरफ से मिट्टी को अच्छी तरह भर देना चाहिए, जिससे बीच मे खाली जगह न रहने पावे।

(ड) गड्ढे के भीतर (Under-ground-stem) को मोडकर सीधा जमीन के अन्दर रखना चाहिए।

(ढ) मूल-बॉस को सीधा करने के लिए (Under-ground-stem) ढालुवा नही करना चाहिए।

(त) लगाने की सख्या ½ एकड के प्रति ६०-१००।

२ **केवल बाँस की जड लगाने की पद्धति**—(क) बाँस के तने (stem) को सतह के बराबर से काटना चाहिए।

(ख) बाकी सारी पद्धति पहले जैसी ही होती है।

३ **केवल Under ground-stem को लगाने की पद्धति**—बडे पैमाने पर बाँस-वन लगाने के समय जब मूल-बाँस का अभाव मालूम होता है, तब इस पद्धति को अपनाया जाता है।

बाँस तैयार करने में अधिक समय लगता है। इसलिए नीचे लिखित विषय पर ध्यान रखना चाहिए—

(क) वर्षा ऋतु के आने के पहले ही दो-तीन साल की खूँटी (Under-ground-stem) चुन लेनी चाहिए।

(ख) यदि उसमें नये अकुर आ गये हो, तो बाँस को सतह के ऊपर दो फुट पर काटना चाहिए।

(ग) जो जमीन उचित गीली और बालू से भरी हो, वहाँ लगाना चाहिए। इसके लिए नीचे लिखित बात ध्यान मे रखनी चाहिए।

(क) दो फुट के फासले पर और ४ इच गहराई वाली नारी में ५-६ इच के फासले रखकर बाँस को लगाना चाहिए।

(ख) जब नया बाँस पैदा हो, तब ४-५ गाँठ (Node) रखकर बाकी अश को काट देना चाहिए।

(ग) बराबर पानी डालना चाहिए।

Under ground-stem खींचने की पद्धति

(३) १० वर्ष से अधिक आयुवाले बाँसों को काटने पर उनकी त्वचा लाल तथा धब्बेदार हो जाती है। साथ ही, उनकी गाँठे काली हो जाती हैं। ऐसा बाँस विशेषकर उपयोगी नहीं होगा।

इस तरह हमने देखा है कि आयु के अनुसार बाँस के कड़ापन में भेद आ जाता है। अतएव, बाँस की उम्र के विषय में जानकारी रखना अत्यन्त आवश्यक और महत्त्वपूर्ण है। कारीगर त्वचा के रंग को देखकर बाँस की आयु को पहचान जाते हैं। फिर भी, तीन वर्ष से अधिक आयुवाले बाँस को इस प्रकार पहचानना कठिन हो जाता है। अतः, बाँस की उम्र पहचानने के लिए काली स्याही से बाँस पर लिख देना सर्वोत्तम तरीका है। इसी तरह बाँस की मुटाई का पता लगाने के लिए बाँस के निकलने के दो या तीन मास बाद उसपर एक प्रकार का चिह्न कर देना चाहिए, जिससे बाँस की बढ़ती मुटाई का पता चलता रहे।

(४) बाँस को काटने का सर्वोत्तम समय उसकी आयु का तीसरा या चौथा वर्ष है। बाँस के काटने के सम्बन्ध में जापान के बाँस-कृषकों की एक कहावत है, जिसका हिन्दी-रूपान्तर इस तरह है—

"तीन बरस तक छोड़ो सबको, चार बरस में काटो।
सात बरस से अधिक न छोड़ो, उसके भीतर ही काटो॥"

बाँस के व्यावहारिक कार्य तथा उसकी 'कोठ' की रक्षा, दोनों को दृष्टि में रखते हुए बाँस के काटने की उम्र पर ध्यान देना पड़ता है।

(५) जब हमें किसी कलात्मक टोकरी, आकाशदीप या ताजिया आदि के ढाँचे बनाने के लिए मजबूत और मुलायम बाँस की जरूरत पड़ती है, अथवा जब हमें कमची को उजला बनाना होता है, तब हमें अपेक्षाकृत कम उम्र (अर्थात् २ से ४ वर्ष तक) के बाँस काटने पड़ते हैं, लेकिन जब मजबूत और टिकाऊ वस्तुओं (धनुष, मेहराब आदि) के बनाने की जरूरत पड़ती है, तब हमें पुराने (४ से ६ वर्ष तक के) बाँस काटने पड़ते हैं। दो वर्ष की छोटी आयुवाला बाँस व्यवहार की दृष्टि से अत्यन्त मुलायम और कमजोर रहता है।

लिया जाय, तो उसमें कीड़े लगने का भय नहीं रहता। जापान में २१ जुलाई के एक महीने बाद तक काटने की प्रणाली है, यानी बरसात शुरू होने के पहले ही काट लेना चाहिए।

(४) आम तौर पर वसन्त ऋतु की अपेक्षा शिशिर में तथा कृष्ण पक्ष में बाँस काटना उत्तम होता है। कृष्ण पक्ष में कटे बाँस में अधिक जल रहता है और आग में रखे जाने पर भी वह नहीं सूखता है। काफी देर तक आग में रखे जाने पर उसका सारा भाप पानी बनकर उड़ जाता है।

बाँस में इस प्रकार निकलनेवाले जल में चीनी के सदृश एक प्रकार की मिठास रहती है, जिससे उसमें कीड़े लगने का भय रहता है, उस रस में 'पेटोजिन' होता है, जिसे कीड़े बहुत पसन्द करते हैं। बाँस के प्रारम्भिक वर्ष में (वसन्त से शिशिर तक), बढ़ने के समय उसमें बहुत पुष्टिकारक रस रहता है, अत उसमें कीड़े लग जाते हैं। गर्मी के दिन बाँस काटने के लिए उत्तम नही होते। भारत में बाँस काटने का सर्वोत्तम समय तो अक्टूबर से दिसम्बर तक रहता है।

इसके विपरीत राय यह है कि शीत-काल में बाँस का पुष्टिकारक रस जड़ में रहता है, इसलिए उन दिनो बाँस में कीड़े नही लगते। बाँस के जहाँ बागीचे हो, उसमें से गर्मी में बाँस काटना अच्छा होता है, क्योंकि गर्मी में गन्दगी (स्टफ) तुरत ही नष्ट होकर खाद बन जाती है। लेकिन लोगो का कहना है कि जाड़े में गन्दगी बनी ही रहती है और वह पोषक तत्त्व को बरबाद करती है।

(५) बाँस के बागीचे के मालिको का और बाँस से काम लेनेवाले कारीगरो का हित एक-सा नही रहता है। बाँस का व्यवहार करनेवालो को बाजार में मिलनेवाले बाँस के सामानो पर ध्यान देना चाहिए कि बाँस उपयुक्त समय में कटा है कि नही।

(६) ऊपर की बातो से यह निष्कर्ष निकलता है कि कीड़ा लगना और बाँस के विभिन्न भेद—इन दो बातो के साथ बाँस काटने के समय की समस्या सम्बद्ध है।

(७) ऐसे बाँसो को काटने के लिए कोई निश्चित समय की चिन्ता नही करनी होती है, जिनके बने सामानो को रँगा जाता है।

(८) सितम्बर से नवम्बर तक का कटा बाँस साधारणत कड़ा होता है और उसमें कीड़े नही लगते, क्योंकि इस बीच कीड़े अण्डे नही देते हैं।

(९) शिशिर ऋतु में नही काटे गये बाँस, मार्च और अप्रैल में अवश्य ही काट लिये जायँ, फिर भी ये बाँस शिशिर में कटे बाँसो के समान अच्छे नही होते। किन्तु जो स्थान बर्फीले नही है, वहाँ शीत ऋतु ही बाँस काटने का सर्वोत्तम समय है।

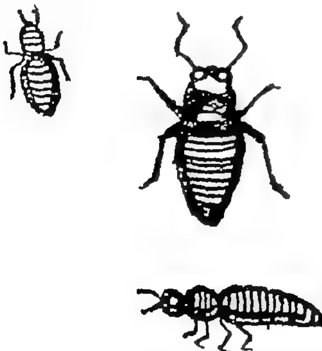
(१०) भदवा (पचक) के दिन भारत में बाँस नही काटने का रिवाज है। जापान में भी इसी प्रकार की प्रथा है। भारत में तो भदवा के ५ दिन होते हैं, लेकिन जापान में भदवा १२ दिनो का होता है, जो वर्ष में ६ बार आता है। यह निश्चित है कि पचक अथवा अन्य वर्जित दिनों में यदि बाँस काटा जाय, तो उसके बने सामानो में कीड़े अवश्य ही लग जायेंगे।

वस्तुओं में न तो कीड़े लगेंगे और न वह खराब ही हो सकेगी। बाँस को रंग उपर लिखित परिमाण में रंग जाने पर भी उसमें बनी वस्तुएँ फटती नहीं हैं। यदि बाँस तथा उसमें बनी वस्तुएँ ऐसे स्थान पर रखी जाय, जहाँ उनकी आर्द्रता बनी रहे, तो वे वस्तुएँ फटेंगी नहीं, ज्यों की-त्यों बहुत समय तक बनी रहेंगी। बाँस ऐसे स्थानों में रखे जायँ, जहाँ उसे पूरी हवा मिले और छाया भी हो।

ऊपर बताया जा चुका है कि बाँस काटने के समय में और कीड़े लगने में बहुत बड़ा सम्बन्ध है। लेकिन, आम तौर से लोग काटने के उपयुक्त समय से अनभिज्ञ होते हैं, इसीलिए बाँस में कीड़े नहीं लगें, इसका कोई उपाय ढूंढना जरूरी होगा। हमलोग अपने घरों में बाँस की बनी जिन वस्तुओं को व्यवहार में लाते हैं, वे अगर ठीक समय पर कटे बाँसों की बनी हों, तो उनमें शायद ही कीड़े लगेंगे। अगर बड़ी संख्या में ये वस्तुएँ एक ही स्थान पर रखी जाती हैं और संयोगवश उनमें से एक भी वस्तु ठीक वक्त पर कटे बाँस से नहीं बनी है, तो उसमें कीड़े लग जाते हैं और वे कीड़े ठीक समय पर कटे बाँस से बनी सभी वस्तुओं में फैल जाते हैं। यह सबसे अधिक खतरनाक स्थिति है। इसलिए जब हम बड़ी संख्या में बाँस के सामान एकत्र कर रखते हैं, तब हमें उनकी सुरक्षा के विषय में भी सोचना चाहिए। बाँस में लगनेवाले कीड़े अनेक प्रकार के होते हैं, जिसमें प्रमुख एक कीड़ा होता है, जिसका चित्र यहाँ दिया गया है।

कीड़ों से बाँस को बचाने के लिए अब कई तरीके ज्ञात हो गये हैं, जिनसे लाभ पहुँच रहा है। लेकिन भिन्न-भिन्न स्थिति में उन तरीकों से लाभ और हानियाँ दोनों देखी गई हैं। इसलिए कीड़ों से बचाने के लिए सरल और अधिक उपयोगी तरीके नीचे दिये जा रहे हैं।

१ पुताई—वस्तुएँ तैयार करने के पहले सर्वप्रथम बाँस से तेल निकाल लेते हैं। उसके बाद बाँस के भीतरी भाग को लेप करके पूर्ण रूप से ढँक देते हैं। इस प्रकार, कीड़े उस पर आक्रमण नहीं कर सकते। इस मामले में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण भाग भीतरी और दोनों छोर होते हैं। कीड़े शायद ही कभी बाँस के बाहरी धरातल से प्रवेश करते हैं, इस कारण उस पर लेप नहीं करते हैं, क्योंकि उसकी स्वाभाविक सुन्दरता नष्ट हो जाती है। इस विधि में भी कभी-कभी कीड़े उस स्थान पर प्रवेश कर जाते हैं, जहाँ से रंग हट जाता है।



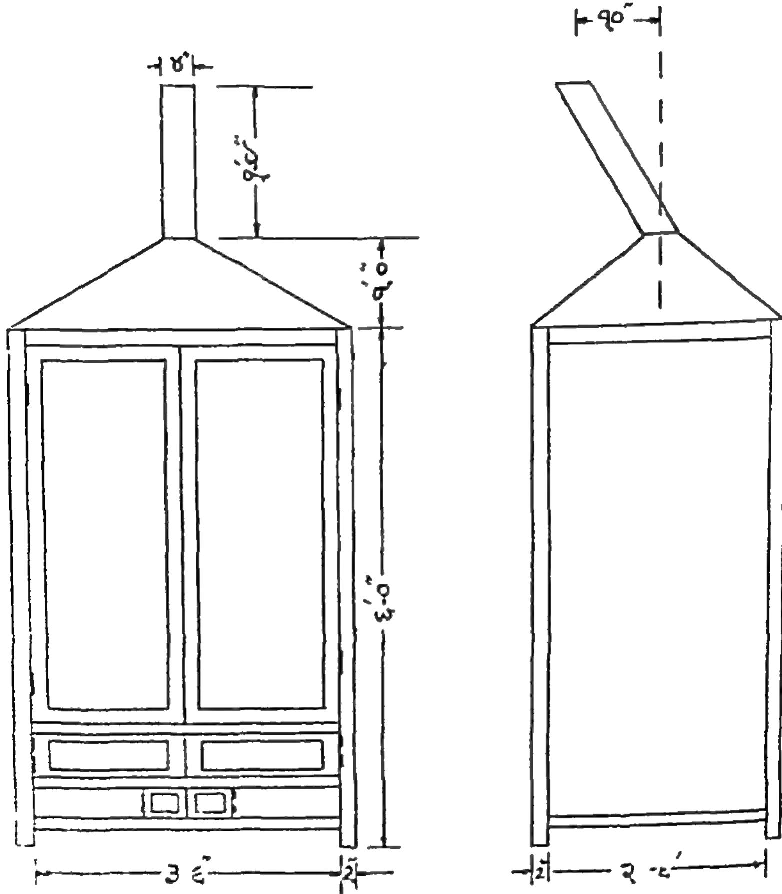
(चित्र १)

२ रासायनिक तरीके—कीड़ों की रोक-थाम के लिए निम्नलिखित द्रव्य लाभकारी होते हैं—

कॉपर सल्फेट (Copper Sulfate), जिंक सल्फेट (Zinc Sulfate), कारबोलिक (फिनैल)

जिम होकर गंधक डालकर फिर उसे बन्द कर देना होता है। इस प्रकार, कमरे को २४ घंटे तक रखना चाहिए। देखिए चित्र ५ और ५(क)। ५(क) मे कोठरी की लम्बाई, चौडाई और ऊँचाई का सही रूप दिखाया गया है।

फँफुदी लग जाने से बाँस कमजोर हो जाता है। अगर फँफुदी लगे किसी बाँस के टुकडे पर दबाव डाला जाय, तो वह तुरत टूट जाता है।



(चित्र ५)



सुखाते हैं, जबतक कि उनमे केवल १५ प्रतिशत ही जल न रह जाय। बाँस मे जलीय परिमाण का पता लगाने का एक यंत्र होता है।

(ग) **अन्य उपाय**—कीडे अधिकतर शिशिर ऋतु मे लगते हैं। इस कारण इस ऋतु में बाँस के बने हुए सामानों को अगर पानी मे डुबोकर रखा जाय, तो इससे उसमे कीडे नही लगेगे।

कीडे से क्षतिग्रस्त सामान को अच्छा बनाने के उद्देश्य से सामान को सदा पानी मे अथवा नमक मिले हुए जल में डुबोकर रखना चाहिए। इससे कीडे लगना बन्द हो जाता है।

इसके लिए दूसरा उपाय भी काम में लाया जा सकता है। अगर वस्तु या बाँस पर शीशे का तरल लेप एक परत लगा दिया जाय, तो भी कीडो का डर जाता रहेगा।

इसी तरह यदि बाँस को गरम पानीवाले झरने के नीचे कुछ क्षण रख दिया जाय, तो उसमें भी कीडे लगने की सम्भावना नही रहेगी।

अथवा सॉल्युशन ऑफ् एन्० ओ० एस्० ओर सल्फ्युरिक सॉल्युशन (Solution of N O S & Sulphuric Solution) इन दोनों को मिलाकर लगा देने से कीडे नही लगेगे। यह भी गरम पानीवाले झरने की तरह ही उपयोगी होता है। जहाँ गरम पानीवाले झरने का इन्तजाम नही है, वहाँ इसे ही प्रयोग में लाना चाहिए।

अथवा

बोरिक एसिड सॉल्युसन में यदि १५ से २० मिनट तक बाँस को गरम किया जाय, तो कीडे नही लग सकेंगे।

इस काम के लिए 'गाभ'[१] फल का रस (Persimon juice) भी व्यवहृत होता है। इसे यदि एक बोतल में बन्द करके दो-तीन वर्षों तक छोड दिया जाय और तब उसको बाँस पर लगा दिया जाय, तो उस बाँस से बनी वस्तुओं में कीडे हरगिज नही लगेगे।

इस तरह डी० डी० टी० ओर पी० सी० पी० रसायन के द्वारा भी कीडे मारे जाते हैं। दोनों को बराबर भाग मे मिलाकर पतला घोल बना लेना चाहिए। बाद,

---

१ 'गाभ' (Persimon) एक प्रकार का वृक्ष होता है और उसके फल का नाम भी 'गाभ' ही है। यह भारत मे भी सर्वत्र पाया जाता है। पकने पर इसका फल कसैला-मीठा होता है। लोग खाते भी हैं। यह दवा के काम में भी आता है। जब यह कच्चा रहता है और [illegible] होता है, तभी इसे संग्रह कर लकड़ी के पटरे पर लकड़ी से ही पीस देते हैं। बाद, [illegible] रख देते हैं। पश्चात्, इसे लकड़ी या मिट्टी के बरतन मे उस स्थान पर रख छोड़ते हैं, [illegible] हो और वायु का प्रवेश भी नहीं हो तथा वह स्थान खूब ठंढा हो। एक सप्ताह बाद निकालकर पुनः इसे छान लेते हैं और पानी मिलाकर १५ या २० मिनट तक गरम करते हैं। बाद, [illegible] छानते हैं। इस विधि से जब जूस तैयार कर लेते हैं, तब इसका [illegible]। [illegible] इसे चित्र बनाने के काम में भी लाते हैं।—ले०

(१) सॉल्ट (Salt), (२) सोडियम-कारबोनेट (Sodium Carbonate), (३) सोडियम बाइकारबोनेट (Sodium Bicarbonate), (४) सोहागा (Borax), (५) जिंक क्लोराइड (Zinc Chloride), (६) सलफ्युरिक केमिकल्स (Sulphuric Chemicals) और (७) सोडियम फ्रोरिक (Sodium froric & its Commercial Products)।

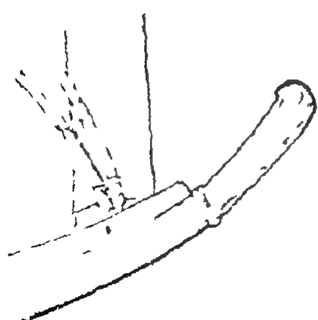
बाँस का रग हरा बनाये रखने के लिए बाँस को बहते हुए पानी में रखकर उसे पुआल की बनी चटाई से ढक देना चाहिए। इससे बाँस का ऊपरी भाग ज्यादा नही सूखने पाता।

तैयार किये गये पदार्थों का फँफुदी से बचाव

समुद्र मे जहाज के द्वारा बाँस की बनी वस्तुओं को ले जाने से उनमें फँफुदी शीघ्र पकड लेती है, क्योकि समुद्र के वायु-मण्डल मे जलीय अश अधिक होता है। इसलिए उससे बचने के लिए (१) फॉरमलिन (Formalin) गैस और (२) केमिकल मरक्युरी बाइक्लोराइड से बने विलयन का फुहारा वस्तु पर दिया जाता है। आरगेनिक केमिकल P C P और K B K का भी शीत-प्रणाली द्वारा उन सामानो पर प्रयोग किया जाता है, जिनमें से जल निचोड लिया गया है। शीत-प्रणाली की विधि पहले बतलाई गई है।

बाँस काटने की विधि

बाँस को टँगारी या टबिला (काँता) से काटना अच्छा है। अगर वह आरी से काटा जाता है, तो उसकी जडतक काटना मुश्किल हो जाता है। इसलिए कारीगर बाँस को आरी से काटना पसन्द नही करते। जब वे आरी से काटते भी हैं, तब वे जड पर भी अनेक बार प्रहार करते हैं और इससे बाँस की जड नष्ट हो जाती है। बाँस भूमि के नीचे के डठल से निकलता है, जड से नहीं। इस कारण जितना जल्द हो, बाँस के जड को नष्ट ही कर देना सर्वोत्तम है। जब झुके स्थान पर के बाँस को काटना हो, तो प्रथम प्रहार नीचे की ओर से किया जाना चाहिए और तब दोनों ओर से तथा अन्तिम प्रहार ऊपर की ओर से।



कटे हुए बाँस को जिधर ले जाना है, उसी दिशा की ओर जड रखना चाहिए क्योंकि इससे ले जाने में बहुत सुविधा होती है।

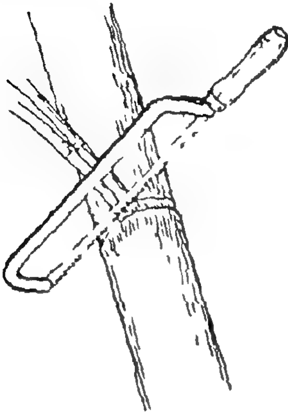
(१) सॉल्ट (Salt), (२) सोडियम-कारवोनेट (Sodium Carbonate), (३) सोडियम वाइकारवोनेट (Sodium Bicarbonate), (४) सोहागा (Borax), (५) जिंक क्लोराइड (Zinc Chloride), (६) सलफ्युरिक केमिकल्स (Sulphuric Chemicals) और (७) सोडियम फ्रोरिक (Sodium froric & its Commercial Products)।

बॉस का रग हरा बनाये रखने के लिए बाँस को वहते हुए पानी में रखकर उसे पुआल की बनी चटाई से ढक देना चाहिए। इससे बॉस का ऊपरी भाग ज्यादा नही सूखने पाता।

तैयार किये गये पदार्थों का फॅफुदी से वचाव

समुद्र मे जहाज के द्वारा वाँस की वनी वस्तुओ को ले जाने से उनमे फॅफुदी शीघ्र पकड लेती है, क्योकि समुद्र के वायु-मण्डल मे जलीय अश अधिक होता है। इसलिए उससे वचने के लिए (१) फॉरमलिन (Formalin) गैस और (२) केमिकल मरक्युरी वाइक्लोराइड से वने विलयन का फुहारा वस्तु पर दिया जाता है। आरसेनिक केमिकल P C P और K B K का भी शीत-प्रणाली द्वारा उन सामानो पर प्रयोग किया जाता है, जिनमे मे जल निचोड लिया गया है। शीत-प्रणाली की विधि पहले वतलाई गई है।

बने मंच पर ओस या वर्षा से बचाकर रखना चाहिए। इस तरह रखने से लगभग एक वर्ष तक तो बाँस का रंग हरा बना रह जाता है।

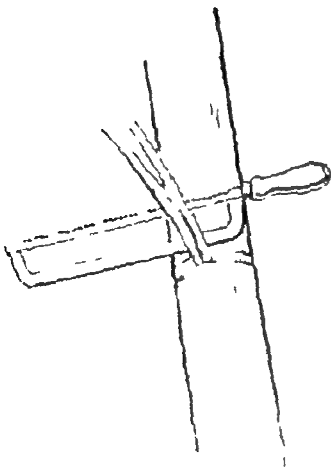

(चित्र ११)

बाँस को सुरक्षित रखने की महत्त्वपूर्ण बात यह है कि उसे धूप, ओस तथा वर्षा से बचाया जाय। अगर बाँस में अधिक आर्द्रता लगे अथवा वह सटा-सटाकर रखा जाय, तो वह नष्ट हो जायगा। मोडने के कार्य के लिए एक वर्ष का बाँस अगर फाड-चीरकर रखा गया हो, तो जब कारीगर उससे काम लेना चाहेगा, वह उसे दो दिनों तक पानी में छोड देगा, और तब आसानी से उसकी कमचियाँ बना लेगा।

बाँस की व्यापारिक विधि

बाँस शायद ही कभी कोई किसी किसान की कोठ से खरीदता है। अधिकांशत बाजार से ही लोग खरीदते हैं। इसका व्यापारिक तरीका नीचे दिया जाता है—

बाँस के व्यास और उसकी लम्बाई को ध्यान मे रखकर ही खरीद करना चाहिए। बाँस के व्यास या उसके मूल्य से सीधा सम्बन्ध होता है। व्यास का अर्थ होता है ५ फुट ऊँचाई पर बाँस की गोलाई। इस गोलाई की माप ही बाँस का प्रामाणिक व्यास माना जाता है। पाँच फुट ऊँचाई से नीचेवाले हिस्से का व्यास यदि पाँच इंच कम हुआ, तो उसे नहीं खरीदना चाहिए। इस तरह भारत में बाँस की जाति और मटाई पर ही इसका मूल्य निर्धारण किया जाता है।


(　　)

काटना, चीरना तथा अन्य कार्य

तैयारियों में मुख्यत काटने और चीरने के कार्य तथा उनसे सम्बद्ध अन्य कार्य भी आते हैं। तैयारी के कार्यों में निम्नलिखित कार्य करने पड़ते हैं—

(१) बाँस की सतह से मैल तथा गर्द को हटा देना।

(२) उपयुक्त लम्बाई पर से आवश्यकतानुकूल कटान करना।

(३) गाँठ काटना।

(४) कभी-कभी बाँस की त्वचा को छीलना पड़ता है, जिससे रंग करने मे आसानी हो और सहज में ही उससे तेल निचोड़ा जा सके।

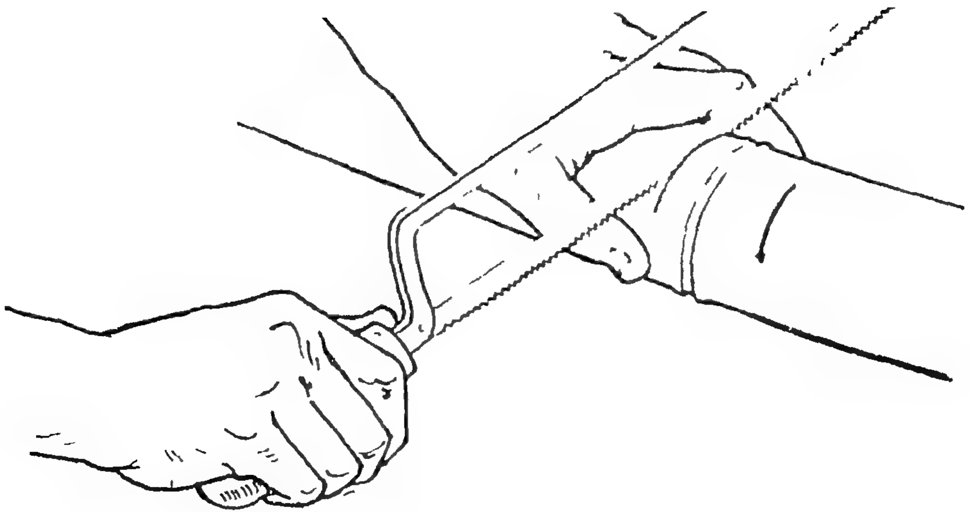
(५) आवश्यकतानुसार समान भाग की चौड़ाई मे बाँस को चीरना और चीरी हुई वस्तुओं को इकट्ठा करना।

(६) आवश्यकतानुसार समान मुटाई मे फाड़ना।

(७) आवश्यकतानुसार समान भाग की चौड़ाई में काटना।

(८) किनारा मारना।

इस तरह की पद्धति को अपनाने से यह निष्कर्ष निकलता है कि मुख्य काम जैसे—काटना, गिरह काटना, फाड़ना, कमची बनाना तथा कलात्मक वस्तुओं के निर्माण के लिए ऐसे अन्य कार्य करना, जिनसे रँगना तथा पॉलिश करना आसान हो।



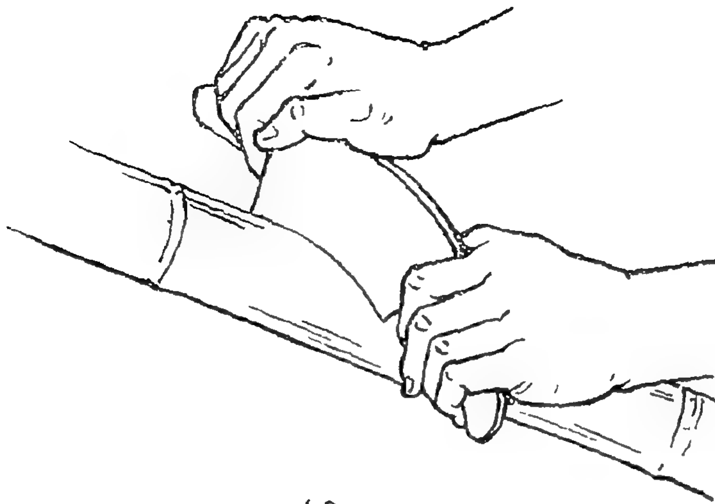
(चित्र २३)

काटे और उसकी कुन्नी बाँस में ही खिंचकर आवे। अगर बाँस को घुमाकर दूसरी ओर से काटेंगे, तो कटान की सतह चिकनी न होगी और तब उसे फाड़ना या काटना कठिन हो जाता है।

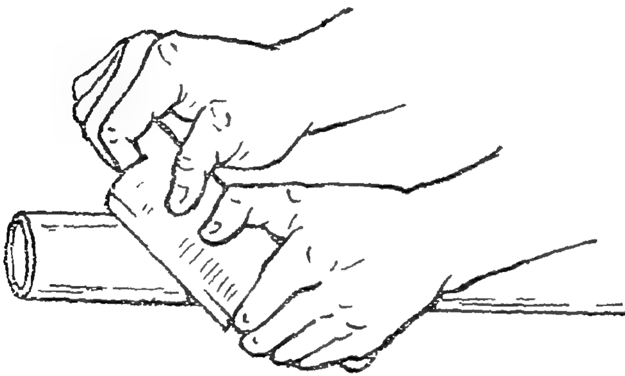
(चित्र १५)

(२) रदा द्वारा—(क) छोटे रदे से गिरह काटते समय बाँस को घु जाइए, तो गिरह जल्द ही हट जायगी। चित्र १५ में देखिए। अथवा बड़े रदे से बाँस को (चित्र १६ मे प्रदर्शित ढग से) घुमाते हुए गिरह हटाइए।

(ख) गिरह हटाते समय गहरी चोट नही देनी चाहिए क्योकि उससे बाँस के कट जाते हैं जिससे पतली कमचियाँ बनाना कठिन हो जाता है।



(चित्र १८)



(चित्र १९)

दबाव भी नहीं पड़े। (चित्र १९ देखिए)। ऐसा नहीं करने से गाँठ पर औजार उछलता है तथा गाँठ का दूसरा हिस्सा कट जाता है।

त्वचा हटाते समय बाँस के टुकड़े को, एक सिरे से दूसरे सिरे तक, छीलना चाहिए। पूरे का पूरा हिस्सा एक साथ नहीं छीलने से सुन्दर और बराबर सामान बनाना कठिन हो जायगा।

कारीगर के अनुभव के अनुसार त्वचा हटाने के सम्बन्ध मे निम्नलिखित बातें महत्त्वपूर्ण हैं—

(१) औजार खूब तेज रहे। किनारे को काटते समय खुरच का चिह्न रह जाता है, इसलिए औजार को अपने सम्मुख सीधा रखकर व्यवहार करना चाहिए।

(२) चित्र १७ मे दिखाये गये औजार का व्यवहार करते समय, औजार को, काटनेवाले किनारे से विपरीत दिशा की ओर झुका रहना चाहिए (साधारण औजार से इससे भिन्न बात है) और तब जड़ के सिरे से बाँस मे खुरच बनाना चाहिए और गिरहवाले हिस्से मे खुरच बनाते समय बाँस को घुमाते रहना चाहिए।

बाँस को निखारने की विधि

बाँस को निखारने की प्रमुख दो विधियाँ हैं—

(१) रस और मिश्रित पदार्थ (घोल या सॉल्युशन बनाकर) और

(२) गरम तरीके से।

इसमें बाँस को डालकर ऐसे घर में एक दिन रखिए, जहाँ २० सेंटिग्रेड तापमान हो। फिर, ठंडे पानी में धोकर और कपड़े से पोंछकर सूर्य-रश्मि में दो दिन रखिए।

द्वितीय विधि वाष्प-क्रिया—इसके द्वारा २४ घण्टे तक गैस का प्रयोग करके साफ करते हैं।

(क) सोडियम क्लोराइड (नमक-$NaCl_2$) ५ प्रतिशत ३०० ग्राम जल में डालकर उसमें Acetic Acid २ बूँद डाल देना चाहिए। सॉल्युशन में सामान को रखकर आधे से १ घण्टे तक, ८० सेंटिग्रेड तापमान में रखना चाहिए। उसके बाद सामान को निकालकर २ घण्टे तक धूप में सूखने के लिए रखना चाहिए।

(ख) सोडियम क्लोराइड ३ ग्राम और जल १०० ग्राम को मिलाकर उसमें सामान को डाल देना चाहिए। फिर, उसे १००° से० तापमान में ३० से ४० मिनट तक रखना चाहिए। उसके बाद सामान को बाहर निकालकर उसे ठंडे जल से धोकर कपड़े से पोंछ देना चाहिए। पोंछे हुए सामान को दो दिनों तक धूप में सूखने को दे सकते हैं अथवा बिजली के बक्से में ६० सेंटिग्रेड तापमान में आधे घण्टे तक रख सकते हैं।

बाँस की त्वचा (Skin) को निखारना[1]

सर्वप्रथम त्वचा-युक्त बाँस को एक घण्टे तक ठंडे पानी में डुबोकर रखते हैं। हाइड्रोजन पैरॉक्साइड (H_2O_2) ३५ प्रतिशत, सोडियम सिलिकेट ५ प्रतिशत, जल १०० प्रतिशत तीनों को मिलाकर बाँस को उसमें रख देना चाहिए और दो दिनों तक उसी स्थिति में छोड़ देना चाहिए। बाद में बाँस को बाहर निकालकर दो से तीन दिनों तक धूप में सुखाना जरूरी है। उपर्युक्त सॉल्युशन में बाँस को रखने से ही उससे बुलबुले निकलने लगते हैं। त्वचा-युक्त बाँस को सॉल्युशन में खड़ा करके रखना चाहिए। त्वचा निखारने की सर्वोत्तम विधि यही है। निखार किया हुआ बाँस प्राकृतिक बाँस से कमजोर जरूर होता है, लेकिन उसमें कोई विशेष अन्तर नहीं आता है।

बहते हुए जल में त्वचा-सहित बाँस को धोना भी अच्छा होता है।

बाँस से तेल निकालना

सामान तैयार करने के लिए कटे बाँस को काटने के तुरत बाद उसमें से तेल निकालने के बजाय उसे करीब एक सप्ताह सुखा लेने पर तेल निकालना अच्छा है।

बाँस को सुखाने की विधि यह है कि उसे एक हवादार स्थान में रखते हैं, जहाँ सूर्य की सीधी किरणें नहीं लगतीं। उसके बाद उसमें से तेल निकाला जाता है।

इस कार्य की भी दो विधियाँ हैं—सूखा तरीका और भीगा तरीका।

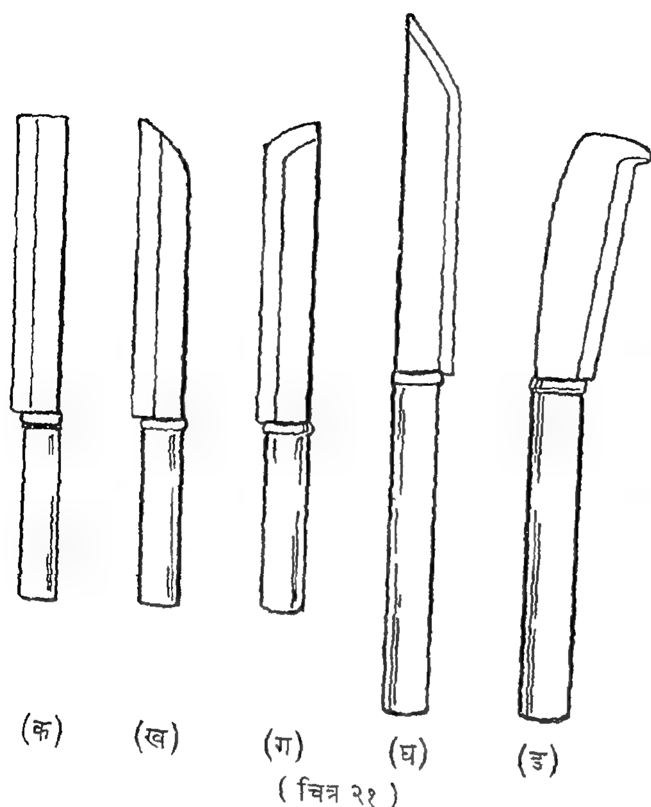
(२) **भीगा तरीका (वेट स्टाइल)**—इस विधि में बाँस के सामान को पानी के साथ उबालते हैं। इसके भी दो तरीके हैं। एक तो केवल पानी में और दूसरा रासायनिक पदार्थ मिले पानी में उबालने का तरीका है। पहले की अपेक्षा दूसरा सतोषप्रद तरीका है। उसमें बाँस की त्वचा थोडी लाल हो जाती है और अधिक जल लेने के कारण सूखने में अधिक समय लगता है।

इस कार्य के लिए रासायनिक पदार्थ कास्टिक सोडा होता है, जिसे पानी में मिलाकर उबालते हैं। उसमें बाँस के सामान को रख देते हैं और ३० मिनट तक उन्हें उबालते हैं। सामान बनानेवाले बाँस में जब पीलापन आ जाय, तब उसे निकालकर पोंछ देना चाहिए और धूप में सुखा देना चाहिए। एक हफ्ते के बाद बाँस पीलापन पर आकर उजला हो जाता है। बाँस की चमक का मौसम से सम्बन्ध रहता है। अत्यधिक रासायनिक पदार्थ के साथ अथवा अधिक देर तक उबालने से बाँस की त्वचा का पीला रंग बदल जाता है, लेकिन रासायनिक पदार्थ नहीं देने और नहीं उबालने से भी रंग अच्छा नहीं आ सकता। यह विधि भी चाभ बाँस के लिए है। उबालने के लिए लोहे अथवा जस्ते के चदरे का बना बरतन व्यवहार में लाना चाहिए। बाँस के सामान की लम्बाई-चौडाई के अनुकूल बरतन बना लेना चाहिए। इस कार्य के लिए आयताकार बरतन बहुत ही सुविधाजनक होता है। देखिए चित्र २०।

तेल निकालने की अन्य विधियाँ

(१) बाँस से तेल निकालने की क्रिया के लिए एक विशेष प्रकार के टिन का टब (Tub) होता है। उसकी चौडाई २८ इंच, लम्बाई १४ फुट, ऊँचाई १७ इंच और भीतर पानी की सतह १३ इंच होती है। यह टब चारों ओर से लकडी के बने फ्रेम से घिरा होता है।

सर्वप्रथम बरतन का पानी भाप से अथवा कोयले या जलावन से गरम किया जाता है। जब तापमान १००° सें० हो जाता है, तब कास्टिक सोडा ० ७ प्रतिशत या ० १ प्रतिशत ग्राम और पानी १०० ग्राम उसमें डाल देते हैं। उसके बाद सामान बनानेवाले हरे बाँस को उस टब में डाल दिया जाता है। बाँस के ऊपर दबाव डाल देते हैं, ताकि वह पानी के भीतर ही डूबा रहे। उस स्थिति में बाँस को करीब आधे घण्टे तक रहने देते हैं। उसके बाद उसे निकालकर सूखे कपडे में रगडकर पोंछ देते हैं, ताकि उसमें रसायन का अंश लगा नहीं रह जाय। निकालने की क्रिया लोहे की अँकुसी से करनी चाहिए, क्योंकि हाथ से निकालने में हाथ के क्षतिग्रस्त होने का भय रहता है। उसके बाद बाँस को खडा कर ऐसे स्थान पर, जहाँ सीधी धूप नहीं लगे, रख देना चाहिए। सीधी धूप लगने से बाँस के फट जाने का भय रहता है। इस स्थिति में बाँस को तीन सप्ताह तक रखते हैं। तेल निकालने की यह पहली [illegible] विधि है।



(चित्र २१)

कई प्रकार के दाव काम में आते हैं। बैरेल बनानेवाले कारीगर एक ही धारवाला दाव व्यवहार करते हैं, लेकिन दो धारवाले दाव का व्यवहार अधिक उत्तम है। चित्र २१ में विभिन्न प्रकार के दाव दिखाये गये हैं।

(क) सबसे अधिक व्यवहार में आता है।

धार की लम्बाई	७ २ इंच
चौडाई	१ ३२ इंच
मुटाई	१/८ इंच
वजन	८ १० ऑस

(ख) करीब १ फुट लम्बा बना दाव अधिक सुविधाजनक होगा। इसकी मूठ की लम्बाई ४ ८ इंच होनी चाहिए। बैरेल बनानेवालो के लिए दाब और भी बडे आकार का होता है।

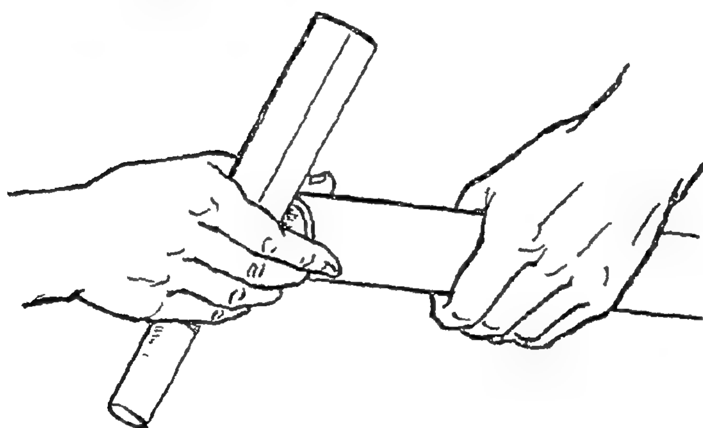
लम्बाई	६ इंच
चौडाई	१ १/४ ,, ३ सूत
मुटाई	२ ५ ,,
वजन	१ पौ० से १ १ पौं०।

(ग) यह दाव 'ख' के समान ही होता है। इसमे विशेष अन्तर नही है। कुछ कारीगर चॉद के आकारवाले तेज हथियार का व्यवहार करते हैं, लेकिन ये उतने अच्छे नही होते।

(घ) मुख्यत चाभ बॉस से भात छानने के लिए टोकरी या छितनी, चावल रखने की टोकरी और हल्के-छोटे पिंजडे बनाये जाते हैं। बॉस को फाडने के लिए 'क' के समान दोधारी दाव बहुत ही उपयुक्त होते हैं, किन्तु चाभ के सामान अन्य जाति के मुलायम बॉस के लिए एक ही धारवाला औजार ठीक होता है।

समान, उसमें दाब को अपनी तलहत्थी से दबाये रहना चाहिए, साथ ही अँगूठे और तर्जनी—दोनों अँगुलियों से बाँस के किनारे को पकड़े रहना चाहिए। यह विधि चित्र २४ में दिखाई गई है।

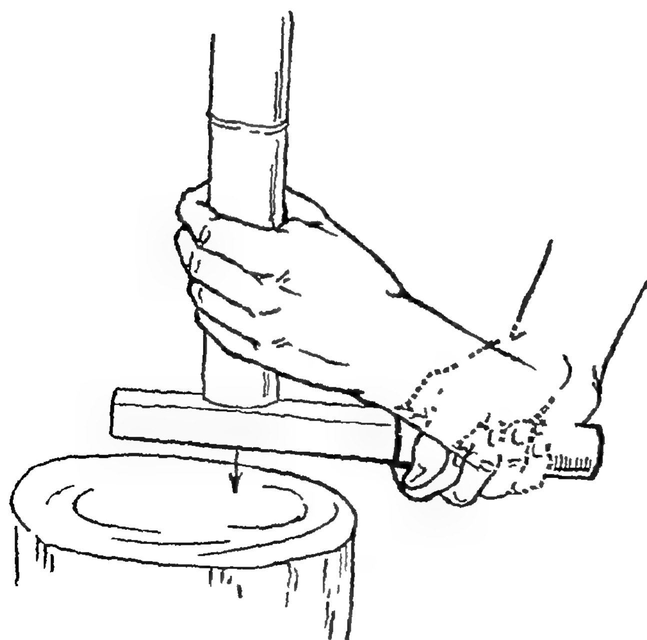
जब फाड़ा हुआ बाँस हो, तब बाँये हाथ से दबाकर चोट देनी चाहिए, किन्तु जब बाँस लम्बा हो तब उसे बाँये हाथ से पकड़-भर लेना चाहिए, क्योंकि तब हाथ से दबाकर चलाना कठिन हो जाता है। इस विधि से कारीगर का हाथ कभी नहीं कटता, क्योंकि दाब को तो उसकी अँगुली पकड़े रहती है, इसलिए वह बाँस से फिसल नहीं सकता। ऐसी अवस्था में फटा हुआ बाँस तलहत्थी से सटा रहता है तथा दाब भी झुक जाता है, अतः उसका बायाँ हाथ नहीं कट सकता है।



(चित्र २४)

बाँस को फाड़ने और छीलने के लिए यही विधि व्यवहार में लानी चाहिए।

(क) पाँच फुट से अधिक लम्बे बाँस को फाड़ने की विधि—बाँस को बाँये हाथ से पकड़ लेते हैं। उसके बाद दाब की धार बाँस के अन्तिम छोर से सटा दी जाती है और बाँस को दाब के साथ ही लकड़ी के कुंदे पर पटक दिया जाता है। इस



(चित्र २)

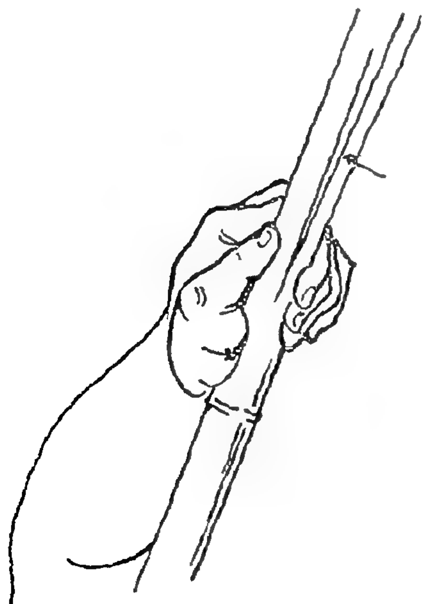
(ख) **गाँठवाले भागों को फाडने की विधि**—कारीगर को गाँठवाले भागों को भी फाडना पडता है। जब सामान बडा होता है, गाँठ का फाडना बहुत कठिन हो जाता है। जब गाँठवाले भाग को फाडना हो, तब वहाँ दाव को रोक दीजिए, थोडा-सा पीछे हटाकर दाव पर थोडी हल्की चोट देकर बाँस को फाड डालिए। इस प्रकार, ठीक से बाँस फट जायगा। चित्र २६ की ओर ध्यान दीजिए। लेकिन बहुत जोर से चोट मत दीजिए, नही तो बाँया हाथ कट जा सकता है। प्रहार करने का अन्दाज अनुभव के आधार पर ही लगाया जा सकता है।

ऊपर वर्णित विधि से फाडे गये बाँस के भागो की चौडाई एक है या नही, इसका पता गिरहो पर लगाया जाता है और इसलिए कारीगरो को गिरह फाड़ने की क्रिया सीखना जरूरी होता है। जो कारीगर गिरह फाडने की प्रक्रिया जानता है, उसके लिए बाँस फाडना आसान है।

बाँस का यथार्थ विभाजन

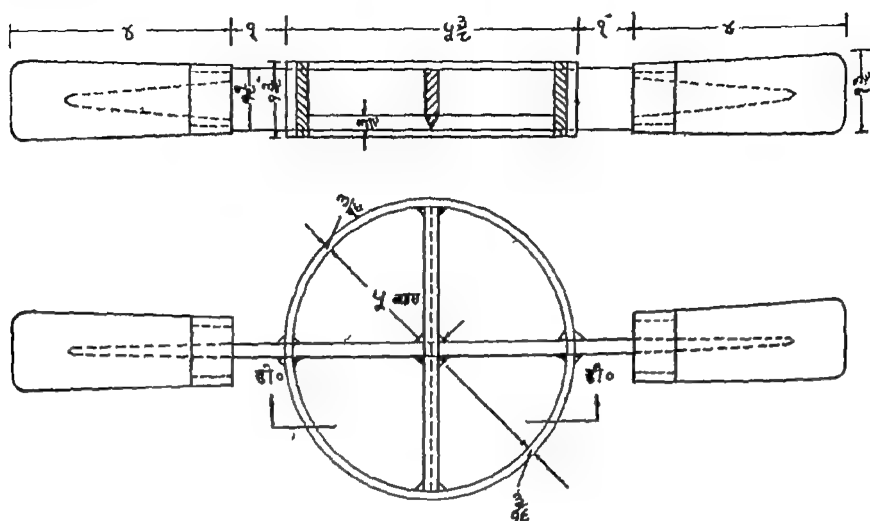
छोटे बाँस को फाड़ना—खास आकार तक फाडने के लिए दाब की धार से बाँस के किनारे का स्पर्श कीजिए, दाब की पीठ पर अपने हाथ से मारिए और इस प्रकार बाँस को दो भागो में विभक्त कीजिए। फिर, इस विधि को उस समय तक दुहराते रहिए, जबतक फटा बाँस आपके उपयोगवाले आकार का न हो जाय।

विना गिरहवाले बाँस को फाडने के लिए खास चौडाई के बाँस के छोर पर हल्का प्रहार करते हैं और तब हाथ से फाड देते हैं। इससे फाटने का काम जल्द हो जाता है।


(चित्र २७)

बडे बाँस को फाड़ना—बाँस को दो भागो मे प्रथम बार विभक्त करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि गाँठ पर का वह भाग, जहाँ से डाली निकलती है, विभाजन मे नही पडे। देखिए चित्र २७। दो भागों मे विभक्त करके दूसरी बार के विभक्तीकरण मे डाली-निकले भाग पर ही फाटना चाहिए। इस प्रकार, चार भागों मे विभक्त करने के बाद फिर सभी भागों को तबतक विभक्त करना है, जबतक कि वे अभीष्ट आकार के नहीं हो जाते हैं।

में विभक्त करने का ढग चित्र २९ मे देखिए। चित्र २९ (क) में इसी की ठीक-ठीक माप—लम्बाई-चौडाई इत्यादि दिये गये हैं। साथ ही, हाथ से पकडनेवाला हिस्सा भी दिखाया गया है।

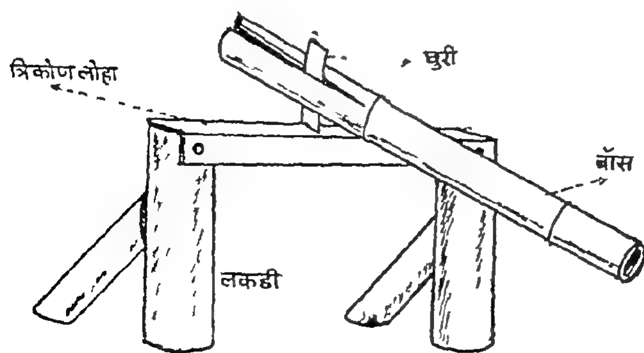


(चित्र २९(क))

लम्बे बाँस को विभक्त करने की दूसरी विधि—कभी-कभी बाँस नीचे लिखे ढग से भी फाड़े जाते हैं। यह ढग चित्र ३० मे प्रदर्शित है, जिसका विवरण इस प्रकार है—

लोहे की छड लकडी की मुँगरी से ठोककर जमीन में गाड दी जाती है और बाँस के फटे हुए मुँह को छड मे लगा देते हैं तथा बाँस को खीचते हैं। छड में बाँस के जडवाले भाग को घुसाकर खीचना चाहिए। इससे बाँस आसानी से फट जाता है। इस विधि में इस बात की सतर्कता वरतनी चाहिए, जिससे कि बाँस अपने ही वजन से न झुके। अगर वरावर नही फट रहा हो, तो बाँस के मोटे भागवाले अर्द्धांश को थोडा झुकाकर खींचना चाहिए।

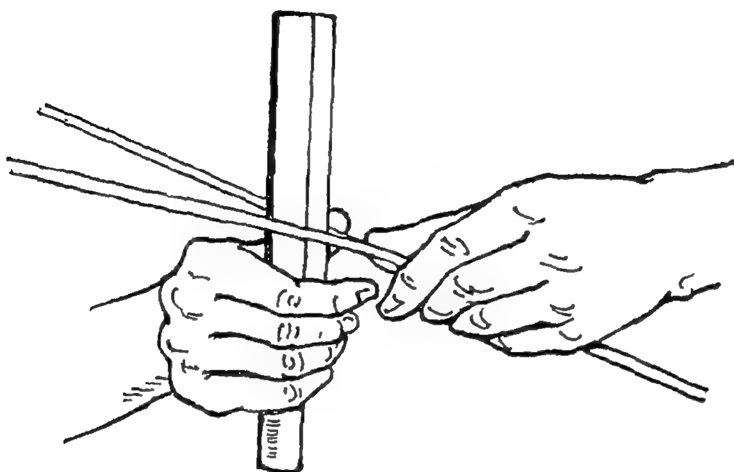
विभक्त भाग को और भी विभक्त करने के लिए यही तरीका काम मे आता है। इस रीति से एक ही बार चार भागों में उसे फाडा जा सकता है। मुँगरी से ठोकी गई छड़ के सामने एक दूसरी छड़ का भी व्यवहार करना चाहिए।



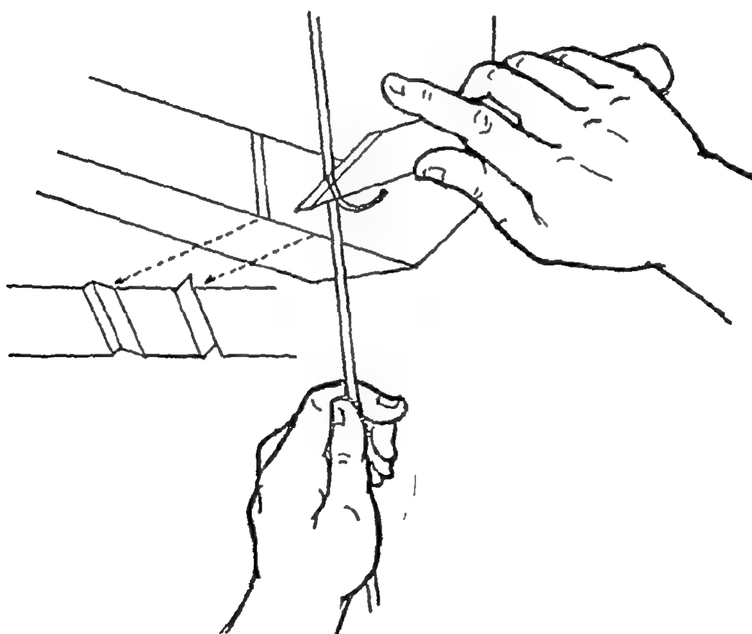
(चित्र ३०)

चाम के समान दूसरे बाँस के लिए पाँच इंच लम्बी काँटी या

अगर बाँस फाड़ने का काम ठीक से नही किया गया हो, तो उसके रेशे टूट जाते हैं और वे पूरी लम्बाई तक टूटते ही जाते हैं, जिससे आखिर मे सामान कम तादाद में ही तैयार होते हैं तथा बहुत-सा भाग बेकार हो जाता है।



(चित्र ३३)

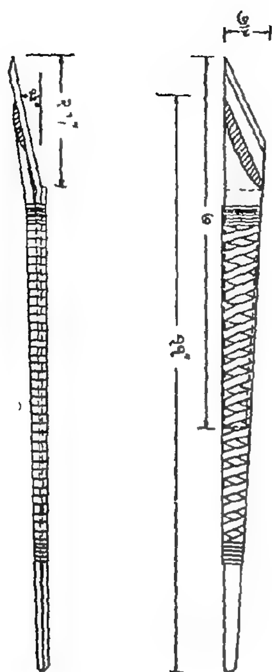


(चित्र ३४)

बाँस के ऊपरी छोर के विभिन्न सामान में जापान में लालटेन बनाते हैं। बाँस के कई बार विभक्त करने या कमची बनाने में छुरी को धीरे-धीरे केवल [illegible] इन्च से [illegible] इन्च तक, घुमाना चाहिए। जैसा चित्र ३३ में दिखाया गया है छुरी चलाते समय

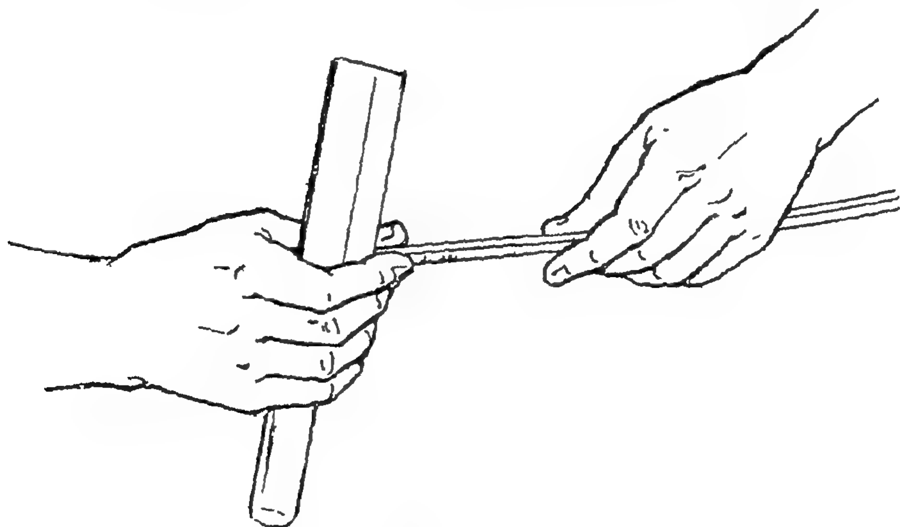
सामान को तुरत भी व्यवहार कर सकते हैं, किन्तु ऐसे सामानों को भाण्डार मे इस तरह रखकर व्यवहार करना उत्तम होता है, जो फाडे जाने के बाद सुखा लिये गये हो। व्यवहार करने के पूर्व ऐसे सामानो को दस मिनटो के लिए पानी मे डाल देते हैं।

ऐसे सामानो से बनाई गई वस्तु बहुत मजबूत होती है। इसलिए एक बार सामानों को जमा कर लेने और फिर वर्ष-भर बीच-बीच मे उन्हें व्यवहार करने मे सुविधा होती है [1]।



(चित्र ३६ (क))

बाँस की पेटी छीलना—फाडे हुए बाँस के त्वचावाले भाग को ऊपर की ओर रखकर चीरते हैं। यह काम बाँस के सिरे की ओर से किया जाता है। कारीगरों मे कहावत प्रचलित है, '**बाँस को सिरे से और** लकडी को जड़ से।' इसके लिए पहली बार



(चित्र ३७)

वही छुरी व्यवहार मे लाई जाती है, जो बॉस के फाडने मे व्यवहृत होती है। अनुभवी कारीगर उस छुरी से छिले वाँस की सतह और अन्य सामान सुन्दर बनाते हैं।

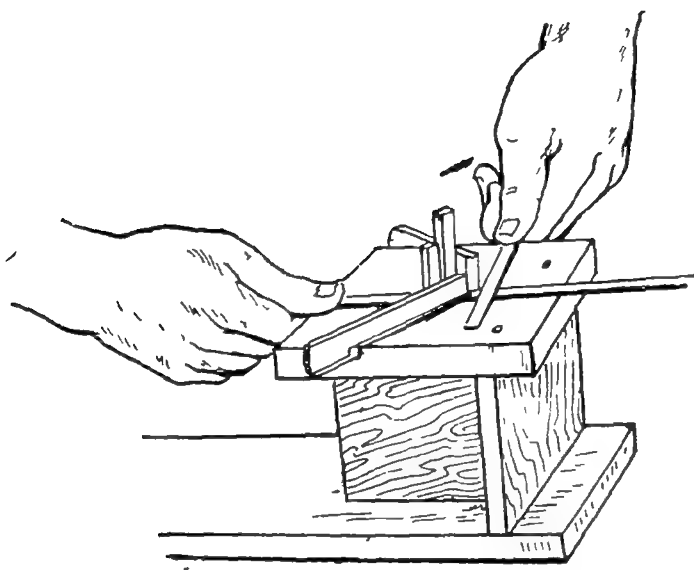
गिरह के पास फाडने मे निम्नलिखित तरीका काम मे लाना चाहिये। गाँठ को बाँये हाथ के अँगूठे और तर्जनी अँगुली से पकडकर, इन अँगुलियो के बीच मे रहनेवाले भाग में ही छुरी लगानी चाहिए। देखिए चित्र ३८। छुरी अँगुलियो और बाँस के बीच मे छिप जाती है। इसके अलावा बाँये हाथ का अँगूठा, जो बाँस को पकडे हुए है, दाहिने हाथ के अँगूठे को रोक देता है, जिससे छुरी अँगुलियो को घायल नहीं कर सकती।

(चित्र ४०)

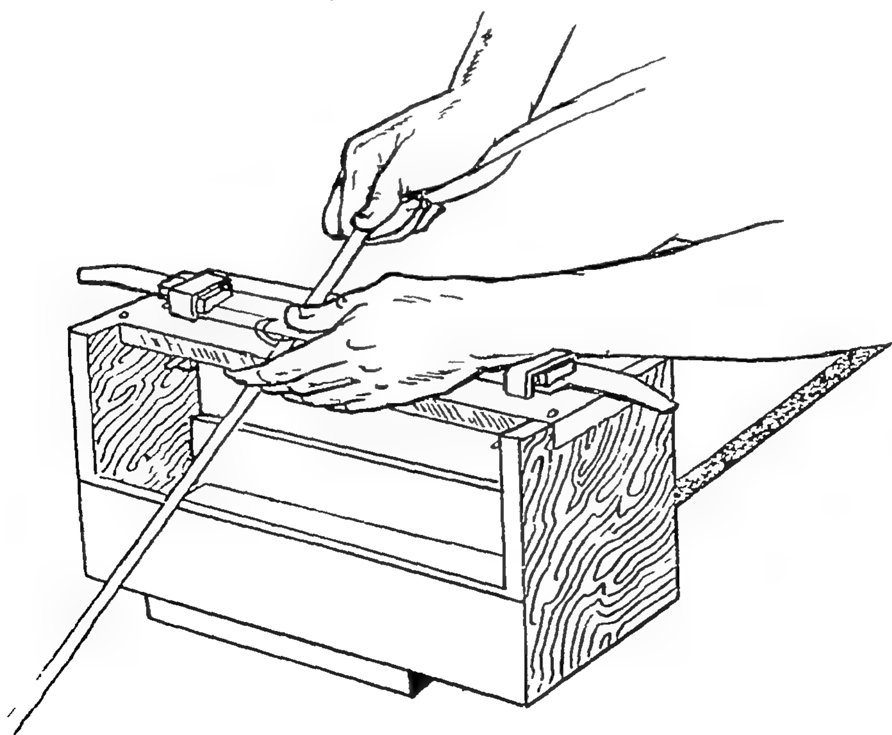
(चित्र ४१)

दूसरी विधि—यह विधि गाँठों-वाले बाँस के लम्बे सामानों के लिए है। दाहिने हाथ की अँगुलियों मे

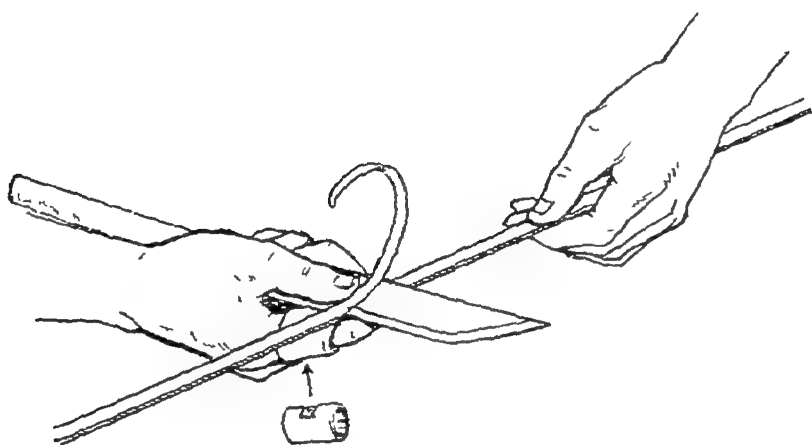
चित्र ५० मे दिखाया गया है। इस काम के लिए जो छुरी व्यवहृत होती है, वह चित्र २१ में 'घ' वर्ण की छुरी है। मुटाई निश्चित करने के भी दो तरीके हैं, जो यंत्र के द्वारा होते हैं। यंत्र भी दो प्रकार के हैं—एक मुटाई निश्चित



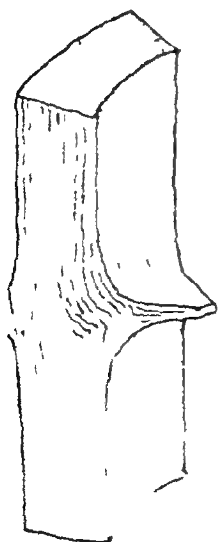
(चित्र ५१)



रूप में बँटे होते हैं। ये रेशे सीधे नहीं, बल्कि टेढ़े होते हैं। बाँस के ऊपरी भाग के रेशे भीतर की ओर और निचले भाग के रेशे त्वचा की ओर गये होते हैं तथा बाँस की जड में अधिक रेशे होते हैं, किन्तु सिरे पर कम। इसलिए बाँस के सिरे की ओर से फाडना ज्यादा आसान होता है। लेकिन चाभ के समान मुलायम बाँस को सिरे की ओर से फाडकर अन्तिम रूप मे जड की ओर से फाडते हैं। यह बाँस की बनावट पर निर्भर करता है। अनुभवी कारीगर दोनों ओर से बाँस को फाडते हैं।

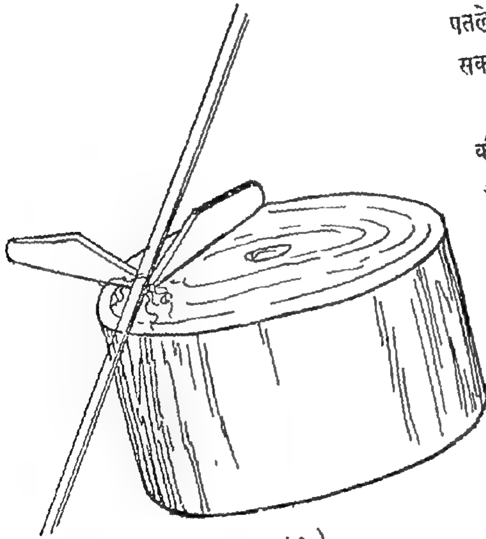


(चित्र ५३)



इसका दूसरा भी कारण है। चित्र ५४ में प्रदर्शित ढंग से गाँठवाले भागों में रेशे की बनावट की जाँच कीजिए। नीचे भाग से निकले रेशा के आगे बढ़ने पर उसमें से कुछ शाखाएँ निकलती हैं, जिनमें से कुछ ऊपर जाने के बजाय नीचे की ओर [illegible] जाती हैं और [illegible] ऊपर की [illegible]। अत, जड की ओर से [illegible]

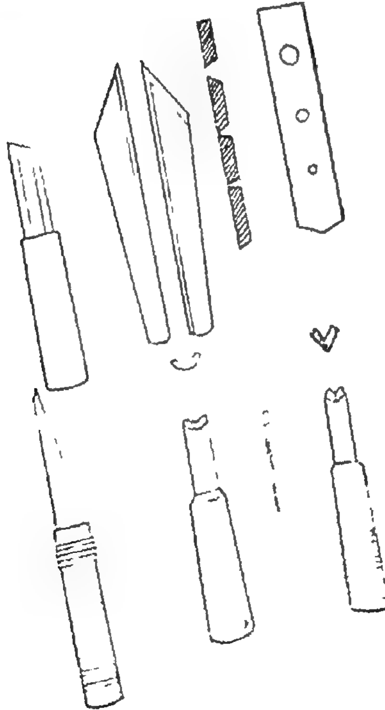
इन विभिन्न प्रकार के छिद्रवाले आकार से आप अपनी इच्छा के अनुसार मोटे पतले सामान तैयार कर सकते हैं।



(चित्र ६१)

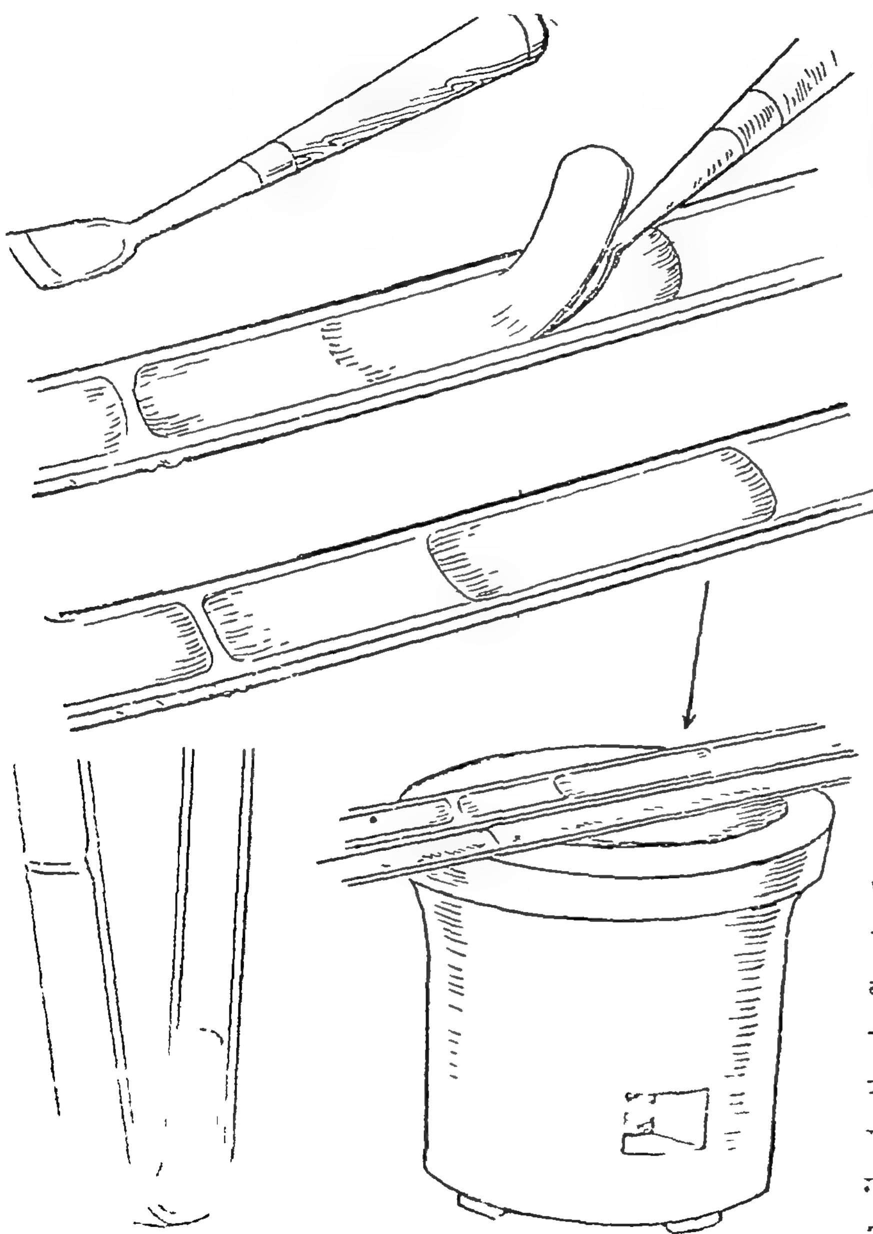
सतहदार सामान बनाने की सर्वोत्तम विधि—इसके लिए चित्र ६१ में प्रदर्शित विधि ही व्यवहार में लाई जाती है, अर्थात् अभीष्ट कोण की गडी छुरियों के बीच सामान को खींचते हैं। इस प्रणाली को चित्र में भली भाँति देखा जा सकता है।

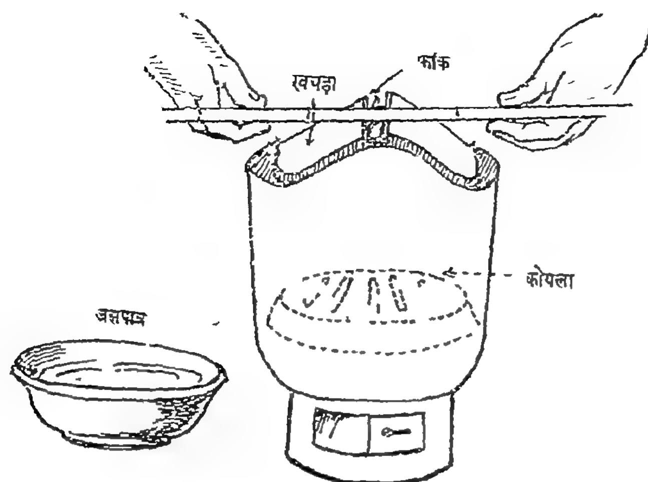
घन का वह भाग, जहाँ छुरियाँ गाडी जाती हैं, घन के बाहरी भाग से अच्छा और चिकना बना होता है। इस पर गडी तेज छुरियों से सतहदार सामान बनाने का काम किया जाता है, जिनसे तैयार सामान की सतह बहुत सुन्दर हो जाती है। गोल, सुन्दर और बारीक सामान तैयार करने के लिए विभिन्न प्रकार के आकार चित्र ६२ में दिखाये गये हैं।



अब सामान की [illegible] बहुत [illegible] है [illegible] भाँति [illegible] [illegible]

गरम करते समय बाँस को घुमाते रहना चाहिए, नही तो अधिक ताप से जल जाने की सम्भावना है। ऐसे बाँस को, जो अन्दर से पोला हो और जिसकी गिरहे हटा दी गई हो, गिरहो पर छेद करके तथा पोले मे अच्छी तरह बालू से भर कर मोडना चाहिए। मोडने के बाद बालू को हटा देना चाहिए। बालू से गरमी फैलती है और इसमे बाँस, टूटने पर फटने से बच जाता है। कहीं-कहीं बाँस के ऊपर तेल लगा- [illegible]

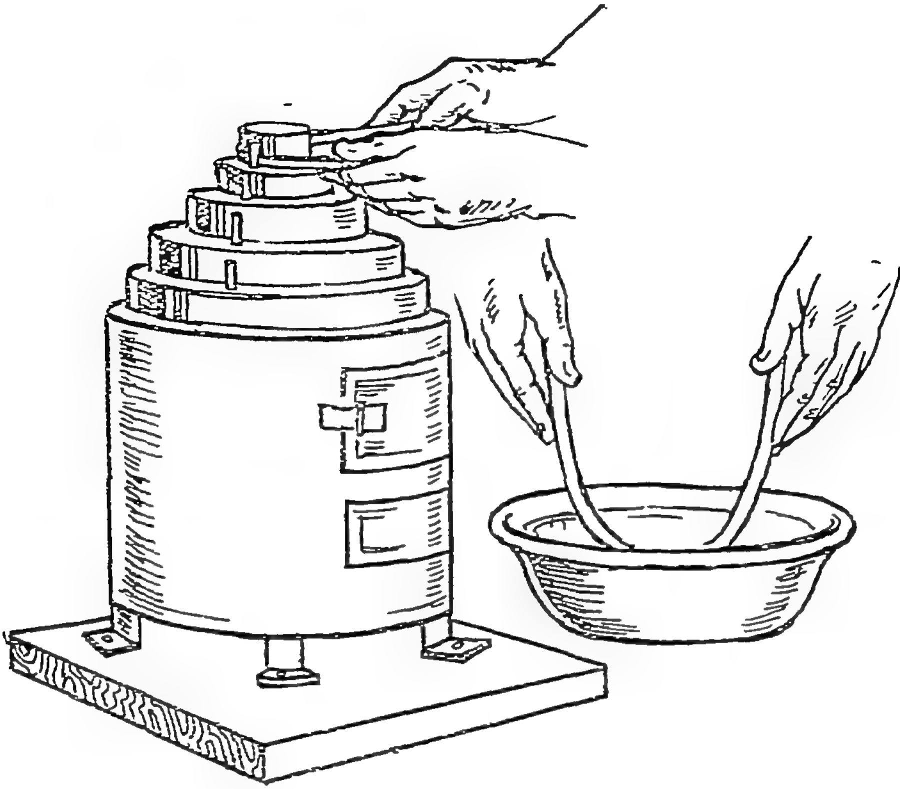




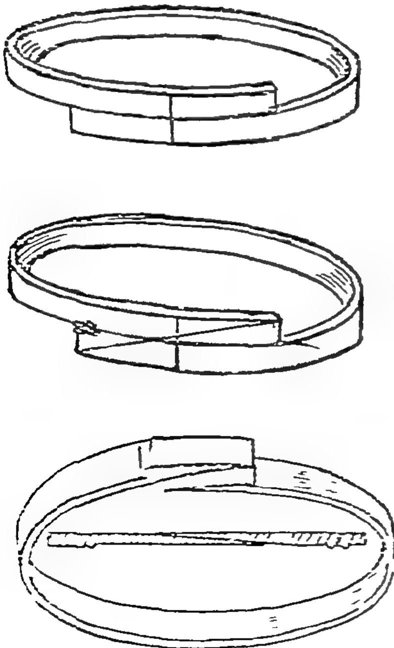
(चित्र ७५)

गरम किये जानेवाले भाग के, सीमित रखने के लिए (फायर व्रिक) कोयला के चूल्हे के मुँहपर एक दूसरे के आमने-सामने ईंट रख दी जाती हैं, जिससे चूल्हे का मुँह छोटा हो जाता है और बॉस की खास जगहपर ही आग की गरमी पहुँचती है तथा उसी भाग पर ही मोड बनाई जाती है। इसके लिए चित्र ७५ देखिए।

कलात्मक वस्तुओं के सामान को अल्कोहल लैंप या कडुआ तेल के लैंप (चित्र ६५) अथवा मोमबत्ती से गरम करते हैं। इससे फायदा यह होता है कि बॉस मे धुएँ के कालापन का दाग नही पडता है।



(चित्र ७८)



(चित्र ७९)

हो जायगी। इस तरह मोड़ने के समय इस बात पर ध्यान रखना चाहिए कि एकाएक कमचियाँ नही मोड़ी जायँ। मोड़ने के लिए आहिस्ता-आहिस्ता प्रयास करना ही श्रेयस्कर होता है।

कुछ मोड़ी हुई मोटी कमचियाँ चित्र ७९ में दिखाई गई हैं। मोडी हुई कमचियों को सुरक्षित रखने के लिए भी तरीके और साँचे हैं, जो चित्र ८० और ८१ में प्रदर्शित हैं। इस विधि से रखने पर कमचियाँ उस मोड़ी हुई अवस्था में बहुत दिनों तक रह सकती हैं।

बाँस के सामानों को साटने के लिए लेई या लेप

इस काम के लिए तो अनेक प्रकार के लेप या लेई हैं, पर इन लेइयों या लेपों में यह दोष पाया गया है कि पानी लगने पर इनके द्वारा साटे गये सामान अलग हो जाते हैं। इसलिए, यहाँ ऐसे लेप या लेइयों के बनाने की विधि दी जाती है, जो किसी भी दशा में न घुल सकती है या न सटा सामान अलग हो सकता है। विधि इस प्रकार है—

(१) चिनियाबादाम में एक प्रकार का चिपचिपा तरल पदार्थ होता है, जो साटने के काम में उपयोगी होता है। पहले चिनियाबादाम के बीज को खूब महीन पीस लेते हैं और तब अलकली (Alkali) सॉल्युसन उसमें फेंटकर अच्छी तरह मिला देते हैं। अलकली सॉल्युसन पानी तथा चूना और तरल अममोनियम (Ammonium) को मिलाकर बनाते हैं। यह लेप बाँस या लकड़ी के सामानों को साटने में स्थायी होता है।

(२) पहले दूध का खोआ बना लेना चाहिए। जितना खोआ हो, उसके परिमाण के अनुसार उसमें ५% से १०% एसिड एसिलेटेड (Acid accelated) मिलाना चाहिए और तब उसे कपड़छान करना चाहिए। बाद, इसे धूप में सुखाकर

कास्टिक या एडसोल के थेलो को रख देते हैं, जिसमे हवा की आर्द्रता खिंच आती है। सामान अगर थोडा-सा रहे, तो उसे पाराफिन कागज से लपेटकर उसपर आर्द्रता खीच लेनेवाले रासायनिक पदार्थ रख देते हैं।

स्टेराइलीजरों द्वारा—ऐसे अनेक रासायनिक पदार्थ है, जिनके प्रयोग से फॅफूदी नही लगती। इनमे निम्नलिखित रसायनो के उपयोग मुख्य हैं—

(क) तारपिन और सरसो के तेल, तारपिन तेल, तारपिन सेलिजिल एसिड या औटा हुआ सरसो का तेल लगाना।

(ख) बोरिक एसिड सॉल्युशन के साथ उबालना।

(ग) पाराफार्म पाउडर के पैकेटो को निम्नाकित रासायनिक पदार्थों के साथ रखना—एक प्रतिशत सरसो तेल तारपिन तेल मे मिलाकर और पाँच प्रतिशत 'मैरिला नेकिनैनसिस' तेल मे मिलाना।

द्रष्टव्य—यद्यपि उबाला हुआ सरसो तेल बहुत ही लाभदायक होता है, तथापि उसमे बड़ा अवगुण यह है कि उसके कारण बॉस मे पीलापन आ जाता है। इसलिए, उसे व्यवहार में नहीं लाया जा सकता।

बॉस के सामान को सुखाना

१ **प्राकृतिक ढग से**—बाँस का पहला रग गहरा हरा रहता है। इस कारण उनके तन्तुओं की सुरक्षा की दृष्टि से उन्हें सुखा लेना आसान है। टुकडे-टुकडे किये गये बॉसो को सुखाने मे १० से २० दिन लगते हैं और सम्पूर्ण बॉस को सूखने मे तीन से चार महीने तक का समय लगता है। इस अवधि में अगर बाँस ठीक से सुखाये जायँ, तो उनका रग पहले हल्का हरा और तब हल्का पीलापन लिये भूरा हो जायगा। अगर इसी बीच उनमे आद्रता (नमी) लग गई, तो उनमें फॅफूदी पकड़ लेगी और उनका रग भूरा अथवा काला-भूरा हो जायगा और उनकी चमक जाती रहेगी।

२ **बनावटी ढग से**—साधारणत गरमी पहुँचाकर बाँस को सुखाया जाता है। ऊँचे तापमान और अधिक आर्द्र वातावरण मे सुखाने पर उसका रग बदल जाता है और चमक भी खत्म हो जाती है। उत्तम तापमान ४६ सेंटीग्रेड और अधिक आर्द्रता ५५ प्रतिशत से भी कम है। हवा पहुँचाकर, जिसमे हवा तेजी के साथ सामान पर से होकर गुजरे सुखाना अच्छा होता है। अगर तापमान इससे अधिक होगा, तो बॉस का रग बदल जायगा। इस बात की ओर बराबर सावधानी रखनी पडती है।

बडे गोल बॉस को, उनके बने सामान से ज्यादा, धीरे-धीरे सुखाना पडता है। लेकिन फॅफूदी ऊपरी सतह से अधिक बॉस के भीतरी भाग में लगती है, इसलिए काटने के तुरत बाद अगर बॉस के सामान सुखा नहीं लिये जाते हैं, तो उन्हे बडे बाँस की ही हालत मे रख देना चाहिए और उसी हालत में सूख जाने पर उनके टुकडे बनाने चाहिए।

तब लम्बी डोरीदार बुनाईवाली कमचियों से उसे बुनते हैं। इसलिए फ्रेम की कमचियों से बुनाई की कमचियाँ अधिक मजबूत होनी चाहिए।

(ङ) अगर गोलाकार भाग तीन-चार बार बुना जा चुका है और फ्रेम उचित ढग से नही मुडा है, तो समझना चाहिए कि बुनाई बहुत ढीली रह गई है। इसलिए बुनाई की कमचियो को और अधिक कस देना चाहिए। इसके साथ ही फ्रेम को भी मोड देना चाहिए। ऐसी अवस्था मे फ्रेम ठीक से मुड़ जाता है।

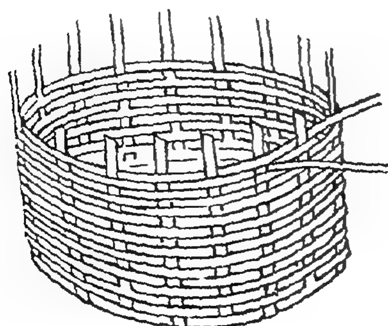
(च) फ्रेमवाली कमचियो को समकोण बनाने के लिए गरम लोहे का प्रयोग किया जाता है। इसकी प्रक्रिया पहले बताई जा चुकी है।

(छ) कभी-कभी पेंदे मे अतिरिक्त कमचियाँ भी घुसेडनी पड़ती है। बुनाई होने पर फ्रेम की कमचियाँ मुड जाती हैं, जिससे कभी-कभी पेंदा भी टूटा हो जाता है। इसलिए अगर चौरस पेंदे की जरूरत हो, तो उत्तम यह है कि अलग से मजबूत कमचियों को पेंदे में घुसेड दें। ये घुसेडी गई कमचियो को पेंदे के व्यास के रूप मे, एक छोर से दूसरे छोर तक, रखना चाहिए।

ऊपर दिये गये विभिन्न तरीके गोलाकार बुनाई मे व्यवहृत होते हैं। पेंदे तथा पार्श्व की बुनाईवाली कमचियो को बदल देने से गोलाकार बुनाई ठीक से नहीं हो सकती। बुनाई की कमचियाँ भी नही बदली जानी चाहिए। ये बातें आगे के पृष्ठों में बताई गई हैं।

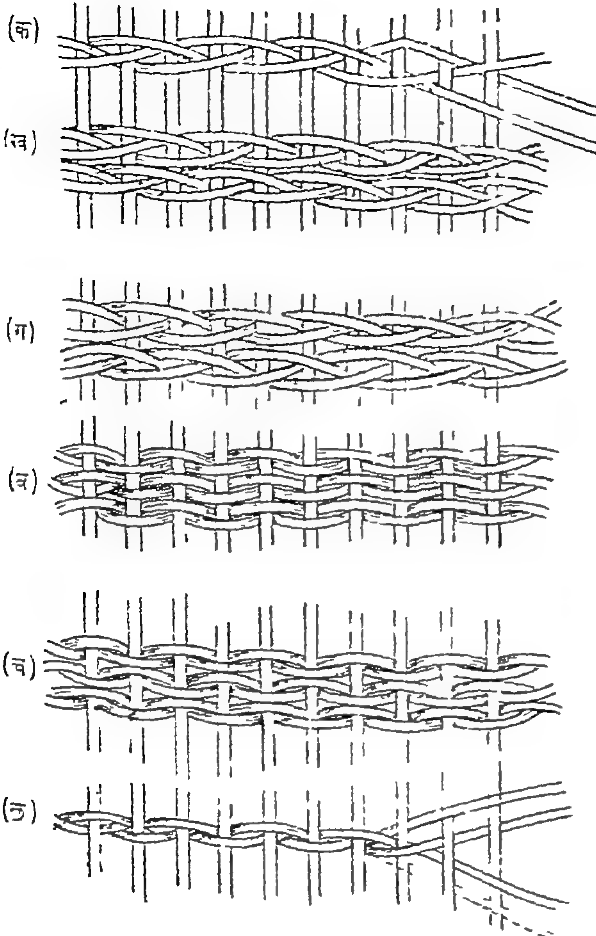
पार्श्व की बुनाई—पार्श्व भाग की बुनाई की कई विधियाँ हैं। फ्रेम तथा बुनाई की विधि के समान ही चौखुटा बुनाई, जालीदार बुनाई, मधुकोष बुनाई अथवा फाँसदार बुनाई की जाती है।

साधारण टोकरियों अथवा पिंजडो के बुनने मे चौखुटा बुनाई, जालीदार बुनाई ओर मधुकोष बुनाई व्यवहार में आती है। कभी-कभी छोटी-छोटी चीरी हुई कमचियाँ घुसेडनी पडती हैं, इसे अतिरिक्त बुनाई कहते हैं। अतिरिक्त कमचियाँ कुछ वस्तुओं मे एक ही आकार की होती हैं।



(चित्र ६३)

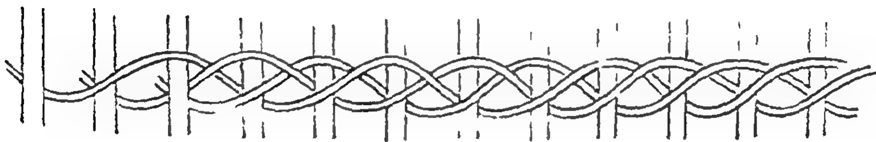
अगर गलती से पार्श्व की बुनाई करते समय फ्रेम की कमचियाँ टूट जायँ, तो किनारे को नुकीला बनाकर दूसरी कमची को वहाँ लगाकर बुनते जाना चाहिए। बुनाई की कमचियो को जोड़ने के लिए नई और समाप्त होने-वाली कमची को मिलाकर



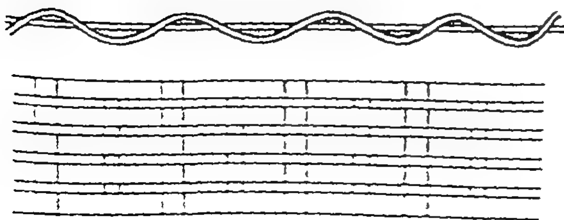
(चित्र ९८)

यह चित्र ९९ के निचले भाग (छ) में प्रदर्शित है। चारों बुनाई की कमचियों में सबसे बाईं ओरवाली कमची अन्य तीन कमचियों तथा तीन फ्रेमवाली कमचियों के ऊपर होकर जाती है और उसके बाद फ्रेमवाली एक कमची दूसरी ओर से वक्र रूप में आती है। तीन रस्सानुमा बुनाई में फ्रेमवाली कमची को जोड़ना कठिन होता है।

(६) **तरंगनुमा जालीदार** बुनाई—यह बुनाई फूल रखनेवाली चँगेली की बुनाई के काम में आती है। बुनने की कमचियाँ थोड़ी अधिक चौड़ी रहती हैं और इसकी बुनावट जलतरंग-सी दिखाई पड़ती है। फ्रेम खड़ा करनेवाली कमचियाँ बुनाईवाली



(चित्र १००)

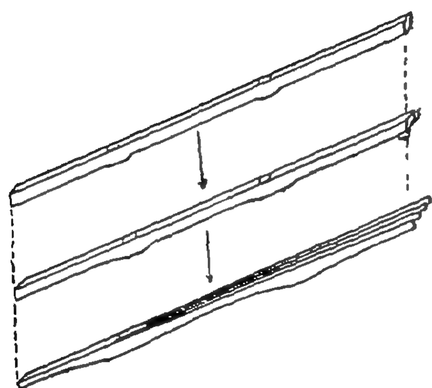


(चित्र १०१)

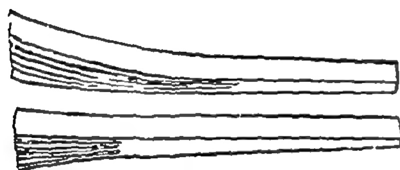
कमचियों में छिप जाती हैं। इसे चित्र १०० में दिखाया गया है।

(७) **देवदार-पत्राकार** बुनाई—इसकी बुनाई तरंगनुमा बुनाई के समान होती है और जब फ्रेमवाली कमचियाँ सम संख्या में होती हैं, तब इ-

एक वर्ष पुराने और फाड़कर रखे गये चाभ बाँस के सामान को, जो किनारे मढ़ने के काम में लाया जाता है, प्रायः दो दिनों तक पानी में छोड़ देना चाहिए। फिर, उसे तीन भागों में चीरना चाहिए। चित्र ४४ देखें। इस कार्य के लिए चाभ बहुत ही उत्तम बाँस होता है, लेकिन उसकी पेटी का भाग बहुत ही कमजोर होता है। यह बहुत ही मुलायम बाँस होता है, इसलिए चित्र ४३ में प्रदर्शित मुंहवाले तरीके से उसे फाड़ना चाहिए, चित्र ४२ में प्रदर्शित ढंग से नहीं। क्योंकि, वैसा करने से सामान टूट जाता है।



(चित्र ४६)



(चित्र ४७)



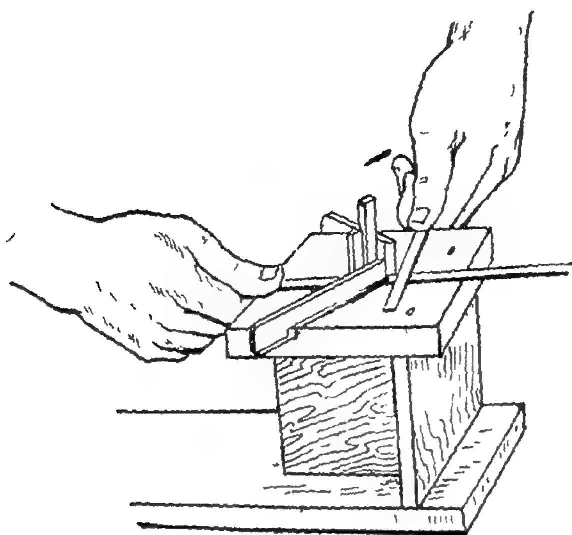
(चित्र ४८)

पाँचवीं विधि—यह बिना गाँठवाले बाँस को तेजी से चीरने का तरीका है। सर्वप्रथम एक छोर पर छुरी से प्रथम कटान कर दोनों हाथ से दोनों भागों को चित्र ४५ में प्रदर्शित तरीके से पकड़ लेते हैं। मुड़े हुए भाग के निकट से सामान तेजी से फटता जाता है। यदि सम भाग में कमचियाँ बनाना है, तो यह सुलभ और उत्तम तरीका है। इस काम के लिए जो छुरी होती है, उसकी धार की पीठ चौड़ी होती है।

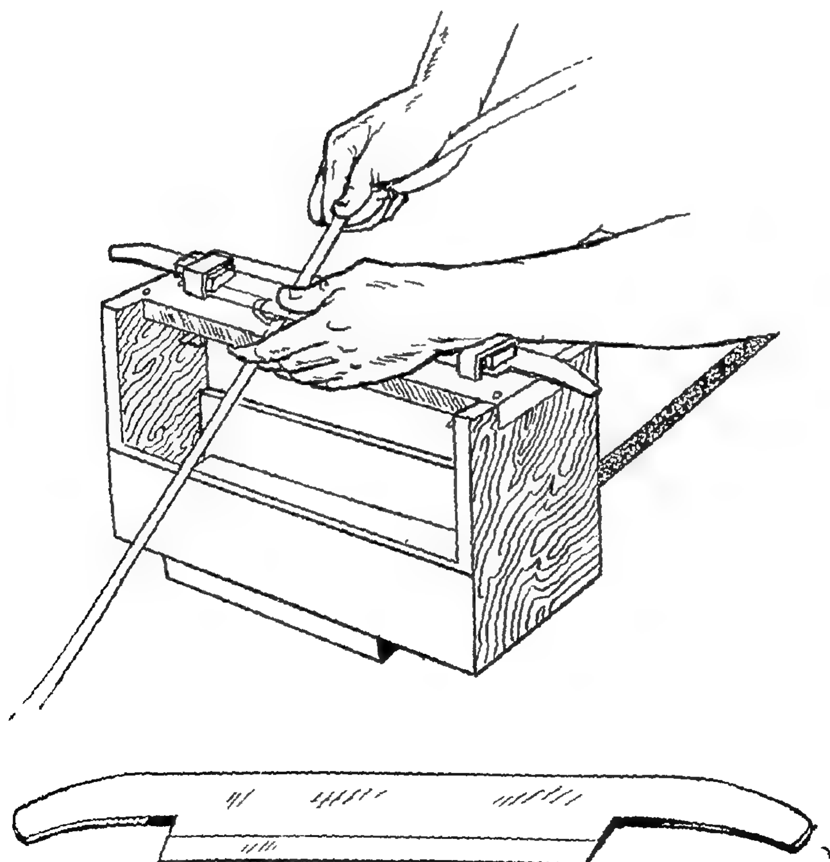
छठी विधि—बाँस को उसके भीतरी किनारे से ऊपरी सतह तक फाड़ने और इस प्रकार सम्पूर्ण गोलाई को कई भाग में विभक्त करके फाड़ने को रेडियल या त्रिज्याकार विभक्तीकरण कहते हैं। चित्र ४६ देखिए। इस प्रकार से फाड़ी गई कमचियाँ जालीदार वस्तुओं के बनाने में व्यवहृत होती हैं। वस्तु बनाने का ऐसा सामान छीले गये बाँस को चीरकर बनाया जाता है। इसलिए, यह अन्य प्रकार से चीरे गये सामानों से भिन्न होता है। बाँस के पहले की मुटाई की ही चौड़ाई कमचियों की चौड़ाई हो जाती है।

चित्र ४७ में प्रदर्शित उदाहरण त्रिज्याकार विभक्त सामान का है। ऐसे पिंजड़े (जिनका व्यास पेंदे से सिरे तक बदलता रहता है, लेकिन बुनाई की जाली की संख्या एक समान ही रहती है) इस

चित्र ५० मे दिखाया गया है। इस काम के लिए जो छुरी व्यवहृत होती है, वह चित्र २१ मे 'घ' वर्ण की छुरी है। मुटाई निश्चित करने के भी दो तरीके हैं, जो यन्त्र के द्वारा होते हैं। यन्त्र भी दो प्रकार के हैं—एक मुटाई निश्चित

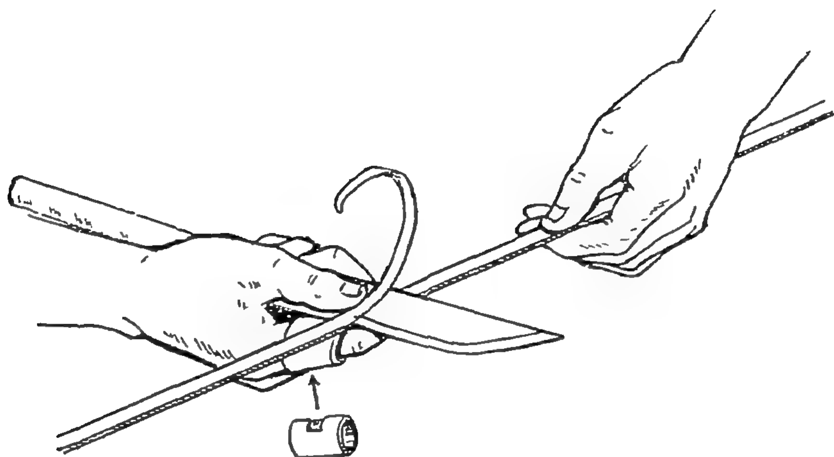


(चित्र ५१)

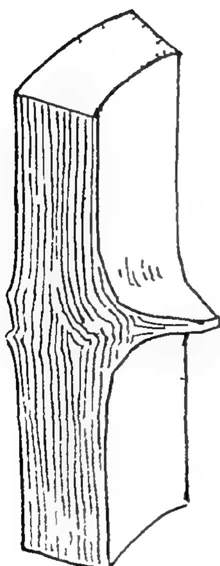


(चित्र ५२)

रूप में बँटे होते हैं। ये रेशे सीधे नहीं, बल्कि टेढ़े होते हैं। बाँस के ऊपरी भाग के रेशे भीतर की ओर और निचले भाग के रेशे त्वचा की ओर गये होते हैं तथा बाँस की जड़ में अधिक रेशे होते हैं, किन्तु सिरे पर कम। इसलिए बाँस के सिरे की ओर से फाड़ना ज्यादा आसान होता है। लेकिन चाभ के समान मुलायम बाँस को सिरे की ओर से फाड़कर अन्तिम रूप में जड़ की ओर से फाड़ते हैं। यह बाँस की बनावट पर निर्भर करता है। अनुभवी कारीगर दोनों ओर से बाँस को फाड़ते हैं।



(चित्र ५३)



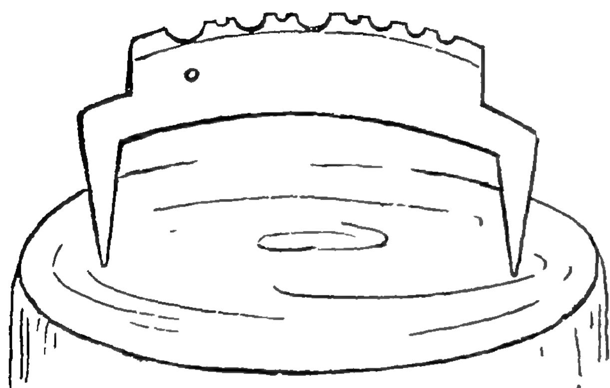
(चित्र ५४)

इसका दूसरा भी कारण है। चित्र ५४ में प्रदर्शित ढंग से गाँठवाले भागों में रेशे की बनावट की जाँच कीजिए। नीचे भाग से निकले रेशों के आगे बढ़ने पर उनमें से कुछ शाखाएँ निकलती हैं, जिनमें से एक ऊपर जाने के बजाय नीचे की ओर चलती हैं और दूसरी ऊपर की ओर। अतः, जड़ की ओर से फाड़ने से गिरह पर बाँस टेढ़ा हो जाता है। ऐसी अवस्था में यह प्रतीत होगा कि सिरे की ओर से फाड़ना ज्यादा आसान होता है।

आवश्यकता के अनुसार चौड़ाई बनाना—अनुभवी कारीगर अभीष्ट चौड़ाई में बाँस को चीरते हैं। बाँस की सामान्य वस्तु बनाने में खास चौड़ाई के सामान की जरूरत

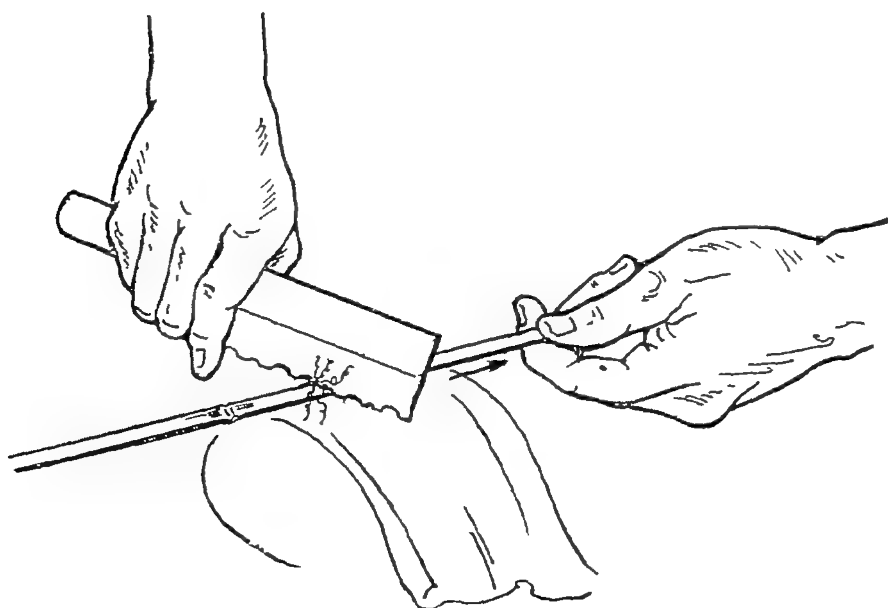
उनकी सतह बराबर की जाती है, क्योंकि उनके किनारे बहुत तेज होते हैं। यह कार्य चित्र ५७ में प्रदर्शित औजार से किया जाता है।

इस हथियार का व्यवहार करने के लिए बाँस से बने सामान को पहले मोटे कपड़े पर रख देना चाहिए और औजार के साथ लगे उन सामानों को धक्का देकर खींच लेना चाहिए। यह विधि चित्र ५८ में प्रदर्शित है। इसके अतिरिक्त (चित्र ५७) औजार को लकड़ी के बने घन में गाड़ दिया जाता है और उस होकर मोटी कमची को खींचा जाता है। यह तरीका चित्र ६० में दिखाया गया है।



(चित्र ५७)

इन औजारों से वस्तु बनाने का सामान जिन



(चित्र ५८)

आकारों में काटना चाहते हैं, उन कमचियों को उसी आकार में बना लेना चाहिए।

कारीगर बहुधा चित्र ५९ वाले औजार को अपने सामान को गोल बनाने के काम में भी लाते हैं। लेकिन बत्तियों के लिए गोल सामान बनाने के लिए 'गाउडिंग टूल' नामक एक खास औजार को व्यवहार में लाते हैं, जो चित्र ६० में प्रदर्शित है।

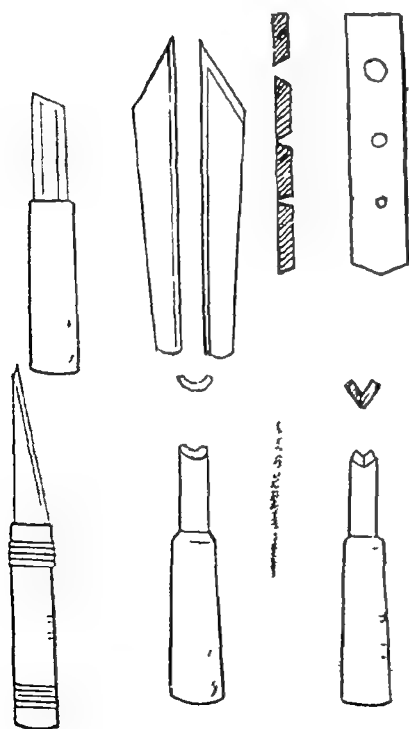
इस विभिन्न प्रकार के छिद्रवाले औजार से आप अपनी इच्छा के अनुसार मोटे-पतले सामान तैयार कर सकते हैं।



(चित्र ६१)

सतहदार सामान बनाने की सर्वोत्तम विधि—इसके लिए चित्र ६१ मे प्रदर्शित विधि ही व्यवहार मे लाई जाती है, अर्थात् अभीष्ट कोण की गडी छुरियो के बीच सामान को खीचते हैं। इस प्रणाली को चित्र मे भली भाँति देखा जा सकता है।

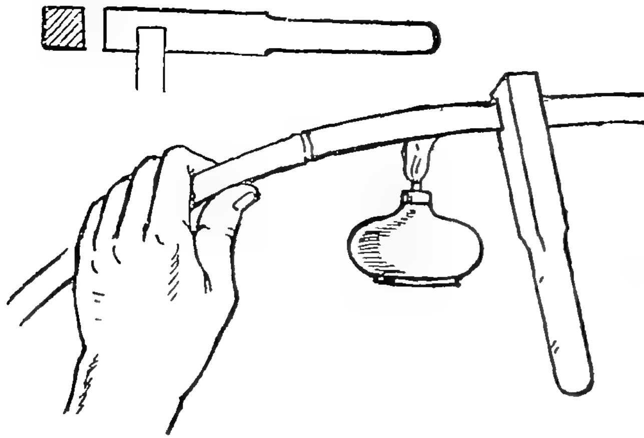
घन का वह भाग, जहाँ छुरियाँ गाडी जाती हैं, घन के बाहरी भाग से अच्छा और चिकना बना होता है। इस पर गडी तेज छुरियो से सतहदार सामान बनाने का काम किया जाता है, जिससे तैयार सामान की सतह बहुत सुन्दर हो जाती है। गोल, सुन्दर और बारीक सामान तैयार करने के लिए विभिन्न प्रकार के औजार चित्र ६२ मे दिखाये गये हैं।



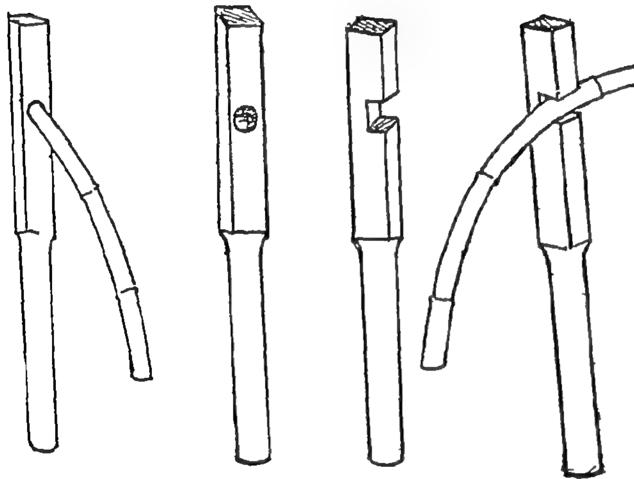
(चित्र ६२)

जब सामान की चौडाई बहुत सकीर्ण रहती है और ऊपर वर्णित ढग से काम करना असम्भव हो जाता है, तब छोटे बाँस के बने सामान गाँठ पर टूट जाते हैं और सतहदार सामान बनाना मुश्किल हो जाता है। ऐसी अवस्था मे चित्र ६३ मे प्रदर्शित विधि से काम करना पडता है।

वाँस के भीतरी भाग को गरमी पहुँचाकर मोडा जाता है। उसे तवतक गरम करते रहना चाहिए, जवतक वाँस से निकलनेवाले तेल से वाँस की सतह भीग न जाय। उसके वाद वाँस को मोडना चाहिए और फिर तुरन्त उसे उसी हालत मे हाथ से पकड़कर जल मे डुवा देना चाहिए। यदि सामान पानी में नही रखा जाय, तो उसे भीगे कपडे से पोछकर ठडा कर लेना उत्तम होता है। अगर दोनो तरीके से ठडा नही किया जा सके, तो मुड़े हुए रूप मे ही १० मिनट तक पकडकर रखना चाहिए। (चित्र ६४ देखिए)

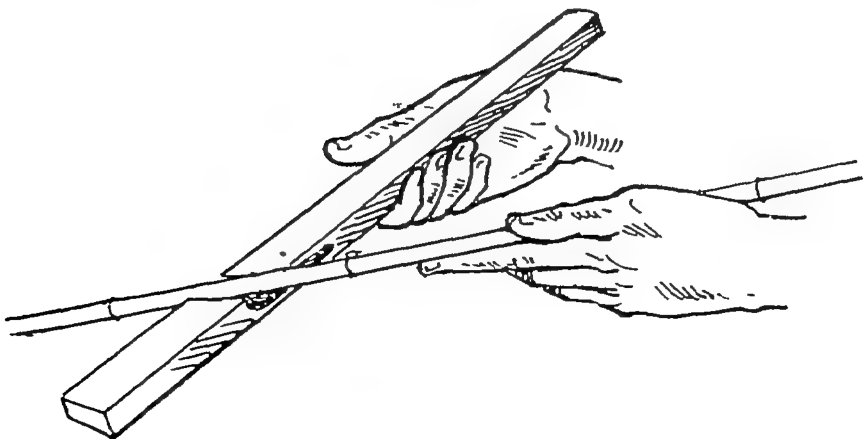


(चित्र ६५)



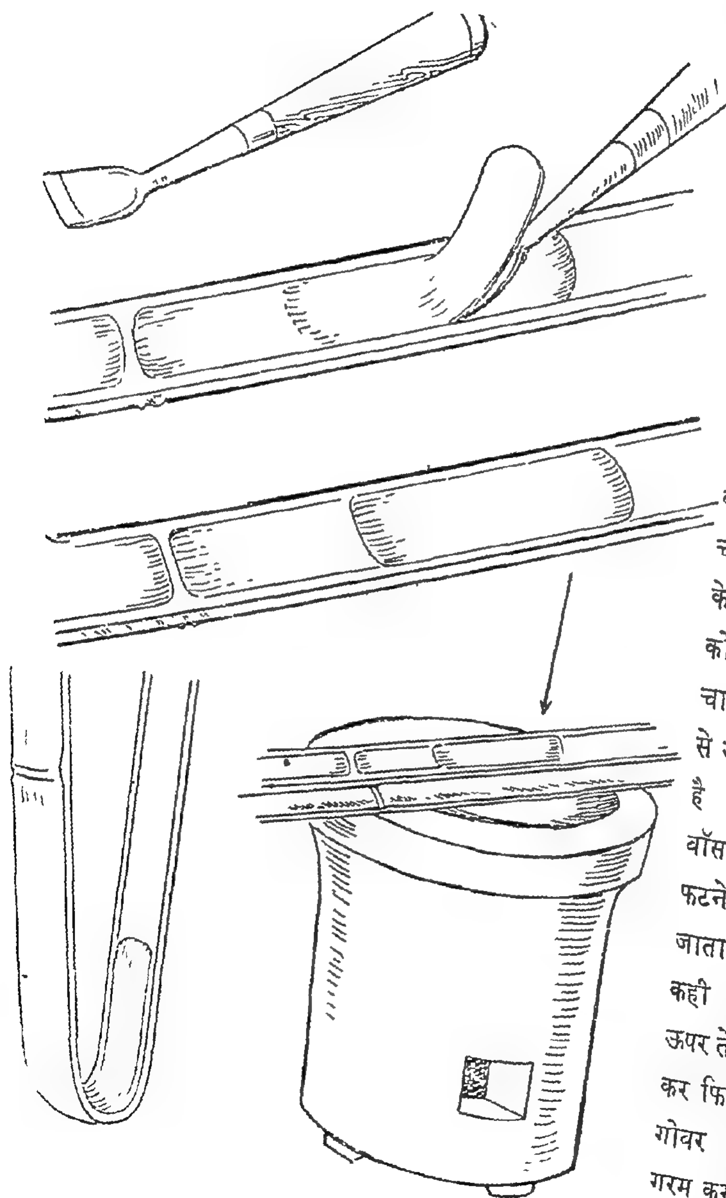
(चित्र ६६)

वाँस के सामान को मोड़ते समय इस वात के लिए सतर्क रहना चाहिए कि उसे गाँठ पर से नही मोडें, वल्कि दो गाँठो के वीच भाग पर वह मोडा जाय।



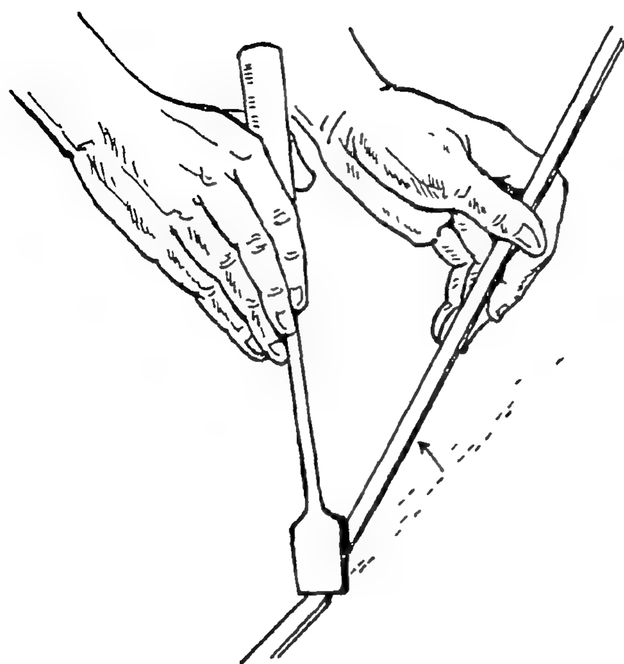
(चित्र ६७)

गरम करते समय बाँस को घुमाते रहना चाहिए, नहीं तो अधिक ताप से जल जाने की सम्भावना है। ऐसे बाँस को, जो अन्दर से पोला हो और जिसकी गिरहें हटा दी गई हों, गिरहों पर छेद करके तथा पोले में अच्छी तरह बालू से भर कर मोड़ना चाहिए। मोड़ने के बाद बालू को हटा देना चाहिए। बालू से गरमी फैलती है और इससे बाँस, टूटने पर फटने से बच जाता है। कहीं-कहीं बाँस के ऊपर तेल लगाकर फिर उसमें गोबर लगाकर गरम करते हैं। इस प्रयोग से बाँस की सतह खराब नहीं होने पाती।

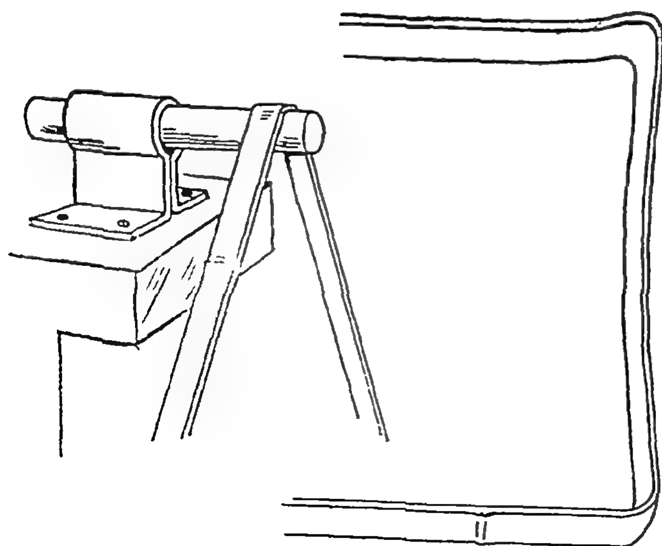


(चित्र ७)

किसी भी तरीके से, आकार में विकृति आये बिना, बड़े सामानों को मोड़ना बहुत कठिन होता है।



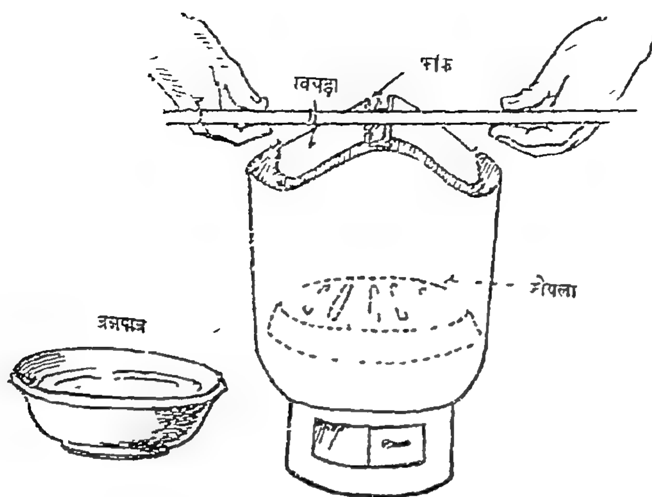
(चित्र ७३)



(चित्र ७४)

ऊपरी हिस्से में प्रदर्शित है। वॉस के निचले भाग को, जिस तरफ छिलका है, गरम किया जाता है और तवतक गरम करते रहते हैं, जब-तक उसमें से तेल न निकल आवे। फिर, भीतरी भाग को भी थोड़ा गरम करते हैं। वाद, मोड़ लेने पर सामान को ठडा कर देते हैं। ये सभी कार्य चित्र ७१ मे ही दिखाये गये हैं।

गरम लोहे से पतली कमचियों को मोड़ना—टोकरी अथवा किसी वस्तु के फ्रेम के सामान बुनकर टेढे किये जाते हैं। कपडे रखने के वक्से आदि में फ्रेम के सामान व्यवहृत होते हैं, उनके किनारे तीखा कोण लिये होते हैं। ऐसे कोण वनाने के लिए जो मुटाई होती है, उसमें लोहे को गरम करके अथवा विजली के यन्त्र से गरमी पहुँचा करके मोड वनाई जाती है। इस काम मे आनेवाले औजार चित्र ७२ मे दिखाये गये हैं। कभी-



(चित्र ७५)

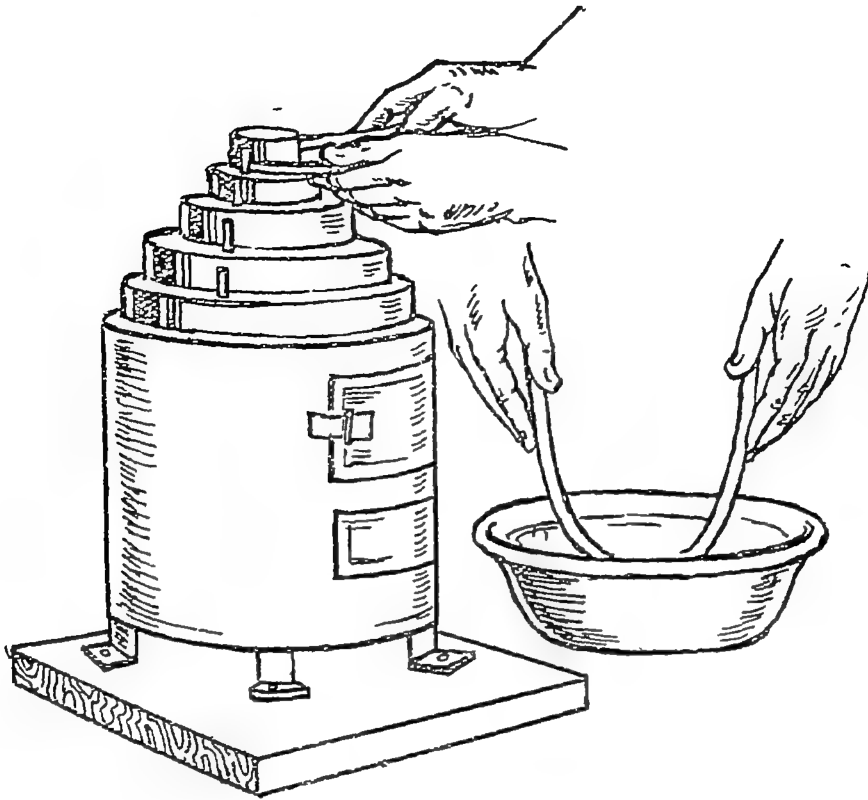
गरम किये जानेवाले भाग के, सीमित रखने के लिए (फायर ब्रिक) कोयला के चूल्हे के मुँहपर एक दूसरे के आमने-सामने ईंटें रख दी जाती हैं, जिससे चूल्हे का मुँह छोटा हो जाता है और बाँस की खास जगहपर ही आग की गरमी पहुँचती है तथा उसी भाग पर ही मोड़ बनाई जाती है। इसके लिए चित्र ७५ देखिए।

कलात्मक वस्तुओं के सामान को अल्कोहल लैंप या कड़ुआ तेल के लैंप (चित्र ६५) अथवा मोमबत्ती से गरम करते हैं। इससे फायदा यह होता है कि बाँस में धुएँ के कालापन का दाग नहीं पड़ता है।

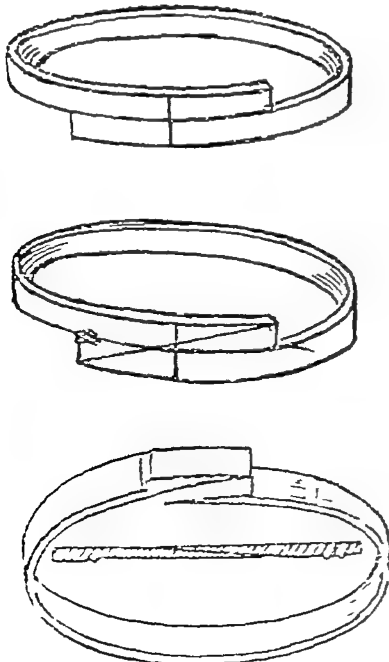
गरम करते समय इस बात के लिए सावधानी बरतनी पड़ती है कि अगर सामान को गोल करना हो, तो घुमाते रहना चाहिए। मोड़ने के योग्य तापमान ७० सेंटीग्रेड अच्छा होता है, पर लकड़ी का कोयला व्यवहार करने पर यह तापमान ४०० सेंटीग्रेड हो जाता है। ऐसी स्थिति में बाँस जल्दी-जल्दी घुमाना पड़ता है, जिससे बाँस में अधिक ताप न लगे।

कमचियों को मोड़ने की दूसरी विधि—कमचियों को गोलाकार फ्रेम के रूप में बनाने की एक दूसरी विधि भी है। इसके लिए भी एक प्रकार का चूल्हा होता है, जो चित्र ७६ में दिखाया गया है। इस विधि से उच्च कोटि की वस्तुओं के निर्माण के लिए गोलाकार फ्रेम तैयार किया जाता है। इस चूल्हे के बीचवाले भाग में लोहे के १० हिस्से होते हैं। चूल्हे के भीतर भोजन पकानेवाले पत्थर-कोयले के चूल्हे की तरह ही लोहे की छड़ लगाई जाती है। इसमें उसी तरह आग भी सुलगाई जाती है। चूल्हे के ऊपरी मुँह पर कटोरे के आकार के, पाँच छोटे-बड़े गोलाकार लोहे के कटोरे (फ्रेम) रख दिये जाते हैं। इसे चित्र ७७ में दिखाया गया है। ये फ्रेमवाले छोटे-बड़े कटोरे चूल्हे के अन्दर की आग की आँच से गरम हो जाते हैं। इन तब कटोरों के सहारे कमचियों के गोलाकार फ्रेम अत्यन्त सुविधापूर्वक बनाये जा सकते हैं।

विधि—सर्वप्रथम कमचियों को आवश्यकतानुसार आकृति की बना लेने के बाद चूल्हे में आग जलाकर उन्हें गरम करना पड़ता है। चूल्हे के पास ही एक



(चित्र ७८)

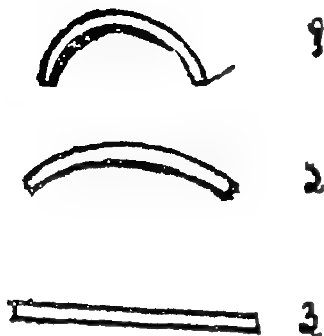


(चित्र ७९)

हो जायगी। इस तरह मोडने के समय इस बात पर ध्यान रखना चाहिए कि एकाएक कमच्चियाँ नही मोडी जायँ। मोड़ने के लिए आहिस्ता-आहिस्ता प्रयास करना ही श्रेयस्कर होता है।

कुछ मोडी हुई मोटी कमचियाँ चित्र ७९ मे दिखाई गई हैं। मोडी हुई कमच्चियो को सुरक्षित रखने के लिए भी तरीके और साँचे हैं, जो चित्र ८० और ८१ मे प्रदर्शित हैं। इस विधि से रखने पर कमचियाँ उस मोडी हुई अवस्था मे बहुत दिनो तक रह सकती हैं।

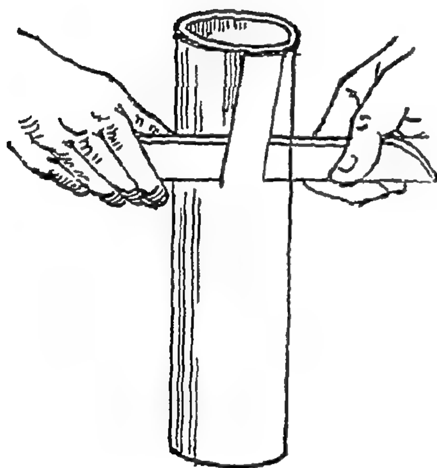
हिस्ता दबाया जाता है और बार-बार गरम किया जाता है। जितनी बार आग पर सेंककर वा लोहे की छड़ से दबाकर सीधा किया जाता है, उतनी ही बार बाँस को पानी से पोंछना पडता है और उसी हालत मे दबाकर रखना पडता ह, अन्यथा बाँस अपनी पूर्वावस्था मे हो जायगा। कितने लोग बिजली के प्रेसर या साधारण प्रेसर से भी दबाकर सीधा करते हैं।

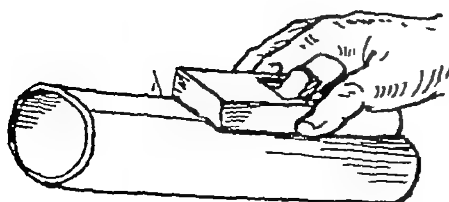


(चित्र ८२)

इस काम के लिए दो विधियाँ हैं। एक का नाम 'सूखी विधि' और दूसरी का नाम 'भींगी विधि' है। ऊपर वाली विधि 'सूखी विधि' है।

भींगी विधि—वस्तु बनाये-जानेवाले बाँस के सामान को पहले पानी मे उबालते हैं। उबालते समय आधा प्रतिशत (½%) कास्टिक सोडा डालते हैं। इससे वस्तु बनाये जाने वाले सामान नरम हो जाते हैं। बाद मे सामान को लोहे या बिजली के औजार से दबाकर सीधा कर लेते हैं। इस विधि मे भी पहले की तरह ही आहिस्ता-आहिस्ता दबाकर सीधा करना पडता है, नहीं तो सामान के फट जाने की सम्भावना रहती है। सामान को कम-से-कम तीन बार सीधा करना चाहिए और उन्हें दो बार उबालना चाहिए। प्रेसर मे दबाकर सीधा करने की विधि चित्र ८६ मे दिखाई गई है। इस विधि से तैयार किये गये सामानों से विभिन्न प्रकार की उपयोगी वस्तुएँ बनाई जाती हैं—जैसे, तस्तरी, बक्से आदि।

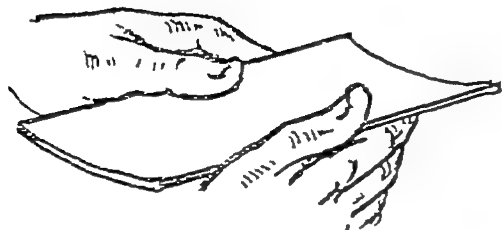

(चित्र ८३)


(चित्र ८४)

(६) बाद में, फिर उसे गरम करना पड़ता है और दबाकर मनोनुकूल आकृति में झुकाने का प्रयास करना पड़ता है।

(१०) इस तरह क्रमागत प्रयास जारी रखना चाहिए, जबतक बाँस पूर्णरूप से मनोनुकूल आकृति के रूप में न आ जाय।

(११) मनोनुकूल आकृति देने के लिए सबसे अच्छा तरीका यह है कि गरम लोहे के दबाव से काम लिया जाय।



(चित्र ८७)

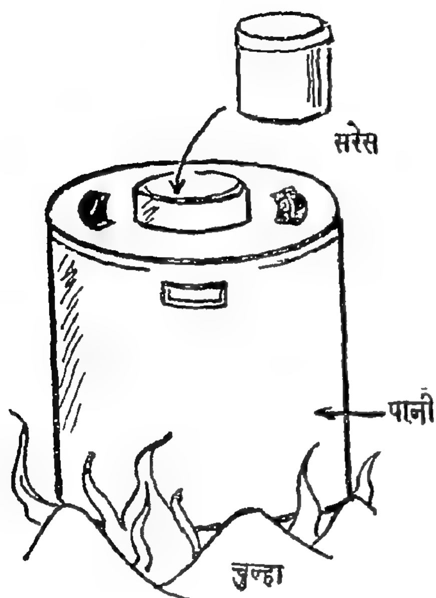
(१२) लोहे के दाब को लकड़ी के कोयले पर गरम करना चाहिए।

(१३) बाद में सैंड पेपर (Sand paper) से सामान को साफ करना पड़ता है। साफ करने के लिए पहले मोटे सैंड पेपर व्यवहृत करते हैं, बाद में महीन सैंड पेपर का उपयोग किया जाता है।

(१४) सबसे अन्त में रंग देने के लिए लाह या चपड़े का व्यवहार होता है। भींगी विधि में इस बात की पूर्ण रूप से आवश्यकता है कि बाँस को अच्छी तरह गरम पानी में उबाल लेने पर सामान को लोहे के दाब में लगभग बारह घंटे तक दबाये रखना जरूरी होता है। प्रेसर में दबाकर सीधा किया गया सामान चित्र ८७ में दिखाया गया है।

:
:
:

(९) सरेस से भी साटने का काम लिया जाता है। इसके प्रयोग की विधि इस प्रकार है—



(चित्र ८८)

साधारणतः इस काम के लिए खास प्रकार का चूल्हा होता है, जो चित्र ८८ में दिखाया गया है। उसी चूल्हे पर किसी बड़े पात्र में पानी रखते हैं, जो चूल्हे की आँच से गरम होता रहता है। जिस पात्र में सरेस रखा रहता है, उस पात्र को पानीवाले बरतन के ऊपरी भाग में रख देते हैं, जिसका मुँह-वाला ऊपरी भाग पानी से ऊपर रहता है। सरेस अपने बरतन में, नीचे के गरम पानी की भाप से, गल जाता है और तरल हो जाता है।

प्रयोग-विधि—इसके बाद जहाँ जोड़ना हो, लकड़ी या बाँस के उस स्थान पर पानी में भीगा ब्रश चला देना पड़ता है, जिससे स्थान कुछ आर्द्र हो जाता है। इसके बाद सरेस को लगाकर लकड़ी को दबाना पड़ता है। दबाने से जो सरेस इधर-उधर निकल जाता है, उसे भीगे कपड़े से पोंछ देते हैं। इस विधि से सामान अच्छी तरह सट जाता है।

इस विधि में एक दोष है कि जब सटा हुआ सामान पानी में भीग जाता है, तब उसका जुड़ाव छूट आता है। इससे बचाने के लिए कारीगर को चाहिए कि जोड़े गये सामान पर ब्रश के द्वारा 'फॉरमलीन सॉल्युसन' (Formalin solution) को बाहर से लगा दे। ऐसा करने से जोड़े गये सामान पर पानी का जरा भी असर नहीं पड़ता है। फॉरमलीन व्यवहार करने के पहले बाँस में रहनेवाली चिकनाहट को हटा देना चाहिए, अन्यथा फॉरमलीन उसे पकड़ नहीं पाता। सरेस के द्वारा जोड़े गये सामान पर कड़ी धूप या किसी प्रकार के वाष्प की गरमी का कोई असर नहीं होता है। इसलिए इसके द्वारा की गई जुड़ाई में यह एक विशेष गुण भी है। इसका शत्रु एकमात्र पानी ही है।

(१०) पाइरोक्सिलिन (Pyroxylin) और सेलुलेट का तरल मिश्रण भी साटने के काम में आता है।

कास्टिक या एडसोल के थैलो को रख देते हैं, जिसमे हवा की आर्द्रता खिच आती है। सामान अगर थोडा-सा रहे, तो उसे पाराफिन कागज से लपेटकर उसपर आर्द्रता खीच लेनेवाले रासायनिक पदार्थ रख देते हैं।

स्टेराइलीजरां द्वारा—ऐसे अनेक रासायनिक पदार्थ हैं, जिनके प्रयोग से फॅफूदी नही लगती। इनमें निम्नलिखित रसायनो के उपयोग मुख्य हैं—

(क) तारपिन और सरसो के तेल, तारपिन तेल, तारपिन सेलिजिल एसिड या औटा हुआ सरसों का तेल लगाना।

(ख) वोरिक एसिड सॉल्युशन के साथ उवालना।

(ग) पाराफार्म पाउडर के पैकेटो को निम्नाकित रासायनिक पदार्थों के साथ रखना—एक प्रतिशत सरसो तेल तारपिन तेल मे मिलाकर और पॉच प्रतिशत 'मैरिला नैकिनैनसिस' तेल में मिलाना।

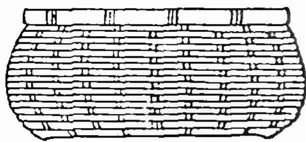
द्रष्टव्य—यद्यपि उवाला हुआ सरसो तेल वहुत ही लाभदायक होता है, तथापि उसमें वडा अवगुण यह है कि उसके कारण बॉस मे पीलापन आ जाता है। इसलिए, उसे व्यवहार में नही लाया जा सकता।

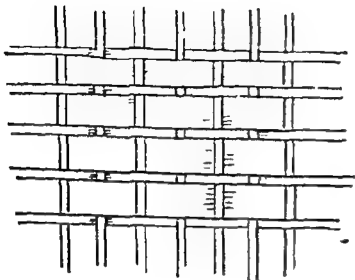
बॉस के सामान को सुखाना

१ **प्राकृतिक ढग से**—बाँस का पहला रग गहरा हरा रहता है। इस कारण उनके तन्तुओं की सुरक्षा की दृष्टि से उन्हें सुखा लेना आसान है। टुकडे-टुकडे किये गये वॉमो को सुखाने में १० से २० दिन लगते हैं और सम्पूर्ण बॉस को सूखने मे तीन से चार महीने तक का समय लगता है। इस अवधि में अगर बाँस ठीक से सुखाये जायॅ, तो उनका रग पहले हल्का हरा और तव हल्का पीलापन लिये भूरा हो जायगा। अगर इसी वीच उनमे आद्रता (नमी) लग गई, तो उनमें फॅफूदी पकड लेगी और उनका रग भूरा अथवा काला-भूरा हो जायगा ओर उनकी चमक जाती रहेगी।

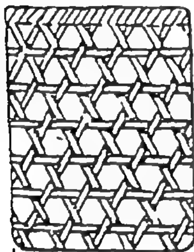
२ **वनावटी ढग से**—साधारणत गरमी पहुँचाकर बॉस को सुखाया जाता है। ऊँचे तापमान और अधिक आर्द्र वातावरण मे सुखाने पर उसका रग वदल जाता है और चमक भी खत्म हो जाती है। उत्तम तापमान ४६ सेंटीग्रेड और अधिक आर्द्रता ५५ प्रतिशत से भी कम है। हवा पहुँचाकर, जिसमे हवा तेजी के साथ सामान पर से होकर गुजरे, सुखाना अच्छा होता है। अगर तापमान इससे अधिक होगा, तो बॉस का रग वदल जायगा। इस वात की ओर वरावर सावधानी रखनी पडती है।

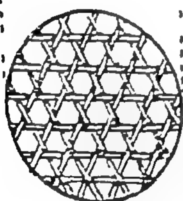
वडे गोल वॉम को, उनके वने सामान से ज्यादा, धीरे-धीरे सुखाना पड़ता है। लेकिन फॅफूदी, ऊपरी सतह से अधिक वॉम के भीतरी भाग मे लगती है, इसलिए काटने के तुरत वाद अगर वॉम के सामान सुखा नही लिये जाते हैं, तो उन्हे वडे बाँस की ही हालत मे रख देना चाहिए और उसी हालत मे सूख जाने पर उनके टुकडे वनाने चाहिए।



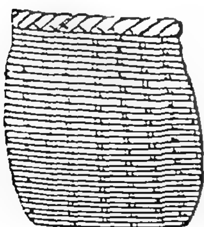


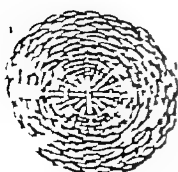
(चित्र ६०)





(चित्र ६१)





(चित्र ६२)

पिंजड़े और टोकरियों की बनावट—

१ पेंदा।
२ पेंदे से कोने तक का भाग।
३ पार्श्व-भाग।
४ मुँह।

इनमें निम्नलिखित प्रकार के सामान लगते हैं—

१ पेंदे के लिए सामान।
२ गोलाकार बनाने के लिए सामान।
३ किनारे के लिए सामान।
४ मुँह के लिए सामान।
५ पेंदे से मुँह तक के लिए फ्रेम के सामान।

आगे के पन्नों में इन भागों की लम्बाई, चौड़ाई आदि पर विचार किया जायगा। सामान को तैयार करते समय यह खयाल रखना चाहिए कि उनसे बनाई जानेवाली वस्तुओं और उनके आकार में अनुकूलता रहे। लेकिन बाँस जिस तरह का हो, उसके अनुसार आकार में परिवर्तन भी होना चाहिए। बुनने की विधि को निम्नांकित श्रेणियों में बाँटा जा सकता है—

(१) पेंदा बनाने की विधि और उसकी बुनावट।

(२) गोलाकार बुनने की विधि और उसकी बुनावट।

(३) पार्श्व भाग बुनने की विधि और उसकी बुनावट।

(४) मुँह बुनने की विधि और उसके छोर की बुनावट।

टोकरी तथा पिंजड़े की बुनावट को भी कई श्रेणियों में बाँट सकते हैं—

(१) पेंदे तथा बगल-बगल की बुनावट में कोई भेद नहीं है।

तब लम्बी डोरीदार बुनाईवाली कमचियों से उसे बुनते हैं। इसलिए फ्रेम की कमचियों से बुनाई की कमचियाँ अधिक मजबूत होनी चाहिए।

(ङ) अगर गोलाकार भाग तीन-चार बार बुना जा चुका है और फ्रेम उचित ढंग से नहीं मुड़ा है, तो समझना चाहिए कि बुनाई बहुत ढीली रह गई है। इसलिए बुनाई की कमचियों को और अधिक कस देना चाहिए। इसके साथ ही फ्रेम को भी मोड़ देना चाहिए। ऐसी अवस्था में फ्रेम ठीक से मुड़ जाता है।

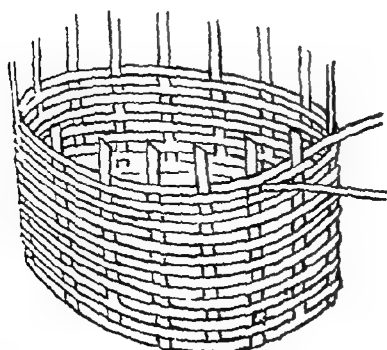
(च) फ्रेमवाली कमचियों को समकोण बनाने के लिए गरम लोहे का प्रयोग किया जाता है। इसकी प्रक्रिया पहले बताई जा चुकी है।

(छ) कभी-कभी पेंदे में अतिरिक्त कमचियाँ भी घुसेडनी पड़ती हैं। बुनाई होने पर फ्रेम की कमचियाँ मुड जाती हैं, जिससे कभी-कभी पेंदा भी टेढ़ा हो जाता है। इसलिए अगर चौरस पेंदे की जरूरत हो, तो उत्तम यह है कि अलग से मजबूत कमचियों को पेंदे में घुसेड दें। ये घुसेडी गई कमचियों को पेंदे के व्यास के रूप में, एक छोर से दूसरे छोर तक, रखना चाहिए।

ऊपर दिये गये विभिन्न तरीके गोलाकार बुनाई में व्यवहृत होते हैं। पेंदे तथा पार्श्व की बुनाईवाली कमचियों को बदल देने से गोलाकार बुनाई ठीक से नहीं हो सकती। बुनाई की कमचियाँ भी नहीं बदली जानी चाहिए। ये बातें आगे के पृष्ठों में बताई गई हैं।

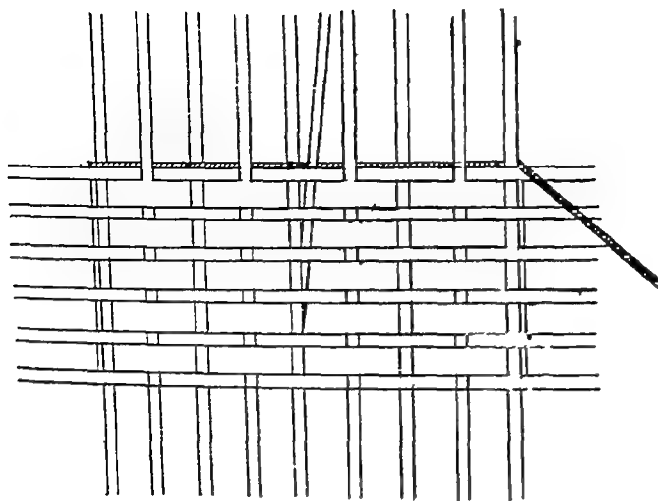
पार्श्व की बुनाई—पार्श्व भाग की बुनाई की कई विधियाँ हैं। फ्रेम तथा बुनाई की विधि के समान ही चौखुटा बुनाई, जालीदार बुनाई, मधुकोष बुनाई अथवा फॉमदार बुनाई की जाती है।

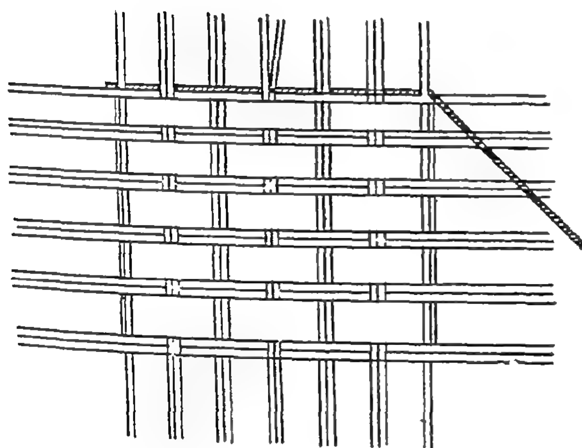
साधारण टोकरियों अथवा पिंजड़ों के बुनने में चौखुटा बुनाई, जालीदार बुनाई और मधुकोष बुनाई व्यवहार में आती है। कभी-कभी छोटी-छोटी चीरी हुई कमचियाँ घुसेडनी पड़ती हैं, इसे अतिरिक्त बुनाई कहते हैं। अतिरिक्त कमचियाँ कुछ वस्तुओं में एक ही आकार की होती हैं।



(चित्र ६३)

अगर गलती से पार्श्व की बुनाई करते समय फ्रेम की कमचियाँ टूट जायँ, तो किनारे को नुकीला बनाकर दूसरी कमची को वहाँ लगाकर बुनते जाना चाहिए। बुनाई की कमचियों को जोड़ने के लिए नई और समाप्त होने-वाली कमची को मिलाकर





(चित्र ९५)

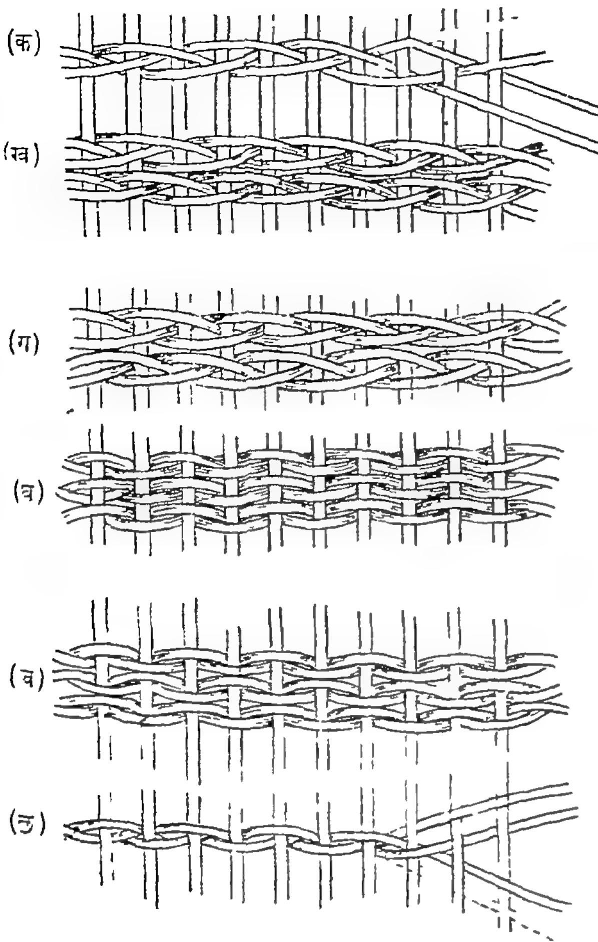
दूसरी विधि मे जब फ्रेम बुनने के योग्य कमचियाॅ एक दूसरे के समानान्तर हो, तो फ्रेम बुननेवाली एक कमची को दो भागो मे बाॅट देना पडता है। इससे फ्रेम बुनने की कमचियाॅ विषम सख्या मे हो जाती हैं। इसे चित्र ९५ के निचले भाग मे देखा जा सकता है।

तीसरी विधि में अगर फ्रेम बुनने की सामग्री मजबूत हो, तो उसे दो भागो में बाँट देना अच्छा है। इससे फ्रेम बुनने की सामग्री विषम सख्या में हो जाती है।

चतुष्कोण पेंदा-बुनाई का एक उदाहरण दूसरे स्थान में बताया गया है। फ्रेम बनने की कमचियो के छोर को दोनों ओर बढा देते हैं और तब बुनाई की कमचियाॅ समानान्तर कर दी जाती हैं। उनके बाद बटे हुए फ्रेम के सामान को बुना जाता है।

चौथी विधि से पेंदे की बुनाई अगर जालीदार बुनाई रही, तो की कमचियो को, जिनसे पेंदा बुना गया है, मतफेर (मेथुन टर्न) कहते हैं। वे कमचियाँ फ्रेम की कमचियों तक बढा दी जाती हैं। उसके बाद फ्रेम की कमचियाँ विषम सख्यावाली [illegible] जाती है।

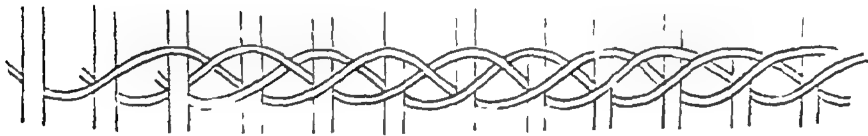
[illegible] की बुनाई का काम, जिसके विषय मे बताया जा चुका है, साधारण पिंजडो [illegible] टोकरियों के लिए बहुतायत रूप में व्यवहृत होता है। कभी-कभी यह बुनाई [illegible] के निर्माण में भी व्यवहृत होती है।



(चित्र ९८)

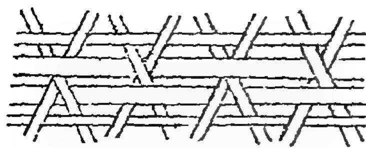
यह चित्र ९९ के निचले भाग (छ) में प्रदर्शित है। चारों बुनाई की कमचियों में सबसे बाईं ओरवाली कमची अन्य तीन कमचियों तथा तीन फ्रेमवाली कमचियों के ऊपर होकर जाती है और उसके बाद फ्रेमवाली एक कमची दूसरी ओर से वक्र रूप में आती है। तीन रस्सानुमा बुनाई में फ्रेमवाली कमची को जोड़ना कठिन होता है।

(६) **तरंगनुमा जालीदार** बुनाई—यह बुनाई फूल रखनेवाली चँगेली की बुनाई के काम में आती है। बुनने की कमचियाँ थोड़ी अधिक चौड़ी रहती हैं और इसकी बुनावट जलतरंग-सी दिखाई पड़ती है। फ्रेम खड़ा करने-वाली कमचियाँ बुनाईवाली



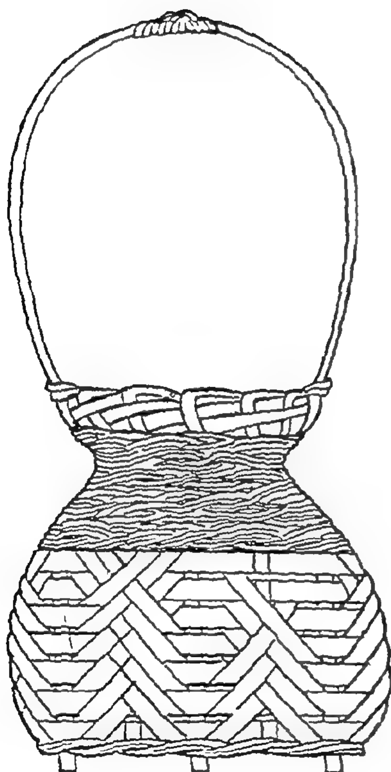
(चित्र १००)

चौड़ी और महीन—दोनों होती हैं। इसे चित्र १०३ में दिखाया गया है। केवल महीन और गोल कमचियाँ व्यवहृत करने पर यह बुनाई नहीं चलेगी।

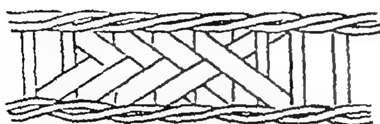


(चित्र १०६)

(१३) अनियमित बुनाई—इस बुनाई मे सर्वप्रथम मधु-कोष बुनाई करनी पडती है और तब चौडी-पतली सभी प्रकार की कमचियाँ लगाई जाती हैं। देखिए चित्र १०४। यह बुनाई बहुत आसान दिखाई पडती है, लेकिन चतुर कारीगर ही इसे बुन सकते हैं।



(१४) **स्तूपाकार फाँस-नुमा बुनाई**—सिरे पर और पेंदे के निकट तीन-चार बार रस्सानुमा बुनाई के बाद बीच मे चौडी और पतली कमचियाँ लगा दी जाती हैं। इसके बाद नीचे और ऊपर पुन रस्सानुमा बुनाई की जाती है। इस बुनाई के लिए चित्र १०५ देखना चाहिए।

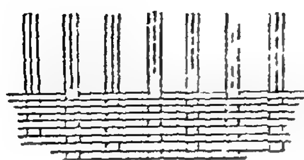


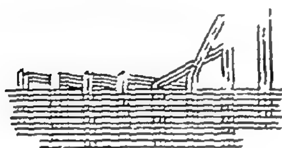
(चित्र १०७)

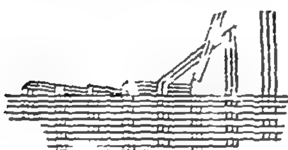
(१५) **टिकठीनुमा बुनाई**—इसमे सर्वप्रथम पेंदे की फूल-दार बुनाई होती है। उसके बाद चौडी और पतली कमचियाँ लगाई जाती हैं। कमचियाँ तिरछी, लम्बी, खडी तथा पडी सभी प्रकार से एक मे दूसरी फँसाई जाती हैं। इसे चित्र १०६ मे दिखाया गया है।

इस बुनाई की ओर भी

घुमावदार बुनाईवाला किनारा अधिकतर व्यवहृत होते हैं। इसे चित्र १०७ में देखना चाहिए। किनारा बनाते समय पार्श्व की बुनाईवाली कमचियों को एक दूसरी कमचियों के साथ फँसा देना पड़ता है।



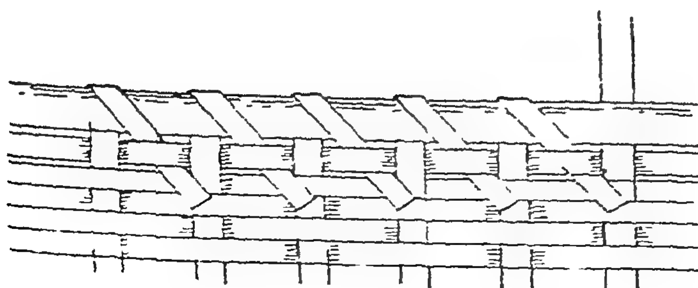






(चित्र ११०)

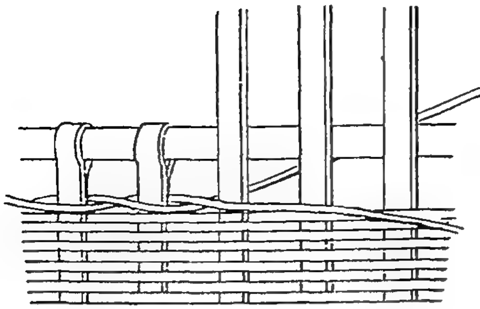
फँसवाली कमचियों को मजबूत ढंग से लगाने के कई तरीके हैं। लेकिन कौन-सी विधि किस वस्तु के लिए सबसे अधिक उपयुक्त है, इसका निश्चय करना बहुत कठिन है। यह सुदक्ष कारीगर के अनुभव और ज्ञान के आधार पर ही अवलम्बित है।

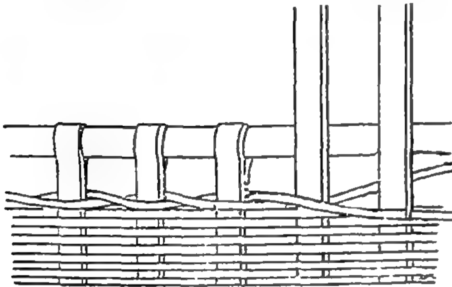


(चित्र १११)

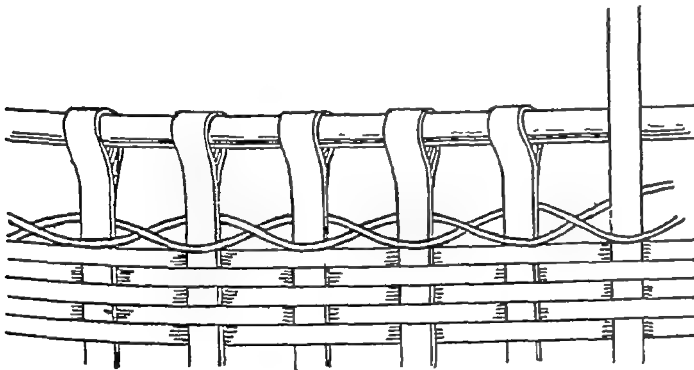
फँसवाली कमचियों को लगाने और वस्तुओं के ऊपरी भाग को पूरा करने की कुछ विधियाँ नीचे दी जाती हैं—

(१) फँसवाली कमचियों को लगाना—किनारे की बुनाई के अन्तिम कार्य को समाप्त-क्रिया या पूर्ण-

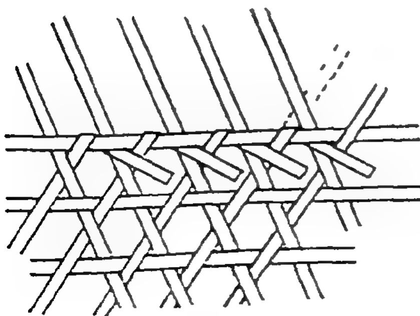


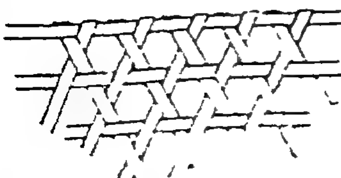


(चित्र ११५)



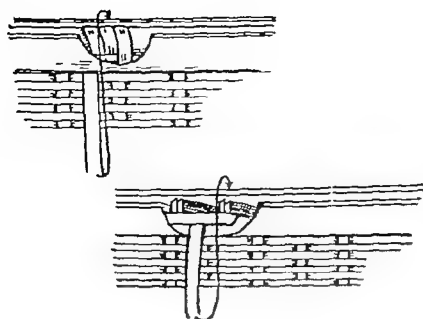
(चित्र ११६)

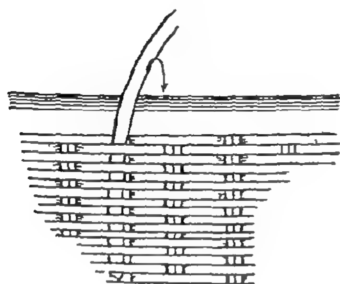




इसके बाद चौथी विधि चित्र ११४ में प्रदर्शित है, जो जालीदार फूल पेंदा बुनाई के लिए तथा घुमावदार किनारे के लिए उपयुक्त होती है। इस विधि से बुनी गई वस्तु भारी वजन सहन कर सकती है, क्योंकि बुनाईवाले किनारे को छोड़ फ्रेमवाली कमचियों और बुनाईवाली कमचियों के साथ जकड़ा रहता है।

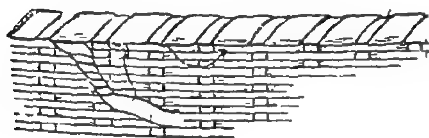
पाँचवीं विधिवाली बुनावट चित्र ११५ में प्रदर्शित है, जो फूलदार और जालीदार पेंदा-बुनाई तथा साधारण घुमावदार पूरण-क्रिया के लिए उपयुक्त होती है। इसके किनारे की कमचियों तथा बुनाई की कमचियों के बीच रिक्त स्थान होता है, जिसमें किनारे की कमचियों को मोड़कर फँसा दिया जाता है। फँसा देने से [illegible] स्थान [illegible]





(चित्र १२५)





घुमाव द्वारा किनारा पूरा करना—चौड़े चीरे हुए बाँस को घुमा-घुमाकर गोलाकार बनाते हुए किनारे को पूरा करते हैं।

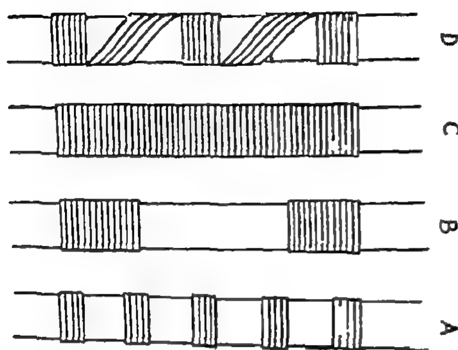
घुमाव के काम के लिए जो बाँस व्यवहृत होता है, उसे मुलायम और पतला होना चाहिए। अनेक बार ऐसे ही भीतर और बाहर घुमाते भी हैं। यह विधि अनेक प्रकार की टोकरियों और पिंजड़ों में व्यवहृत होती है और इस प्रकार की बनी वस्तु मजबूत और टिकाऊ होती है।

जब फ्रेमवाली कमचियाँ समानान्तर ले जाई जाती हैं, तब यह बुनाई बहुत सुन्दर लगती है। कभी-कभी इसे किनारे पर एक इंच नीचे से बुनना पड़ता है। इसे चित्र १२३ के निचले भाग में दिखाया गया है।

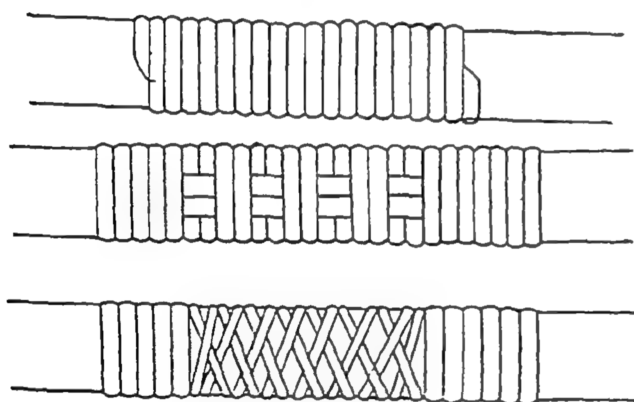
घुमावदार तरीके से किनारे को पूरा करने की विधियाँ—(क) कभी-

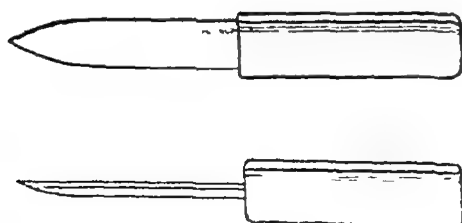
डोरीनुमा बुनाई—यह भी किनारा पूरा करने की एक विधि है और यह विधि फूल रखने की चॅगेलियाँ तथा कलात्मक ढग की टोकरियाँ वनाने के काम मे आती है।

किनारे को मढकर पूरा करने के लिए घुमाव की कर्माचियो का त्वचा-वाला भाग ऊपर की आर रखते हैं। डोरीनुमा मढाई मे मढने की कर्माचियो को घुमाते रहते हैं और त्वचावाला भाग ऊपर की ओर रखते हैं। इसे चित्र १२८ मे दिखाया गया है।



(चित्र १२९)


(चित्र १३०)


(चित्र १३१)

डोरीनुमा बुनाई म निम्नलिखित ढग अपनाते हैं—फ्रेमवाली दो गोल मोटी कर्माचियो को, जो अर्धगोलाकार होती हैं, ले लेते हैं और एक को किनारे के भीतर और दूसरी को वाहर लगाकर मढने-वाली कमची से किनारा मारकर मढ देते हैं।

मढनेवाली कमची की चौडाई, वस्तु के मॅुह अथवा फ्रेमवाली कम-र्चियो की सख्या पर, निर्भर करती है। किनारा मढने के लिए विभिन्न तरीके व्यवहृत होते हें। इसमे सुन्दर-से सुन्दर बुनाई होती है। इसकी प्रत्येक बुनाई मे

लेकिन टोकरी की बुनाई की विधि से बने पिंजडो मे मढनेवाली कमचियो के लिए उपयुक्त रिक्त स्थान रखते हैं। अतः, चित्र १३१ में प्रदर्शित एक विशेष औजार द्वारा 'सूपनुमा पूर्ण-क्रिया' की जाती है। किन्तु, फ्रेमवाली कमचियो को लगाकर यह क्रिया नही होती, जैसा चित्र १३२ मे दिखाया गया है।

जब मढनेवाली कमची का एक छोर लगा रहे, तब किनारे की बुनाई का तरीका (चित्र १३२ मे प्रदर्शित) यह है कि मढनेवाली कमची उस रिक्त स्थान मे प्रवेश कराई जाती है, जो चार जाली फ्रेमवाली कमचियो की बगल मे है और जिसमे फिर यही क्रिया दुहराई जाती है।

मढनेवाली कमची अंगरेजी की सख्या 8 के आकार मे अथवा अँगरेजी अक्षर S के आकार मे चलती है। सूपनुमा पूर्ण-क्रिया सीखने के लिए स्मरण रखना चाहिए कि चार जाल आगे बढकर फिर लौटकर दूसरे जाल तक आना पडता है।

पीपानुमा बुनाई मे चार जाली आगे जाना और फिर दूसरी जाली तक वापस आना नहीं चल सकता। इसलिए किनारे की मढाई दूसरे ढग से की जाती है। इस मढाई के लिए चित्र १३१ मे प्रदर्शित औजार को, कमची-प्रवेश का रास्ता बनाने के लिए, घुसेडते हैं और फिर उसी से होकर मढनेवाली कमची को भी घुसेड देते हैं। उसके बाद औजार को निकालकर दूसरे स्थान मे प्रवेश कराते हैं।

सूपनुमा पूर्ण-क्रिया की महत्त्वपूर्ण बात यह है कि मढनेवाली सामग्री की चौडाई वस्तु के मुँह की चौडाई तथा रिक्त स्थानों की चौडाई के अनुकूल होनी चाहिए।

मढनेवाले सामान की चौडाई से मढने के झुकाव का पता चलता है और ठीक झुकाव होने से वस्तु का किनारा अच्छा उतरता है।

उपर्युक्त वर्णन के आधार पर पिजडे तथा टोकरियो को निम्नलिखित श्रेणियों मे बाँटा जा सकता है—

(१) पीपानुमा पिजडा बुनाई।
(२) वर्गाकार जाल बुनाई।
(३) वर्गाकार पेदा बुनाई।
(४) मधुकोष-जाल बुनाई।
(५) फूल पेदा बुनाई।
(६) जाली बुनाई।
(७) अन्य बुनाइयाँ।

बाँस से बनी वस्तुओं की पूर्ण-क्रिया—

सामान्यतः कलात्मक वस्तुओं को ही इस रूप मे तैयार करते हैं। उक्त तैयारी मे निम्नलिखित बातें महत्त्वपूर्ण हैं—

(क) वस्तु की स्वच्छीकरण-क्रिया—साफ की हुई कमचियों से वस्तु बनाने को [illegible] मे स्वच्छीकरण करते हैं। लेकिन, कभी-कभी बनी वस्तु ही साफ की

(ख) गाढा नाइट्रिक एसिड लगाने पर रग भूरा हो जाता है, पर यदि इसकी शक्ति कम कर दी जाय, तो जल्द ही पीला रग हो जाता है।

औरामिन (Auramın)—दो गैलन पानी में एक ग्राम औरामिन मिलाकर सामग्री को डुबो देने से उसका रग पीला हो जाता है।

बिस्मार्क भूरा—दो गैलन जल में ८ से १० ग्राम विस्मार्क भूरा डालने से लाली लिये हुए भूरा रग हो जाता है। लेकिन, रग की मात्रा बदल देने से भूरे से काला रग हो जाता है।

मिथेल वॉयलेट (Methyl Vıolet)—दो गैलन पानी मे इस रसायन का आठ ग्राम मिलाने से पीले रग से बैंगनी रग हो जाता है।

मालकाइट ग्रीन (Malachıte Green)—दो गैलन जल मे आठ ग्राम मालकाइट मिलाने से बॉस का रग हरा हो जाता है।

विस्मार्क ब्राउन ३५ ग्राम, मालकाइट ग्रीन ८ ग्राम और जल २ गैलन मिलाकर काला रग बनाया जाता है।

विस्मार्क ब्राउन ३५ ग्राम, मिथेल वॉयलेट ८ ग्राम, मालकाइट ग्रीन ४ ग्राम—इन सबको दो गेलन जल में मिलाकर और त्वचा-रहित बॉस की सामग्री को ३० से ४० मिनट तक डुबोकर रखते हैं, जिससे वह उत्तम कोटि के काले रग मे रँग जाती है।

देवदार की जड को जलाकर उसके धुएँ को बॉस की बनी सामग्री में लगाने से सामग्री का रग बढिया काला हो जाता हैं और यह रग बहुत पक्का होता है। भीगे कपडे से पोछ देने पर रग और भी चमकीला हो जाता है।

कारीगरो के लिए कलात्मक वस्तुओ के रँगने की बात सबसे अधिक महत्त्व रखती है। रँगने की प्रक्रिया मे और भी कुछ विधियाँ हैं, जो नीचे दी जाती हैं—

(क) वस्तुओ को सुखा लेना।
(ख) रग से धुएँ के रग मे अथवा भूरे रग मे रँगना।
(ग) सामानो की सतह को पोछ देना और रगीन भागों का गाढा या पतला बनाना।
(घ) वार्निश या जापानी लाह चढाना।
(ङ) वस्तु पर से धूल पोछ देना।
(च) अन्तिम बार की रँगाई (Polısh) करना।

वाँस पर लेप लगा देने के बाद उपर्युक्त सामानों को उसपर बारी-बारी से छिड़क देते हैं और तब रूई से उसे झाड़ देते हैं। ऐसी अवस्था में वाँस के जोड़ों और गिरह-स्थानों के पास जो उजला पाउडर का कुछ अंश रह जाता है, उससे वाँस की सुन्दरता बढ़ जाती है और वह प्राचीन-जैसा लगने लगता है।

छिड़काव की द्वितीय विधि—जब चपड़ा-वार्निश से लेप करते हैं, तब उसे सुखाने के पहले, प्रथम विधि के समान ही, छिड़ककर फिर झाड़ देते हैं।

छिड़कने का काम ठीक से नहीं करने पर वस्तु गन्दी हो जाती है। इसलिए छिड़कने में सावधानी और अनुभव दोनों जरूरी है।

(५) **पॉलिश करना**—सामान्यतः मोम से पॉलिशिंग की जाती है, किन्तु नहीं मिलने पर पाराफिन अथवा मोमबत्ती व्यवहार में लाई जाती है। इस कार्य में कमेलिया तेल (Camellia Oil) व्यवहार किया जाता है।

निम्नलिखित विधियाँ भारत की अतिप्राचीन विधियाँ हैं, लेकिन अँगरेजी शासन में जब विदेश से अनेक आवश्यक वस्तुएँ आने लगीं, तब इन विधियों को लोग भूल बैठे। जापान में अभीतक ये विधियाँ विद्यमान हैं।

एक विधि—यह विधि लकड़ी अथवा वाँस की वस्तुओं के रँगने में व्यवहृत होती है। यह लकड़ी या वाँस की वस्तुओं में ही व्यवहार की जाती है। लकड़ी या वाँस पर गेहूँ के आटे में लेप करके ब्रश से भूरिया तथा पॉलिशिंग पाउडर लगा देते हैं। फिर उसे सुखाकर सैण्ड पेपर से साफ किया जाता है। गिरहों पर सैण्ड पेपर का व्यवहार नहीं करते हैं, जिससे उन स्थानों में यह पाउडर लगा रह जाता है। इसे ठीक से बनाने के लिए पुनः उसी तरह लेप करके सूखने के लिए छोड़ते हैं और फिर सैण्ड पेपर से रगड़कर साफ करते हैं। बाद में कार्बोनिट लेप लगाकर लाल, पीला और तब काला, एक के बाद दूसरा, रंग चढ़ाया जाता है। पुनः पारदर्शक लेप चढ़ाने के लिए महीन सैण्ड पेपर से रगड़ लेने पर पारदर्शक लेप चढ़ाते हैं। फिर, रेपसिड ऑयल लगाकर कपड़े से पोंछते हैं। इस प्रकार रँगाई की कई विधियाँ हैं।

बाँस के सामान (जिसे रगना है) की सख्या के अनुसार रग के घोल की मात्रा निर्भर करती है। लेकिन घोल अधिक ही तैयार करना अच्छा होता है, जिससे समय पर उसका अभाव खटके नही।

उबालने का बरतन लोहे या जस्ते के चदरे का अथवा एनामेल किये हुए लोहे का बना होता है। उनके अभाव मे मिट्टी-तेल का टिन भी व्यवहार किया जा सकता है। जल का तापमान जब ६०° सेंटीग्रेड से अधिक हो जाता है, उसके बाद २० से ३० मिनट तक उबाला जाता है। खास कर काले रग मे एक घटे का समय जरूरी होता है। रग के अनुसार ही उबालने के समय में कभी अधिक समय की जरूरत होती है। इसलिए अभीष्ट रग की सामग्री तैयार हो जाने पर उसे बाहर निकाल लेना चाहिए।

रोटो ऑयल (Roto oil) १ ग्राम को उपयुक्त रग घोल ५०० ग्राम में डालने पर उसका परिणाम उत्तम आयगा।

सामान को रंग लेने के बाद उसे ऐसेटिक (Acetic) साल्युशन से धो देते हैं, ताकि रग बैठ जाय और तब उसे सुखा देते हैं। साधारणत ऐसा नही करने पर भी रग के ठीक रहने में कोई गडबडी नही होती।

पूर्ण-क्रिया —रँग लेने के बाद, अगर बाँस की सामग्री की सतह पर कुछ नुकसान हो गया है, तो उसे पॉलिश करनेवाली महीन बालू से पोछ देना चाहिए। पश्चात् तेल या मोम से पोछ देने पर उसमें चमक आ जाती है।

कुछ नई आविष्कृत रँगने की विधि

उपर्युक्त विधि ही सामान्यत व्यवहार मे आती है, लेकिन बाँस की सतह पर जब कुछ नुकसान है, तो उन नुकसान स्थानो को गहरे रग से रँग देते हैं। खास कर जब उन्हे हल्के रग से रँगा जाता है, तब नुकसान के चिह्न और स्पष्ट हो जाते हैं। इस त्रुटि को दूर करने के लिए उपर्युक्त विधि सर्वोत्तम है और यह बहुतायत से काम में लाई जाती है।

इस विधि में बाँस की सतह पर की पतली परत को, जिसमें मोम भी रहता है, हटा देते हैं। इस परत मे क्लोरोफिल (Chlorophyll) होता है, जिसके कारण उसमे रग ठीक से पकडता है। इस विधि की रूप-रेखा नीचे दी जाती है। फूल बाँस, मकोर और चाभ बाँस में यह विधि व्यवहृत होती है। तेल निकालने मे सूखी प्रणाली तथा भीगी प्रणाली—दोनो प्रणालियाँ काम में लाई जाती हैं। धूप मे सुखा कर साफ किया जाता है।

अल्कली के द्वारा उबालना —पाँच प्रतिशत गाढे कास्टिक सोडा के साथ उबाला जाता है। इसके बाद कडी कूची से रगडा जाता है। इससे बाँस की सतह बहुत ही अच्छी और चिकनी हो जाती है।

अल्कली की शक्ति को क्षीण करने के लिए सामग्री को पतले सल्फ्युरिक एसिड मे डुबोया जाता है, जिससे इसकी शक्ति क्षीण हो जाती है।

धोना—पानी मे डुबोकर एसिड को धो डालते हैं।

काला नं० २—दूसरी विधि से भी बाँस को काले रंग में रँगा जा सकता है। सर्वप्रथम उसे टैनिन एसिड १५ : जल १०० के घोल में १ से २ घंटे तक डुबोये रखते हैं। उसके बाद उसे कैल्सियम ऑक्साइड २ : जल २०० के घोल में डुबो देते हैं। फिर, एसिटिक एसिड में (टी० डब्ल्यू० ४ डिग्री) आधे घंटे तक डुबोते हैं। सब के अन्त में उसे आधे घंटे तक लाग ऊड एक्सट्रैक्ट १० : जल १०० के घोल में उबालते हैं।

गहरा भूरा—बाँस को लॉग ऊड एक्सट्रैक्ट २० : जल २०० के घोल में ४० मिनट तक ६० सेंटीमिटर तापमान पर उबालते हैं, और तब बाहर निकाल लेते हैं। उसके बाद १ प्रतिशत पॉलो क्रॉमिक एसिड पोटासियम के गरम घुलन में करीब २० मिनट तक छोड़ देते हैं। इससे रंग भूरा हो जाता है।

डुबोने के विषय में उपर्युक्त बातें जो बताई गई हैं, वह चाभ बाँस के विषय में हैं। दूसरे प्रकार के बाँसों को उनकी त्वचा के कड़ापन के अनुसार कम या अधिक देर तक डुबोये रखते हैं।

रंगो के अतिरिक्त रासायनिक पदार्थों द्वारा रँगना

सिल्वर नाइट्रेट द्वारा रँगाई—साधारण रंग से की गई रँगाई से यह आरगेनिक सॉल्ट द्वारा की गई रँगाई ज्यादा टिकाऊ होती है, लेकिन इसमें एक यह त्रुटि होती है कि उससे मनचाहा रंग आसानी से नहीं पकड़ता। सिल्वर नाइट्रेट की विधि से हल्का लाल रंग से गाढ़ा भूरा तक का रंग रँगा जा सकता है। बाँस की सतह पर सर्वत्र एक सा रंग पकड़ सके, इसमें भी थोड़ी कठिनाई होती है, लेकिन कारीगर अगर पटु रहा तो रंग सुन्दर आयगा। इस विधि को कार्यान्वित करने के पहले बाँस से तेल पदार्थ बिलकुल निकाल लेते हैं। इसमें सूखी प्रणाली तथा भींगी प्रणाली—दोनों ठीक होती हैं, लेकिन भींगी प्रणाली और अधिक अच्छी होती है। उसके बाद सतह को रामरज की तरह की एक मिट्टी से पोंछ देते हैं और सिलवर बाथ में डुबोकर सुखा देते हैं तथा धूप में फैला देते हैं। इस विधि को तबतक दुहराते रहते हैं, जबतक कि मनचाहा रंग नहीं आ जाता है।

रंग सर्वत्र एक समान हो, इसके लिए पतला सिलवर बाथ इस्तेमाल करते हैं। इसे सतह पर पतला करके चढ़ा देते हैं और इस कार्य को कई बार दुहराते हैं।

सिलवर नाइट्रेट तथा पॉलो क्रॉमिक एसिड पोटासियम से रँगने की विधि—[illegible] ढंग से सिलवर बाथ के बाद सामान को सुखा देते हैं। उसके बाद उनपर पॉलो क्रॉमिक एसिड पोटासियम का घोल लगा देते हैं। कुछ देर तक सूखने के लिए छोड़ [illegible] और फिर पानी से धोकर उसे सुखा देते हैं। अगर रंग बहुत पतला आवे तो इसी [illegible] को बार-बार दुहराना चाहिए। पहले तो सामान लाली लिये भूरा रंग का [illegible], [illegible] बाद धीरे-धीरे वह गाढ़ा भूरा हो जायगा।

इस विधि से जो रंग आता है, वह बहुत सुन्दर होता है और [illegible] रखने की [illegible] [illegible] के लिए यह बहुत उपयुक्त विधि है। लेकिन इस ढंग की रँगाई ज्यादा [illegible] [illegible] और अनुभवी कारीगर की अपेक्षा रखती है।

काला न० २—दूसरी विधि से भी वॉस को काले रग मे रँगा जा सकता है। सर्वप्रथम उसे टेनिन एसिड १५ जल १०० के घोल मे १ से २ घटे तक डुबोये रखते हैं। उसके वाद उसे केल्सियम ऑक्साइड २ जल २०० के घोल मे डुबो देते हैं। फिर, एसिटिक एसिड मे (टी० डब्ल्यू० ४ डिग्री) आधे घटे तक डुबोते हैं। सब के अन्त मे उसे आधे घटे तक लोग ऊड एक्सट्रेक्ट १० जल १०० के घोल मे उबालते हैं।

गहरा भूरा—वाँस को लोग ऊड एक्सट्रेक्ट २० जल २०० के घोल मे ४० मिनट तक ६० सेंटीमिटर तापमान पर उबालते हैं, और तब बाहर निकाल लेते हैं। उसके बाद १ प्रतिशत पॉली क्रॉमिक एसिड पोटासियम के गरम घुलन मे करीब २० मिनट तक छोड देते हैं। इससे रग भूरा हो जाता है।

डुबोने के विषय में उपर्युक्त बातें जो बताई गई हैं, वह चाम वॉस के विषय में हैं। दूसरे प्रकार के वाँसो को उनकी त्वचा के कड़ापन के अनुसार कम या अधिक देर तक डुबोये रखते हैं।

रगो के अतिरिक्त रासायनिक पदार्थो द्वारा रँगना

सिल्वर नाइट्रेट द्वारा रँगाई—साधारण रग से की गई रँगाई से यह आरगेनिक सॉल्ट द्वारा की गई रँगाई ज्यादा टिकाऊ होती है, लेकिन इसमे एक यह त्रुटि होती है कि उससे मनचाहा रग आसानी से नही पकडता। सिल्वर नाइट्रेट की विधि से हल्का लाल रग से गाढा भूरा तक का रग रगा जा सकता है। वॉस की सतह पर सर्वत्र एक-सा रग पकड सके, इसमे भी थोडी कठिनाई होती है, लेकिन कारीगर अगर पटु रहा तो रग सुन्दर आयगा। इस विधि को कार्यान्वित करने के पहले वॉस से तेल पदार्थ बिलकुल निकाल लेते हैं। इसमे सूखी प्रणाली तथा भींगी प्रणाली—दोनो ठीक होती हैं, लेकिन भींगी प्रणाली और अधिक अच्छी होती है। उसके बाद सतह को रामरज की तरह की एक मिट्टी से पोंछ देते हैं और सिलवर बाथ मे डुबोकर सुखा देते हैं तथा धूप मे फैला देते हैं। इस विधि को तबतक दुहराते रहते हैं, जबतक कि मनचाहा रग नहीं आ जाता है।

रग सर्वत्र एक समान हो, इसके लिए पतला सिलवर बाथ इस्तेमाल करते हैं। इसे सतह पर पतला करके चढ़ा देते हैं और इस कार्य को कई बार दुहराते हैं।

सिलवर नाइट्रेट तथा पॉली क्रॉमिक एसिड पोटासियम से रँगने की विधि—उपर्युक्त ढग से सिलवर बाथ के बाद सामान को सुखा देते हैं। उसके बाद उसपर पॉली क्रोमिक एसिड पोटासियम का घोल लगा देते हैं। कुछ देर तक सूखने के लिए छोड देते हैं और फिर पानी से धोकर उसे सुखा देते हैं। अगर रग बहुत पतला आवे तो इस तरीके को बार-बार दुहराना चाहिए। पहले तो सामान लाली लिये भूरा रग का होगा, लेकिन धीरे-धीरे वह गाढा भूरा हो जायगा।

इस विधि से जो रग आता है, वह बहुत सुन्दर होता है और इसे रखने की [illegible] बनाने के लिए यह बहुत उपयुक्त विधि है। लेकिन इस ढग की रँगाई ज्यादा खर्चीली [illegible] और अनुभवी कारीगर की अपेक्षा रखती है।

एमिड लगा रहेगा, वहाँ काला धब्बा आ जायगा और जहाँ लेप लगा होगा, वहा पूर्व का रग रह जायगा।

इस प्रयोग स लाभ यह होता है कि बाँस पर प्राकृतिक ढग का दाग बन जाता है, जिससे बाँस की सुन्दरता बढ जाती है। इससे कलात्मक शिल्प-वस्तुएँ भली भाँति तैयार हो सकती हैं।

रग करने की अनुभूत विधि और अनुपात—मालकाइट ग्रीन १ ग्राम, पानी ४०० ग्राम तथा एमियाटिक एसिड ५ बूँद। इन सब को मिलाकर १०० से १२० सं० तापमान मे २० मिनट तक गरम करें। ४० सं० तापमान पर बाँस को उसमे रख दें और १२० सें० होने पर उसे निकालकर ठडा होने के लिए छोड दें। फिर, ठडे पानी से धो डालें और धूप मे सुखा लें। एमियाटिक एसिड मे यह गुण है कि वह रग को स्थायी बना देता है। उसके बाद उसमें थोडा-सा एसिडम एसिटिकम (Acidum Aceticum) और ग्लेशियल एसिटिक एसिड (Glacial Acetic Acid) करीब १० ग्राम लेकर ठीक से मिलाकर उस बरतन को एक बडे पात्र मे रख दें। जब तापमान ४० सें० हो जाय, तब सामान को उसमे रखें। तापमान को १०० सें० तक पहुँचने की हालत मे २० मिनट तक छोड रखें। पानी और सूख जाय, तो उसमें पुन थोडा पानी दे दें। फिर, सामान को निकाल-कर ठडा होने के लिए छोड दें। उसके बाद सामान को ठडे पानी से धोकर फिर कपडे से पोंछ दें, एव सामान को धूप अथवा विद्युत्-चेम्बर में रख दें। कमरे मे रखने पर तीन दिनो के लिए छोड दें। सामान में जलीय अश १५ प्रतिशत अवश्य रह जाना चाहिए, नही तो इससे अधिक घट जाने पर सामान फट जायगा।

जिस बरतन में रासायनिक पदार्थ रखा जाता है, उसे एसेटिक एसिड में पानी मिलाकर साफ करना चाहिए। इस काम के लिए थिनर और अल्कोहल भी व्यवहार कर सकते हैं। थिनर मे बेजल अल्कोहल, बुटल अल्कोहल नामल (Benzyl Alcohol, Butyl Alcohol normal) तथा इथेल एसिटेट (Ethyl Acetate) मिले होते हैं।

बिस्मार्क (भूरा)—इसकी विधि वही है, जो उपर्युक्त 'दूसरी विधि' नामक शीर्षक मे वर्णित है। बाँस का वजन ३८ ग्राम रहने पर बिस्मार्क ० ३८ ग्राम होना चाहिए। पहले थोडा पानी मिलाकर ठीक से घोल दे। फिर, अधिक पानी मिलाकर बाद मे एसेटिक एसिड १० ग्राम मिलावें। बाद में उसे हीटर पर रखकर उसमें बाँस का ४० सं० तापमान मे रख दे। २० मिनट तक इस हालत में रखने के पश्चात् उसे निकालकर थोडी देर के लिए ठडा होने के लिए छोड देना चाहिए। फिर, पानी से धोकर कपडे से पोंछ देना पडता है।

ओरामिन—बाँस के सामान को रगने की व्यावहारिक विधि वही है, जो विधि कपडे के रगने के काम मे लाई जाती है। सर्वप्रथम बाँस के सामान का वजन ले लेते हैं। अगर बाँस का सामान १०० ग्राम हुआ, तो रासायनिक रग १ ग्राम होगा। उसके बाद ओरामिन (पीला) एक बरतन मे लेकर उसमे थोडा-सा पानी डालकर किसी बाँस या लकडी से उसे पूर्ण रूप से मिला लेना चाहिए। फिर, उसमे सामान को डुबो

	रंग	अनुपात	जल	नमक	तापमान	समय
२.	विस्मार्क ब्राउन	० २ ग्राम सी०सी०	२००	बहुत थोड़ा	६० सें०	५ मिनट
	मालकाइट ग्रीन	०.०६ ,, ,,	,,	,,	,,	,,
३.	डाइरेक्ट काला	० ०२ ,,	,,	,,	,,	,,
४.	मालकाइट ग्रीन · हरा		,,	,,	,,	,,

कमचियाँ रँगने के कुछ मौलिक रगो के अँगरेजी नाम

क्रम-स०	रग		१ ५ प्रतिशत		० २ प्रतिशत
१.	Crystal Violet (क्रिस्टल वायलेट)		,,	,,	,,
२	Crystal Violet ,, ,,	$(\frac{1}{6})$	,,	,,	,,
	Fuchsine (फ्रूकसिन)	$(\frac{5}{6})$			
३.	Fuchsine ,		,,	,,	,
४	Fuchsine ,,	$(\frac{1}{3})$	,,	,,	,,
	Safranine (सेफरेनिन)	$(\frac{2}{3})$			
५	Rhodamine B Conc (रोडेमिन)		,,	,,	,,
६.	Safranine OK (सैफरेनिन)		,,	,,	,,
७	Safranine OK (सैफरेनिन)	$(\frac{1}{2})$			
	Chrysoidine Powder (क्रिस्वायडिन पाउडर)	$(\frac{1}{2})$	,,	,,	,,
८	Safranine OK (सैफरेनिन)	$(\frac{1}{2})$			
	Auramine O (औरामिन)	$(\frac{1}{2})$	,,	,,	,,
९	Crysoidine Powder (क्रिस्वायडिन पाउडर)		,,	,,	,,
१०	Bismark Brown G Conc (विस्मार्क ब्राउन)		,,	,	,,
११	Auramine O (औरामिन)	$(\frac{2}{3})$			
	Bismark Brown G Conc (विस्मार्क ब्राउन)	$(\frac{1}{3})$	,,	,,	,,
१२	Auramine O (औरामिन)	$(\frac{2}{3})$			
	Acridine Orange RO (एक्रिडिन औरेन्ज)	$(\frac{1}{3})$	,,	,,	,,
१३	Auramine O (औरामिन)		,,	,,	,,
१४	Malachite Green (मालकाइट ग्रीन)	$(\frac{1}{20})$			
	Auramine O (औरामिन)	$(\frac{19}{20})$	,,	,,	,,
१५	Malachite Green (मालकाइट ग्रीन)	$(\frac{1}{6})$			
	Auramine O (औरामिन)	$(\frac{5}{6})$	,,	,,	,,
१६	Malachite Green (मालकाइट ग्रीन)	$(\frac{1}{3})$			
	Auramine O (औरामिन)	$(\frac{2}{3})$	,,	,,	,,

क्रम स०	रग		१ प्रतिशत
३८.	Crystal Violet (क्रिस्टल वायलेट)	$(\frac{1}{6})$	
	Fuchsine (फ़ूकसिन)	$(\frac{5}{6})$	”
३९	Crystal Violet (क्रिस्टल वायलेट)		”
४०	Victoria Blue B Conc (विक्टोरिया ब्लू)	$(\frac{1}{3})$	
	Crystal Violet (क्रिस्टल वायलेट)	$(\frac{2}{3})$	”
४१	Victoria Blue B Conc (विक्टोरिया ब्लू)		”
४२	Methylene Blue SGN (मेथीलिन ब्लू)		”
४३	Auramine O (औरामिन)	$(\frac{24}{25})$	
	Malachite Green (मालकाइट ग्रीन)	$(\frac{1}{25})$	”
४४	Auramine O (औरामिन)	$(\frac{17}{18})$	
	Malachite Green (मालकाइट ग्रीन)	$(\frac{1}{18})$	”
४५	Auramine O (ओरामिन)	$(\frac{5}{6})$	
	Malachite Green (मालकाइट ग्रीन)	$(\frac{1}{6})$	”
४६	Auramine O (औरामिन)	$(\frac{2}{3})$	
	Malachite Green (मालकाइट ग्रीन)	$(\frac{1}{3})$	”
४७	” ” ” ”		”
४८	Brilliant Cyanine 6 GX (ब्रिलियेण्ट स्यानिन)		”

बाँस रँगने के कुछ मौलिक एसिड

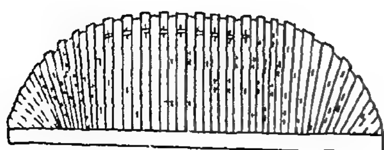
४९	Rocelline NS Conc (रोसेलिन)	१ प्रतिशत
५०	Acid Phlexine P Conc (एसिड फ्लेक्सिन)	”
५१	Eosine G (इओसिन)	’
५२	Silk Scarlet (सिल्क स्कारलेट)	”
५३	Acid Orange II (एसिड आरेञ्ज)	”
५४	Methyle Orange (मेथेल औरेञ्ज)	”
५५	Acid Violet 5 BN (एसिड वायलेट)	”
५६	Soluble Blue (सॉल्युबुल ब्लु)	”
५७	Nigrosine (निग्रोसिन)	”
५८	Acid Blue Black 10 B (एसिड ब्लू ब्लैक)	”
५९	Brilliant Milling Green (ब्रिलियेण्ट मिलिंग ग्रीन)	”
६०	Metanil Yellow (मेटानिल येलो)	”

बाँस रँगने के कुछ प्रत्यक्ष (Direct) रग

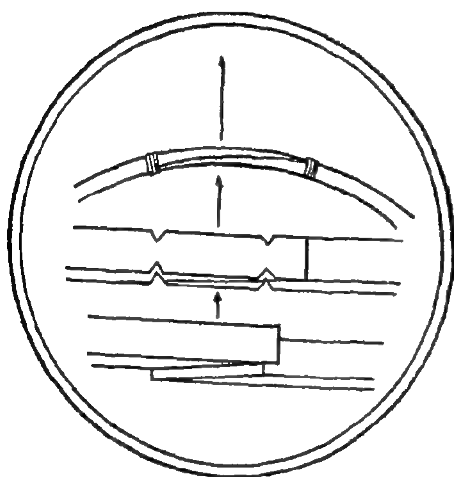
६१	Japanol Brown M (जापानोल ब्राउन)	१ प्रतिशत
६२	Nippon Fast Red BB Conc (निपन फास्ट रेड)	”

बाँस जब लगभग एक साल का हो जाय, तब उसके ऊपर जहाँ-तहाँ नाइट्रिक एसिड अथवा सलफ्युरिक एसिड का छींटा दे देना चाहिए या कपडे अथवा किसी पदार्थ से किसी तरह का कुछ रूप देना चाहिए। उसके दो वर्ष बाद आप देखेंगे कि अपने-आप बाँस के ऊपर विभिन्न प्रकार के सुन्दर अलकार बन गये हैं। ऐसे बाँसो को कलापूर्ण ईप्सित वस्तुओ के बनाने मे व्यवहार करते हैं। बाँस के ऊपर के ऐसे कृत्रिम दाग प्राकृतिक रूप धारण कर सकते हैं। ऐसे बाँसो की बनी सामग्री से कलापूर्ण और सुन्दर से-सुन्दर चीजें तैयार की जा सकती हैं। जैसे—सिगरेट-बक्स, सिगरेट की राख झाडने के पात्र, दियासलाई रखने के पात्र, टेबुल लैम्प-स्टैंड आदि।

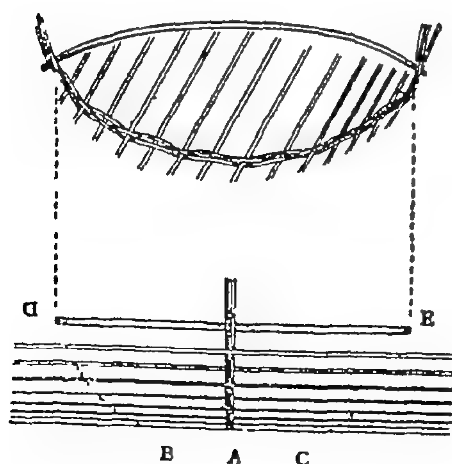
बाँस के ऊपर अलकरण करना और रंग देना—इस विधि के अनुसार बाँस के ऊपर पहले पाराफिन नामक रसायन से अलकार का रूप बना लेते हैं। बाद, हाइड्रोलिक ऑक्साइड एसिड को बाँस पर लगा देते हैं और कुछ क्षण सूखने के लिए छोड देते हैं, पश्चात पाराफिन को हटा लेते हैं। पाराफिन जिस-जिस स्थान पर लगा रहता है, वहाँ अलकार के रूप मे बाँस का स्वाभाविक रग रह जाता है और शेष स्थानो में दूसरा रग हो जाता है। इसमे खूबी यह है कि चित्राकणवाले स्थान पर बाँस का प्राकृतिक रग ही हम पाते हैं।



(चित्र १३६)



(चित्र १३७)



(चित्र १३८)

जालीदार गोल झुरी बालू या पत्थर के छोटे-छोटे टुकड़ों के रखने के लिए व्यवहार मे लाई जाती है। इस कारण यह मजबूत बनाई जाती है। सुन्दर और घनी बुनावट-वाली झुरी चावल या गेहूँ रखने के काम में भी आती है।

झुरी की बुनावट—सर्वप्रथम किनारे का घेरा (रिंग, चित्र १३७) बनाते हैं। फ्रेम के सामान को अलग रख देते हैं और तब बुनाई के सामान से बुनना आरम्भ करते हैं। अनेक स्थानो पर बुनाई के सामान लगाते हैं और किनारे का घेरा पूरा करते हैं। इस बुनाई में बाँस को दो हिस्से में फाड़कर उसे फ्रेम के दोनो ओर लगाकर मढते हैं।

बनाने की विधि इस प्रकार है—

(क) किनारे पर के घेरेवाले सामान से घेरा बनाते हैं। इस घेरे की लम्बाई करीब ३ फुट होती है। दोनो छोरो को मिलाकर बाँध देते हैं और दोनों के जोड पर अँगरेजी अक्षर V की शक्ल में काटते हैं—जैसा चित्र १३८ में प्रदर्शित है। उसके बाद मजबूत तार अथवा डोरी से बाँध देते हैं।

(ख) जब गोल झुरी बनानी हो, तब सर्वप्रथम उसके मध्य भाग से बुनाई शुरू करनी चाहिए। इसे ३ से ५ कमचियों तक बुनकर चित्र १३८ में प्रदर्शित ढग से उसका छोर लगा देना चाहिए। झुरी की गहराई को ठीक से सतुलित कर लेना चाहिए। ऐसी अवस्था में फ्रेम के सामान की संख्या विषम होगी ही।

B, C, D और E भाग वक्र गोलाकार भाग कहलाते है। इस भाग मे व्यवहृत होनेवाली बुनाई की कमचियाँ पदे की ओर से जरा पतली रहती है। करीव दो फुट तक अधिक कसकर बुनते हैं। उसके वाद गोलाकार बुनाई आती है। इस बुनाई के समाप्त हो जाने पर बुनाई के छोटे-छोटे सामान व्यवहृत होते हैं और किनारे के घेरे पर उसे मोडने की जरूरत नही होती।

यह बुनाई चित्र १३६ के प्रथम और द्वितीय भाग मे प्रदर्शित ढग से समाप्त होती है। बुनी हुई झुरी के कटे भाग मे कमची को किनारे के घेरे तक घुसेड देते हैं और झुरी के आधार तक वढा देते हैं।

फ्रेम की कमचियाँ लगाना—पूर्व के पृष्ठ ११० मे दी गई विधि के अनुसार फ्रेम की कमची को बुनाई की कमची में, किनारे के घेरे के घुमाव के बाद, लगा देते हैं। इसी समय फ्रेम की कमची को सतुलित कर झुरी का आकार ठीक कर लेते हैं। पश्चात्, झुरी की बुनाई की कमची के बाकी वचे भागो को काट डालते हैं और गोल झुरी तैयार हो जाती है, लेकिन उसका किनारा पूरा नही हुआ रहता है।

किनारे को पूरा करना—इस झुरी का किनारा खास ढग से, घुमावदार तरीके से बनाया जाता है। यह विधि अन्य तरीको से सरल है और वहुतायत रूप से इसी का व्यवहार किया जाता है। नीचे उसकी विधि बताई जाती है—

चित्र १३८ मे दिखाया गया है कि सिरे का घेरा किनारे के घेरो के बीच में रखा जाता है। घेरो के जोडे हुए भाग को उत्तम बनाना महत्त्वपूर्ण कार्य होता है। यह निम्नलिखित प्रकार से बनाया जाता है—

प्रत्येक घेरे के सिरे को इस प्रकार छीलकर मिला देते हैं कि जिससे वह भाग भी अन्य भागों के समान ही गोलाकार हो जाता है। तब उसे झुरी से सयुक्त कर देते हैं, लेकिन पहले घेरे को मध्य भाग मे लगाना आरम्भ किया जाता है और अन्त मे जोडे हुए भागो को बाँधा जाता है। बाँधते समय इस बात पर ध्यान रखना चाहिए कि वे भाग समान दूरी पर बाँधे जायँ। दो घुमाव बाँधकर तार को मढ देते हैं।

सिरे और किनारे के घेरे एक ही बाँस के बनाये जाते है। घेरो की गिरहो का सिलसिला ठीक रहने से वस्तु देखने मे अच्छी लगती है।

गोलाकार झुरी के लिए सामान—गोलाकार झुरी का आकार किनारे के घेरे के आकार तथा फ्रेम की सामग्री की सख्या पर निर्भर करता है। वस्तु बनाते समय ही, बाँस के भेद मे, आकार मे होनेवाले भेद का पता चल जाता है और उसके अनुसार साधारण कमी वेशी की जाती है।

भात रखने की टोकरी

यह टोकरी झुरी की बुनाई के ढग मे बुनी जाती है। इस टोकरी मे गरमी के दिनो मे भात रखते है और उसे किसी ठण्डे स्थान मे रख देते है, जिससे भात बासी न हो जाय। इसमे रख देने से भात मे हवा लगती रहती है, इसलिए भात ज्यादा देर तक अच्छा

किन्तु, टोकरी के आकार के अनुसार ही उसके पाँव का व्यास होना चाहिए। पाँव के इस बाँस को, जहाँ वह टोकरी के पेंदे से मिलता है, उतनी दूर तक काट डालते हैं और उनके भीतर फाड़ा हुआ बाँस लगाकर टोकरी के पेंदे के साथ घुसेड़ देते हैं। इसे चित्र १४० के निचले भाग में दिखाया गया है। अगर पाँववाले बाँस का वह भाग नही काटा जायगा, तो पेंदे पर पाँव ठीक से नही बैठ सकेगा।

मुट्ठा बनाना—आधा इंच चौड़ा और मुँह की तिगुनी लम्बाईवाला चीरा हुआ बाँस ठीक से छीला जाता है और सिरो पर मोड़कर पतला कर दिया जाता है। उसके बाद इस मुट्ठे को टोकरी के जाल मे घुसेड़ देते हैं और सिरे पर काँटी ठोक देते हैं। बाद, काँटी को भीतर मे मोड़ देते हैं। इस प्रकार, मुट्ठा मजबूत हो जाता है।

ढक्कन—ढक्कन भी फूल-पेंदा, जालीदार अथवा सादा बुनाई से तैयार किया जाता है। किन्तु इस भाग में साधारण जालीदार बुनाई के विषय मे बताया गया है। इस विधि के अनुसार गोल बाँस, जिसकी लम्बाई टोकरी के व्यास से थोड़ी-सी अधिक होती है और चौडाई १/८ इंच से ३/१६ इंच तक होती है, ५०, ६० भागो में विभक्त कर दिया जाता है। इन भागो को ४ से ५ भागो में, पूरी लम्बाई मे, बुन लिया जाता है। ढक्कन के सिरे पर १/४ इंच से ३/८ इंच चौड़े बाँस व्यवहृत होते हैं।

चावल धोनेवाली टोकरी

इस टोकरी का व्यवहार धोये हुए चावल से पानी को निकालने में होता है। इसकी बनावट सिवा मुँह को छोड़कर अन्य गोलाकार टोकरियो के समान ही होती है।

बाँस की कमचियों की भिन्नता पर इस टोकरी की भिन्नता भी निर्भर करती है। यह चाभ बाँस और दूसरे प्रकार के बाँसो की भी बनाई जाती है। इन भिन्न प्रकार के बाँसो से बननेवाली टोकरियो की बनावट मे बहुत थोड़ा फर्क होता है।

चाभ बाँस की टोकरी—इसका मुँह फ्रेमवाली कमची लगाने की विधि के समान ही बनाया जाता है, जो पहले बताया जा चुका है। इसका किनारा मढ़कर पूरा किया जाता है। इसकी बनावट की कुछ आवश्यक ज्ञातव्य बातें नीचे दी जाती हैं—

(क) मुँह की तरफ की बुनाई खत्म हो जाने पर अन्त के बाँस की कमची मुँह पर रख देते हैं और सिरे को मोड़कर बुनावट मे घुसेड़कर फ्रेमवाली कमची लगाते हैं। अन्त में किनारा बनाने की कमची से किनारा तैयार किया जाता है।

(ख) इसका दूसरा पार्श्व भी गोल टोकरी के समान ही होता है।

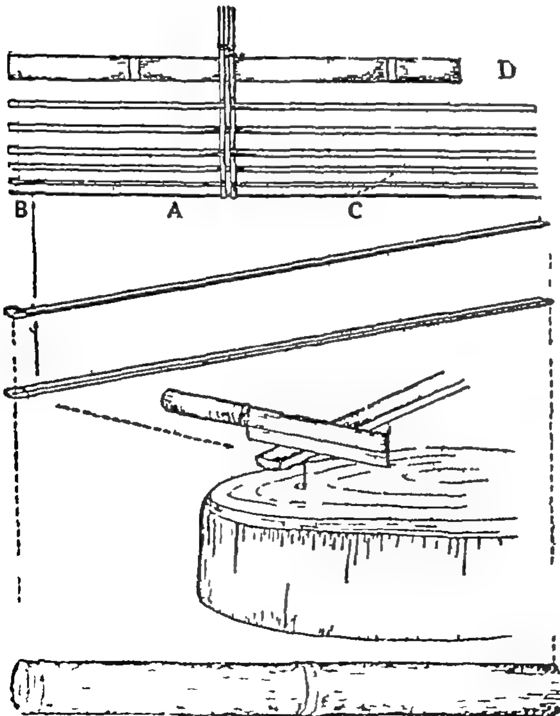
(ग) किनारा बनाने का काम मढ़कर पूरा करते हैं।

चाभ बाँस की बनी सुपलियाँ—चावल रखनेवाली सुपली देखने मे बहुत सुन्दर तथा व्यवहार मे बहुत ही सुविधाजनक होती है। इसके बनाने मे चाभ बाँस का व्यवहार होता है। सिर्फ किनारे का घेरा मुलायम बाँस का बनाया जाता है। ४ या ५ सुपलियाँ एक सेट में लगा दी जाती हैं। किनारा वेणी के रूप मे बुनकर पूरा किया जाता है।

फ्रेम की कमची को मोडना—झुरी को उसके मुँह की ओर से बुनते हैं। सभी फ्रेमवाली कमचियो को मोडकर दोनों भागो को एक दूसरे के समानान्तर रूप में बना लेते हैं, जैसा चित्र १४१ में दिखाया गया है। फ्रेम की कमचियों का त्वचा-वाला भाग बाहर की ओर रखकर मोडते हैं। यह भी इसी चित्र के नीचे अँगरेजी अक्षर एक्स X चिह्नित भाग में दिखाया गया है। इसकी मुडाई भी इसी चित्र मे प्रदर्शित ढग से की जाती है। मोडने का स्थान, नाखून से चिह्न देकर, निश्चित कर लिया जाता है।

प्रथम बुनाई : जालीदार बुनाई को बढ़ाना—ज्यादा सख्या में फ्रेम की कमचियो को ले लेते हैं और बुनाई की कमचियों से ऊपर-नीचे लगा-लगाकर बुनाई करते जाते हैं। मुँह पर फ्रेम की कमचियो को गोलाकार मढने के लिए मोडते हैं और पुन. मुँह पर ही लौटा लाते हैं। उसके वाद उसको केन्द्र की ओर बुनते हैं। बुनते समय फ्रेम की कमचियों को गोल आकृति बनाने के लिए जोडते भी हैं।

फ्रेम की कमचियों को जोडने का तरीका यह है कि छोटी तथा वडी प्रत्येक १५ के लिए क्रमशः ३ तथा ४ फ्रेमवाली कमचियाँ वढाते हैं।



(चि। १४२)

फ्रेमवाली कमचियो के मढते समय उसका त्वचावाला भाग भीतर की ओर रखते हैं और बुनाई की कमचियों का त्वचावाला भाग बाहर की ओर। किनारे के घेरे को घुमाते हुए बुनाई की कमचियो से बुना जाता है, लेकिन प्रत्येक ५ से १० बुनाई पर एक घुमाव देना अधिक अच्छा होता है। सिर्फ घुमावदार बुननेवाली कमची किनारे के घेरे मे नही लगाई जाती है।

केन्द्र — फ्रेमवाली कमचियो को लगाने तथा गोलाकार मढने की विधि गोलाकार झुरी के ही समान होती है। सबसे निकट के बढे हुए जाल के दो को छोड सभी फ्रेमवाली कमचियाँ

१/८ इच चौडी हों, तब बुनाई की कमचियो की चौडाई उसका ६/८वाँ भाग होती है। वडे सूपों में उसी अनुपात से कमचियो की चौडाई वढाते चलते हैं।

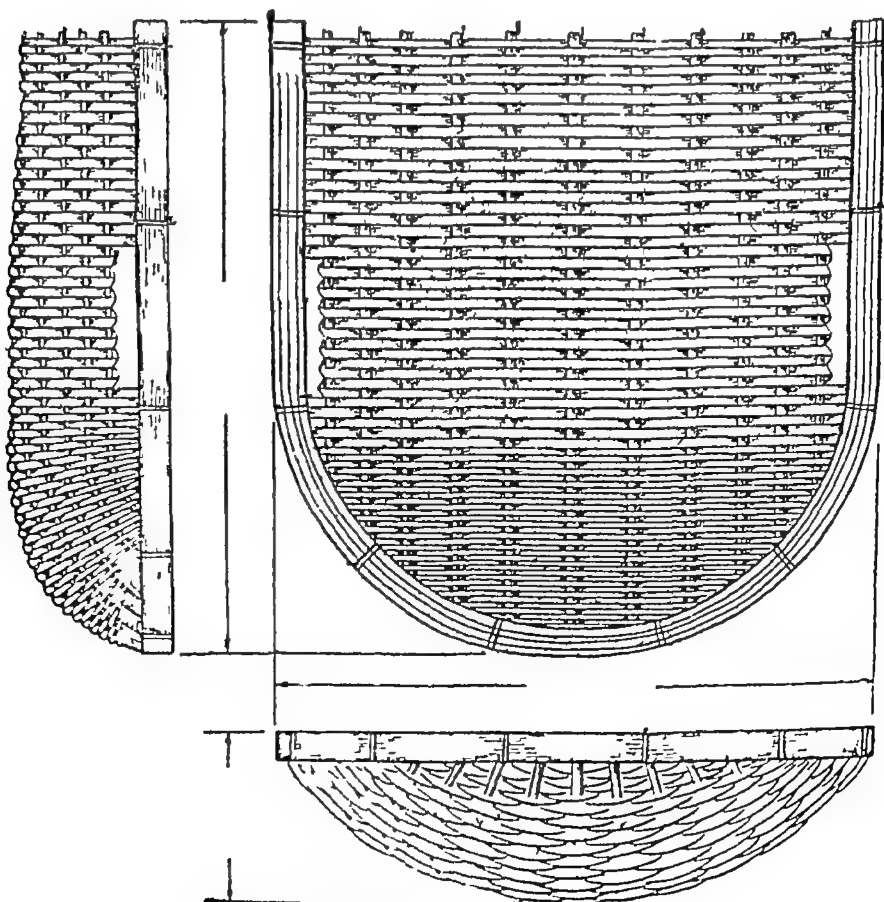
अनाज फटकने का सूप

यह सूप मोटे और रुखडे तरीके से बनाया गया होता है। इसका ऐसा नाम पडने का कारण यह है कि इससे धान, गेहूँ, जई आदि अन्नों को फटकने का काम लेते हैं।

बनावट—(क) आरभ में दोनो ओर के फ्रेम की सामग्री बॉस के धड के भाग की बनी होती है। पीठ पर फ्रेम की जो सामग्री लगाई जाती है, वह त्वचा की ओर से होती है। इसके बुननेवाली सामग्री की पीठ ऊपर रहती है। प्रत्येक १० बुनाई पर दो फ्रेमवाली कमची वढाई जाती है।

(ख) घेरा देने के लिए आधी चौडाईवाली बुनने की सामग्री व्यवहृत होती है, जिसका त्वचावाला भाग भीतर की ओर रहता है।

(ग) सूप का किनारा, भाथीनुमा पूर्ण-क्रिया बुनाई के ढग से तैयार किया जाता है।



(चित्र १८३)

टोकरी को पकडने के लिए काफी स्थान चाहिए, अन्यथा हाथ जख्मी हो जा सकता है। चूँकि, वालूवाली टोकरी भारी सामान को एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जाने के काम मे आती है, इसलिए बुनाई की सामग्री किनारे के घेरे पर घुमा दी जाती है। घुमाते समय कमचियो को ऐठना चाहिए, जिससे उसका त्वचावाला भाग सदा वाहर रहे और घेरे पर एक ही ऊँचाई का घुमाव हो।

पेंदे पर बुनाईवाली सामग्री मे जोड नही होना चाहिए। उसको किनारे तक पहुँचाने का प्रयत्न करना चाहिए। बुनाईवाली दूसरी कमचियों को दूसरी ओर से बुनना चाहिए।

गोलाकार बनाने की प्रणाली—अन्य टोकरियो के सदृश ही इसमें भी फ्रेम की सामग्री को सबसे पहले लगाते हैं। फ्रेम के बने हुए भाग को काट देने पर वालू रखने की टोकरी तैयार हो जाती है। सिर्फ उसका किनारा ही अन्तिम रूप मे तैयार करना वाकी रह जाता है।

किनारे की पूर्ण-क्रिया—गोलाकार टोकरी या चावल धोने की टोकरी के समान ही इसके किनारे को भी कमचियो को कई भागों मे चीरकर तथा उन्हें फिर एक साथ मिलाकर वेणी-गुम्फन-बुनाई की प्रक्रिया से पूरा करते हैं।

वर्गाकार जालीदार बुनाई द्वारा बाँस के काम

इस बुनाई का वह ढग है, जिसमें बुनाई की सामग्री से वर्गाकार बुनाई करते हैं। इसके फ्रेम की सामग्री तथा इस ढग से वनी वस्तुओ को जालीदार टोकरी कहते हैं।

ऐसी बुनाई, जिसमे बडे-बडे वर्गाकार जालीदार छेद रहते हैं, उसे फ्रेम-बुनाई और छोटी-छोटी कमचियों से वने छोटे रिक्त स्थानो की घनी बुनाई कहते हैं।

इस वर्गाकार जालीदार बुनाई से तैयार वस्तुओ को, तैयार करने की विधि के अनुसार, तीन भागों मे बाँट सकते हैं।

(१) केवल पेंदे में वर्गाकार बुनाई हो।

(२) वर्गाकार जालीदार बुनाई से वर्गाकार या आयताकार वस्तुएँ वनाई जायँ। जैसे—पुस्तक रखने की टोकरी, कपडा रखने की टोकरी आदि।

(३) सभी भाग इसी बुनाई से तैयार किये गये हो।

वर्गाकार जालीदार बुनाई द्वारा वनी टोकरियो के आकार फ्रेमवाली कमचियो की लम्बाई तथा सख्या द्वारा निश्चित किये जाते हैं। फ्रेम की कमचियो की सख्या निम्नाकित होती है—

(१) विषम सख्या मे।

(२) [illegible] सख्या मे, कभी कभी विषम सख्या मे।

(३) निश्चित रूप से ही सम सख्या मे।

भाग किनारे अथवा पार्श्व की गोल बुनाई मे नही आवे। फ्रेम बुनने की सामग्री एक दूसरे से बराबर दूरी पर रहें और उनके त्वचावाले भाग ऊपर हो।

जब पेंदा बुनने का काम समाप्त हो जाय, तब उसकी कमचियो को ऊपर उठा दिया जाता है। फिर, बुनाई की कमचियो से उठे हुए भाग में साधारण बुनाई करते हैं। ऐसी अवस्था में बुनाईवाली कमचियो के त्वचावाले भाग को ऊपर करके रखते हैं। जब पेंदे का काम और उठे हुए ऊपरी भाग की बुनाई का काम समाप्त हो जाय, तब मुँह के किनारेवाले भाग को वेणी-गुम्फन-प्रक्रिया से बुनकर समाप्त कर दिया जाता है।

गोलाकार बुनाई—गोलाकार बुनाई का भी ढग वही है, जो पहले बताया जा चुका है, अर्थात् फ्रेमवाली कमचियों को कोने पर थोडा मोडना चाहिए। अस्थायी रूप से और भी बाँस को, व्यास के रूप में, लगाकर पेंदे को चौरस बनाये रखना चाहिए। पेंदे को खाली रखना और अच्छा है।

उसके बाद टोकरी को घुटने पर लेकर फ्रेमवाली कमचियो को बाँये हाथ से मोडना चाहिए। बुनाईवाली कमची को ४ से ५ घुमाव तक बुनना चाहिए। उससे गोलाकार मोड पूरा हो जाता है।

ऐसा करते समय फ्रेमवाली कमचियों की दूरी समान ही होनी चाहिए। उसके बाद कोनो पर फ्रेम की कमचियो को एक-दूसरे के निकट लाकर केन्द्र में चौडा बना देते हैं। बुनाईवाली कमची के छोर को फ्रेम की चार कमचियो के बीच लगा देना चाहिए।

पार्श्व-बुनाई—पार्श्व-बुनाई गोलाकार बुनाई को जारी रखना मात्र है। इसलिए इस बुनाई के केवल बगल के भाग ही दिखाई पडते हैं। इसमे बुनाई की कमचियो की चोडाई अधिक हो सकती है और बीच में चौडी कमची से करीब तीन बार मढ देते हैं। अगर यह कमची रँगी हुई हो, तो और अच्छा।

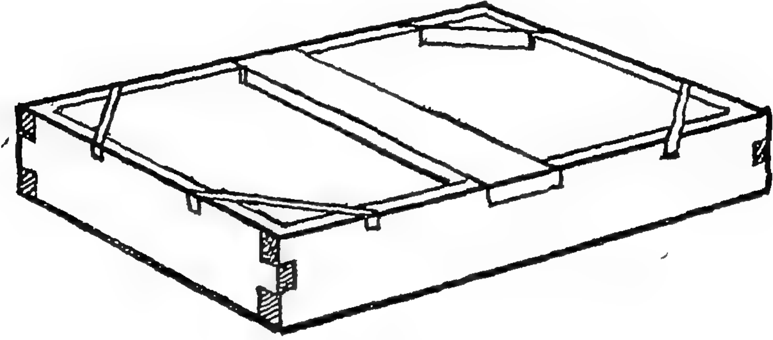
फ्रेम की कमचियों का लगाना—फ्रेम की कमचियो के लगाने के सम्बन्ध में पहले पृष्ठ ११८ की दूसरी या तीसरी विधि मे जो तरीका बताया गया है, वही यहाँ भी है।

किनारे को पूरा करना—कमचियों को कई भागो में चीरकर तथा उन्हें एक साथ मिलाकर वेणी-गुम्फन-प्रक्रिया की बुनाई मे पूरा किया जाता है। दोनो विधियाँ बताई जा चुकी हैं। इसके लिए पृष्ठ १२३ पढना चाहिए।

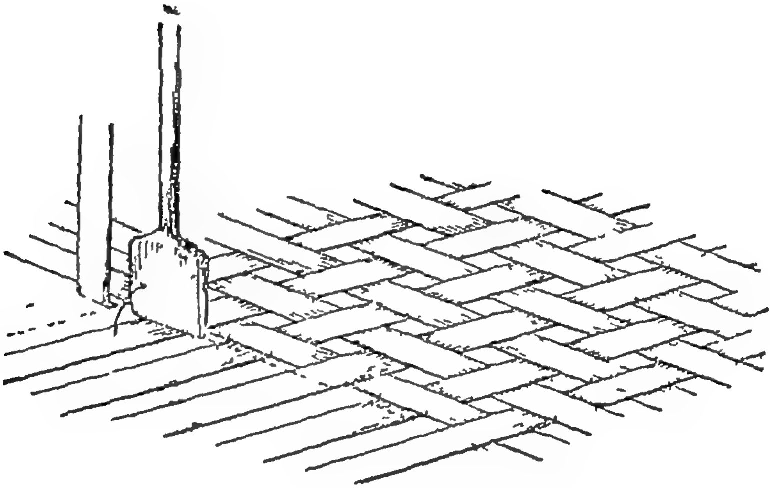
किनारे को वेणी-गुम्फन-बुनाई से पूरा करने की विधि में भीतर तथा बाहर दोनों ओर से—किनारे के बाँस लगाते हैं और तब किनारा मढनेवाली कमची से घुमावदार ढग से दो बार मढकर पूरा करते हैं।

पाँव लगाना—कभी-कभी चलनी में, पानी के बहाव की सुविधा के लिए, कोने पर पाँव लगाये जाते हैं। पाँव लगाने की विधि इस प्रकार है—जैसा आगे चित्र १५२ में

वाहरी किनारे की कमची प्रत्येक कोने पर १/८ इच अधिक लम्वी होनी चाहिए और पेटी के वाहरी किनारे की कमचियाँ कोनों पर १/१६ इच लम्वी होनी चाहिए। इसी तरह भीतरी किनारे की कमचियाँ कोनों पर १/८ इच छोटी रखनी चाहिए।

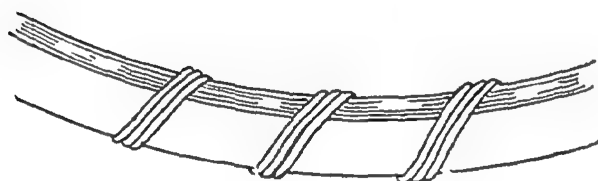


(चित्र १४५)

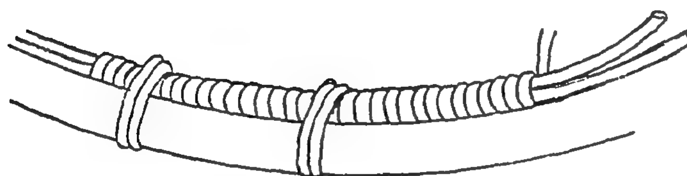


सावधानी बरतनी चाहिए कि अत्यधिक ताप मोड के स्थान को जला नही दे, क्योंकि बुनने की कमचियाँ बहुत पतली होती हैं। पहले बतलाई गई विधि के अनुसार ही ताप के द्वारा मुडाई होनी चाहिए।

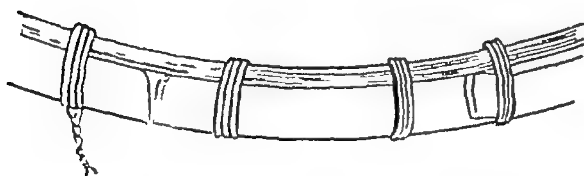
पार्श्व-बुनाई—जब ताप द्वारा मोडने का काम खत्म हो जाय, तब साँचे की सहायता से पेटी के पार्श्व-भाग की बुनाई करनी चाहिए। चित्र १४७ केवल साँचे का चित्र है। चित्र १४८ में दिखाया गया है कि पेंदे की बुनाई के बाद किस तरह साँचे के सहारे टोकरी मे मोड दिया जाता है। इस विधि मे नुकीले कोने बनाने के लिए चीरी हुई बहुत-ही पतली कमचियो का व्यवहार करना चाहिए। कमचियाँ यदि मोटी हो, तो कोना बनाते समय मोड़नेवाले स्थान पर वे टूट जाती हैं।



(चित्र १४९)



(चित्र १५०)



(चित्र १५१)

फ्रेम की कमचियों को मोडना—किनारे को पतला बनाने से पेटी सुन्दर होती है। चित्र ११२ में प्रदर्शित ढग से किनारे की फ्रेमवाली कमचियो को एक दूसरे के किनारे मोडकर पूरा करते हैं। यदि मोड नही देना है, तो फ्रेम की कमचियों को किनारे पर साट देते हैं, ताकि किनारा अलग न होने पावे।

किनारे को पूरा करना—इस काम मे लहरदार गुम्फनवाली बुनाई की जाती है। इसकी बनाई चित्र १४६

सावधानी बरती जानी चाहिए कि पेंदे का किनारा, पेंदा-बुनाई के किनारे से छोटा हो और पेंदा-बुनाई के किनारो के केन्द्र पेदे के किनारे हो। पेदे की बुनाई के केन्द्रो के फ्रेम के सामान एक दूसरे को पार करके बुने जाते हैं और तब किनारा बुना जाता है। ऐसी अवस्था में फ्रेम के सामानो की सख्या सम होनी चाहिए।

चूँकि, पेंदा वर्गाकार होता है और किनारा गोल, इसलिए वर्गाकार बुनाईवाली टोकरियाँ छोटे-बडे अनेक आकारो की तथा सस्ती-मँहगी दामो की बनाई जाती हैं।

साधारण वर्गाकार टोकरियाँ गोबरछत्ते का एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने के काम में व्यवहृत होती हैं और इन टोकरियो के बनाने मे यह काम मूलरूप में करना होता है, इसलिए पहले वर्गाकार टोकरियो को बनाने की विधि सीखनी चाहिए।

बाँस का चुनाव—यह टोकरी ८ इच व्यासवाले बाँस से तैयार की जाती है। कारीगर लोग अधिकतर इसके लिए 'चाभ' की एक खास किस्म पसन्द करते हैं, क्योंकि यह बाँस अनेक भागों में चीरा जा सकता है।

पेंदे की बुनाई—लम्बाई तथा चौडाई के १४ फ्रेमवाले सामानों को एक फुट वर्गाकार बुन लेते हैं। केन्द्र के दो सामान और दोनों ओर के सामान, त्वचा की ओर से लगाये रहते हैं। इन सामानो से एक खास किस्म की बुनाई की जाती है।

फ्रेम के सामान का त्वचावाला भाग बाहर की ओर होना चाहिए। इन सामानों के बीच में रिक्त स्थान होना जरूरी है। दोनों ओर के फ्रेम के सामानों के केन्द्र में गाँठें नही होनी चाहिए, अन्यथा वस्तु गोलाकार नही होगी।

गोलाकार बनाने की तैयारी—गोलाकार बनानेवाले भाग को हाथ से थोडा-सा मोडने का इशारा-भर कर देना चाहिए। एक ओर केन्द्र से दूसरी ओर के केन्द्र तक पेंदे का किनारा होता है। इस लकीर पर सामान को धीरे-धीरे मोड़ना चाहिए और तब सामान को गोलाकार बनाने के लिए मुलायम कर लेना चाहिए। इस तरीके से यह काम बहुत सुगम हो जाता है।

मोडने का काम निम्नलिखित प्रकार से होना चाहिए—तख्ते को पेंदे के बल रखकर उसे पाँव से दबा देना चाहिए और तब मोडना चाहिए।

पार्श्व-बुनाई—घुटने पर रखकर, फ्रेम के सामान को मोडते हुए टोकरी बुनी जाती है, अर्थात् सामान को छाती मे सटा लेते हैं और दोनों हाथों से फ्रेम के सामान को पकडकर अँगुलियों से बुनते हैं।

इस प्रकार की बुनाई मे एक महत्त्व की बात यह है कि बाँह को ढीला नही रखना चाहिए और पेंदे का कोना उत्तम ढग से बनाने का प्रयत्न करना चाहिए। इन्ही भागों से बुनाई को सिलसिले के साथ ठीक कर बुनना चाहिए। टोकरी की बुनाई में यही गोलाकार बुनाइ सबसे अधिक कठिन होती है। एक ओर की बुनाई पूरी हो जाने पर दूसरी ओर की बुनाई करनी चाहिए।

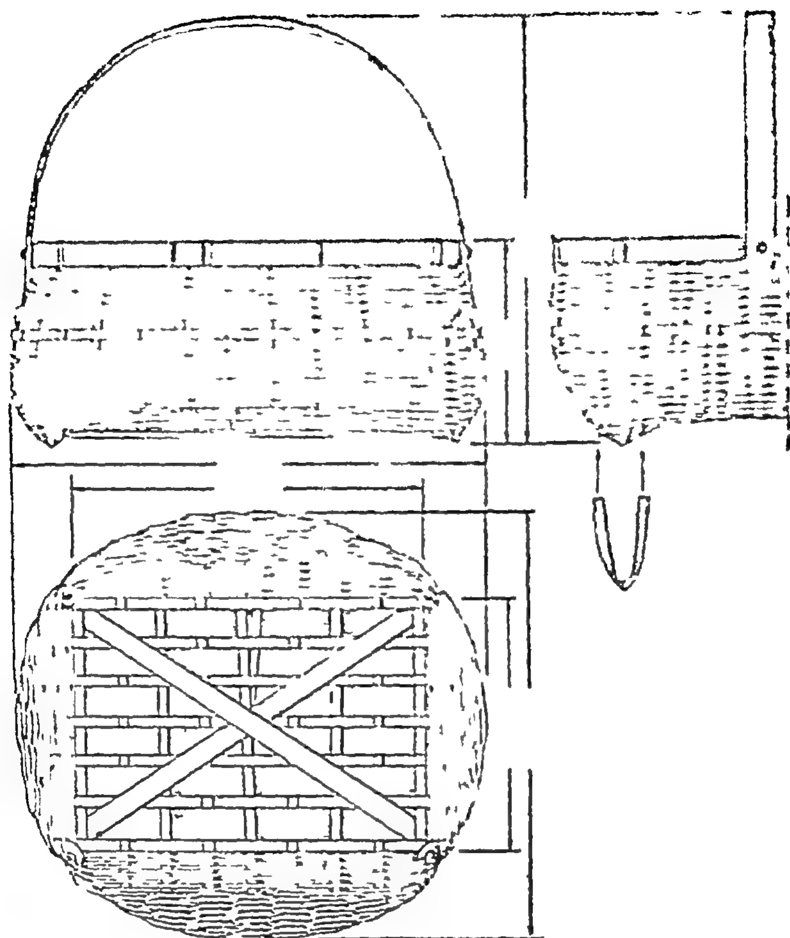
पेंदे की बुनाई—चित्र १५३ का दाहिना भाग—केन्द्र से तीना और दो गाँठोवाले सामान से ८ बुनाई बुनकर उसके बाद एक गाँठवाली कमानियों से इसे बुनना चाहिए।

गोलाकार—ऊपर बुनाई की जो प्रक्रिया दी गई है, वही यहाँ भी व्यवहृत होती है।

पार्श्व-बुनाई—पार्श्व-बुनाई मे, पाँवो को लगाने के लिए कोनो पर बाहरी तीन बुनाई के ऊपर, फ्रेम बनानेवाले सामान को बुनते हैं। अन्य भागो की बुनाई वर्गाकार बुनाई की टोकरी के समान ही होती है और किनारे को वेणी-गुम्फन बुनाई विधि से पूरा करते हैं।

पाँव—२/३ इन्च से १ इन्च व्यासवाले गोल गिरहदार बाँस को छोटी-छोटी गुल्ली के रूप में काटकर उन्हें टोकरी के रिक्त स्थानो मे—जो तीसरा भाग बनाते समय बनाये जाते हैं—किनारे तक घुसेड देते हैं। उसके बाद किनारे पर छोटे-छोटे छेद बनाकर उन्हें तार से मढकर काम पूरा कर देते हैं।

ऊपर से लगाये गये पतले बाँस—जैसा १५३ की बाईं ओर के चित्र के निचले भाग में प्रदर्शित किया गया है, पतले फाडे बाँस को पेंदे मे अलग से लगाना चाहिए। ऐसा करने से पेंदा कडा बना रहता है।



(चित्र १५५)

कभी-कभी किनारा वेणी-गुम्फन-बुनाई के ढग से या 'घिरावदार' ढग से पूरा किया जाता है। किन्तु, इसमें खास किनारे बनानेवाले सामान व्यवहृत नही किये जाते। इसका किनारा फ्रेम की कमचियो से ही बनाया जाता है।

गोलाकार चँगेली (खाद्य रखने की टोकरी)

चित्र १५५ में प्रदर्शित हाथ में टाँगकर ले जानेवाली चँगेली को गोलाकार टोकरी कहते हैं, क्योंकि इस टोकरी की बगल गोल होती है। यह टोकरी अडे, सब्जी, फल आदि रखने में व्यवहृत होती है। इसके बनाने में कई तरह की बुनाइयो से काम लिया जाता है।

बुनावट—इसके निचले भाग के पेंदे की बुनाई, चित्र १५४ में प्रदर्शित ढग से, त्वचा-भाग को ऊपर रखकर, होनी चाहिए। एक ही बुनाई की कमची से बुनने के लिए फ्रेम की कमचियो की सख्या विषम होनी चाहिए। इसलिए या तो फ्रेम की कमचियो मे एक

मछली रखने की टोकरी न० १

चित्र १५६ में मछली रखने की टोकरी दिखाई गई है। इसके बड़े मुँह पर सूत का बना जाल लगाते हैं। कभी कभी मछुए के लाभ के ख्याल से टोकरी का मुँह छोटा भी बनाया जाता है। इसका किनारा जालीदार बुनाव के द्वारा पूरा किया जाता है। कभी-कभी भाथीनुमा बुनाई के द्वारा भी इसके किनारे को पूरा करते हैं। इसके प्रत्येक अंग की बुनाई के लिए निम्नलिखित तरीके अपनाये जाते हैं—

पेंदे की बुनाई—इसके लिए फ्रेम की कमचियों की संख्या विषम होनी चाहिए।

गोलाकार बनाना—तीन बार बुनने के बाद फ्रेम बनानेवाली कमचियों को मोड़ना चाहिए। अगर पेंदे का व्यास १५/१८ इंच है, तो इसके लिए ३/४ इंच पदेवाले बाँस का व्यवहार करना चाहिए। पेंदे से करीब ४-५ घर बुनकर तब पार्श्व में छोटी बुनाई करते हैं।

फ्रेम की कमचियों को लगाना—इस काम में भीतरी मोड़ या बाहरी मोड़, जो भी हो, दोनों तरीके ही अच्छे होते हैं।

किनारे को पूरा करना—वेणी-गुम्फन-बुनाई के द्वारा किनारे को बुनकर, बेत से कई स्थानों पर उसे बाँधकर, पूरा करते हैं।

मछली रखने की टोकरी न० २

इसमें पूर्व-प्रदर्शित मछली रखने की टोकरी से थोड़ी भिन्नता होती है। इसके भी अन्य भाग ऊपर के समान ही हैं। इसमें केवल इतना ही भेद है कि इस टोकरी का गला पतला होता है, किन्तु मुँह गले से चौड़ा। और, सब बुनाई एक-सी होती है।

पेंदे की बुनाई—फ्रेम की कमचियों की संख्या विषम बना लेनी चाहिए।

गोलाकार पार्श्व-बुनाई—तीन से चार घर चौड़ा बुनकर उसके बाद फ्रेम की कमचियों को मोड़ते हैं। गोलाकार बनाने के लिए बुनाई की पतली कमचियाँ व्यवहार करते हैं और मजबूती से बुनते हैं। आर्ट पेपर पर छपे फलक ३ वाले चित्र में प्रदर्शित ढंग से

पार्श्व-बुनाई—पेंदे से १ ८ इंच तक सीधा बुनना चाहिए। उसके बाद फ्रेम की कमचियों को भीतर की ओर मोड़ने का प्रयत्न करते हुए मजबूती से कसा हुआ बुनना चाहिए, जिससे उसका मुँह छोटा हो। छोटे मुँहवाली टोकरी ज्यादा अच्छी लगती है।

फ्रेम की कमचियाँ लगाना तथा किनारे को पूरा करना—फ्रेम की कमचियों को बाहरी मोट की विधि से बाँधना चाहिए और किनारे को वेणी-गुम्फन प्रणाली से पूरा करना चाहिए। इसकी विधि पूर्व भाग के बुनाई-प्रकरण में बतलाई जा चुकी है।

बाहर से बाँस लगाना—भीतर की ओर से काटकर तथा ताप देकर कोने को मोड़ना चाहिए। दोनों छोरों को नुकीला बनाकर किनारे में घुसा देना चाहिए।

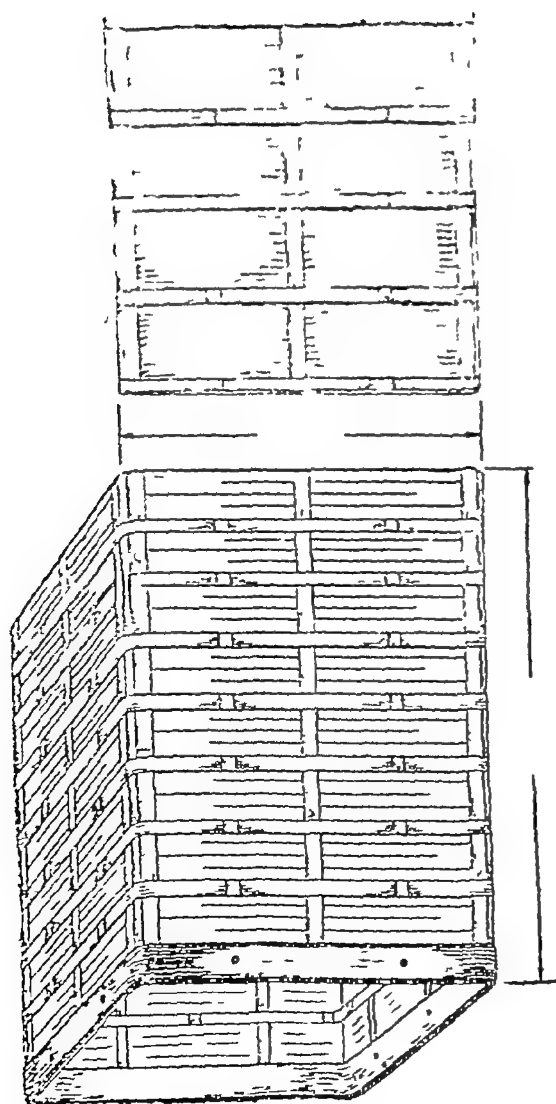
वर्गाकार पेंदेवाली व्यावहारिक वस्तु

चौड़े तथा मजबूत किनारेवाले बाँस का व्यवहार कर वर्गाकार टोकरी बनाते हैं और इस टोकरी का बनाना वर्गाकार कार्यों के समान ही होता है। इस तरह की टोकरी को मोदी के यहाँ काम करनेवाले लड़के अधिकतर व्यवहार में लाते हैं।

प्रत्येक घुमाव के लिए नया सामान लगाकर इसके पार्श्व की बुनाई की जाती है। इससे होता यह है कि बाहर से बाँस लगाने में आसानी हो जाती है। इस टोकरी के निर्माण में बाहर से बाँस लगाना और किनारे को पूरा करना—ये दो ही कठिन काम हैं। यह टोकरी दो प्रकार की होती है—वर्गाकार और आयताकार।

इसकी बुनाई के लिए उपयुक्त बाँस—इसकी बुनाई के लिए जिस बाँस से सामान तैयार किया जायगा, वह बाँस ५ से ६ इंच व्यास का होना चाहिए और किनारे तथा बाहर से लगाया जानेवाला बाँस ८ से ९ इंच व्यास का। उससे अधिक या कम होने पर ताप द्वारा मोड़ते समय मोड़ पर से बाँस के चटक जाने का भय सर्वदा बना रहता है।

एक बड़े आकारवाले बाँस से एक मझोली टोकरी बन सकती है और एक दिन में मोटे तौर से कारीगर इस तरह की तीन टोकरियाँ (छोटी, मझोली तथा बड़ी) बना लेता है। अधिक दक्ष और अभ्यस्त कारीगर इससे ज्यादा भी बना सकता है।



(चित्र १५८)

में सटते हैं।

बाहरी बाँध लगाना—चित्र १५७ में दिखाये गये ढंग से मोटे हुए बाँस को इसमें अलग से लगाते हैं।

बुनाई—इसकी सभी बुनाई उसी तरह की होती है, जो टिफिन कैरियर आदि टोकरी की बुनाई में बरती जाती है।

कुटकी बुनाई के द्वारा वर्गाकार रद्दी की टोकरी

कुटकी बुनाई द्वारा बनी वस्तुएँ, बेडा-बुनाई द्वारा बुने गये पार्श्व तथा वर्गाकार पेंदा-बुनाई के सामानों से ही बनाई जाती हैं। कुटकी नाम इसलिए पडा है कि इस काम के लिए बाँस को थूर करके या बडी कागज की कूट की तरह चौडा करके काम में लाया जाता है। किन्तु, ऐसा करते समय इस बात का खयाल रखा जाता है कि बाँस की फट्टियाँ हर हालत में अलग नहीं होने पावें।

(ङ) गोलाकार किये गये भाग को प्रथम बुनाई की सामग्री से बुनन बनाने का कार्य प्राय: पूरा हो जाता है और दूसरी बुनाई से षड्भुजाकार जाल का पेंदा बनाने का प्रयत्न करना पडता है। तीसरी बुनाई पूरी हो जाने पर बनाना भी पूरा हो जाता है।

(च) पार्श्व-बुनाई सीधी करने के लिए ठीक उसी आकार की बुनाई से बुनना चाहिए।

(छ) पार्श्व बुनाई अच्छी हो, इसके लिए पेंदे के आकार का जा चाहिए। नये सीखनेवालो के लिए एक ही प्रकार का जाल बनाना कठिन जिससे वे अक्सर बडा जाल बना देते हैं।

(ज) इन टोकरियो की ऊँचाई, बुनाई की सामग्री की सख्या द्वारा नि जाती है। सामान्यतः टोकरियो मे फ्रेम बनाने के सामान तथा बुनाई के सा सख्या एक ही होती है।

(झ) जब यह टोकरी अपर्याप्त बुनने की सामग्री से तैयार की जाती ऐसी अवस्था में फ्रेम की दो-दो कमचियाँ कम कर दी जाती हैं।

(ञ) पार्श्व की तीसरी बुनाई समाप्त कर लेने पर टोकरी को वर्गाकार ज बुनाई से बुनते हैं, जिसके फ्रेम बनने की कमचियाँ भी तीन बार ऊपर-नीचे होती हैं

(ट) इतना कार्य सम्पन्न हो जाने के बाद बुनाई की कमचियो से पुन चाहिए और फ्रेम लगा हुआ षट्कोण जाल भी बनाना चाहिए। तदनन्तर फिर चत बुनाई को दुहराना चाहिए।

किनारे के घेरे से बढ़े भागों को अनेक भागों में विभक्त
सामान से घुमाव बनाते हैं। अन्त में हैंडिल को जोड़
चित्र १६७ के ऊपरी हिस्से में दिखाया गया है।

(२) शकरकंद को उबालने के लिए स्थाली बहुत
लिए बाहरी हिस्से में अलग से चौड़े बाँस लगाये जाते हैं, ि
में दिखाया गया है। फिर, किनारे को वेणी-गुम्फन-बुनाई

(३) चौरस बुन लेने के बाद उसे वृत्ताकार रूप में

(४) किनारे के बाँस के छोरों को एक तरह का
तार मढ़ने के लिए अँगरेजी अक्षर V के सदृश बनाकर बुना
देते हैं। उसके बाद सिरे के बाँस को नीचे और ऊपर लगा
किनारेवाले घेरे में तीन बाहरी बाँस घुसेड़ते हैं।

सबसे सरल षट्कोण जालवाली टोकरी, रद्दी कागजों
टोकरी होती है।

षट्कोण जालवाली टोकरियाँ अनेक आकार की
किस्म की बनाई जाती हैं। लेकिन, उनमें सबसे सरल टोक
का बाँस लगाये बिना किनारा पूरा किया जाता है और
लगाकर तार से जोड़ दिया जाता है। प्रत्येक जाल को, दा
अथवा मढ़ाईवाले बाँस से दो घुमाव बुनकर या दो बाँसों से स

सीखनेवालों के लिए सिरों को बाँधकर तथा घेरा बन
बाँस को घुसेड़कर यह टोकरी बनाना ज्यादा आसान होता है

भीतरी किनारेवाले बाँस के स्थान पर बाँस का भीतरी
नहीं होता है। अच्छी टोकरी बनाने के लिए भीतरी किन
चौरस रूप में पूरा करते हैं, जिससे जोड़ोंवाले भाग सुन्दर लग

सौदा करने की मूठवाली चँगेल

इसे चित्र १३० में दिखाया गया है। यह फूलबाँस
अपनी बुनावट के कारण काफी मजबूत तथा टिकाऊ होती है।

फूलबाँस को चार भागों में बाँटकर उसे चीर देते हैं अ
की कमचियों को बुनाई के काम में लाते हैं।

बुनाई की कमचियाँ तैयार करने के लिए व बाँस अ
होते। लेकिन मढ़ाई के काम में आनेवाली कमचियों के
चाहिए। अतएव, मढ़ाई के काम को छोड़कर ४ फुट लम्बा

पेंदे की बुनाई—फ्रेमवाली १४ कमचियों पर एक फुट

रद्दी कागज की टोकरी

चित्र में यथा-प्रदर्शित रद्दी कागज की टोकरी पट्टए के पनवाली की ही एक क्रिया है। कागज रखने की रद्दी टोकरी के बारे में पहले कहा गया है। फिर भी, इसकी बनावट में कुछ विशेषता होने के कारण पुनः इसका उल्लेख किया गया है। बुनाई की कमचियों के रूप में उसका व्यवहार हुआ है। दूसरी ओर बनाई की झुकी हुई कमचियों को फ्रेम की कमचियों के रूप में व्यवहृत करते हैं। इसके किनारे का ऊपर से चौड़ी कमचियाँ देकर पूरा करते हैं।

पेंदे की बुनाई—इसे चित्र १६८ में दिखाये गये रूप के अनुसार ही बुनना चाहिए। यह बताया जा चुका है।

गोलाकार पार्श्व-बुनाई—पेंदे में बाहरी बाँस घुसेड़ने के बाद फ्रेमवाली कमचियों को मोड़ना चाहिए। फ्रेम के सामान के रूप में बाईं ओर झुकी हुई कमचियों को मोड़ना चाहिए तथा बुनाई के सामान के रूप में दाहिनी ओर झुकी हुई कमचियों को। दाहिनी ओर से ऊपर उठाते हुए किनारे का जाल बुनना चाहिए। अभीष्ट ऊँचाई तक बुन लेने के बाद, बुनाई को बदल देना चाहिए और बुनाई के सामान के छोरों को फ्रेम के सामान के भीतर घुसेड़ देना चाहिए। उसके बाद दो घुमाव तक 'रस्सा-बुनाई' करनी चाहिए। इसी बुनाई पर टोकरी में बाहरी बाँस लगाते हैं, जिससे बुनाई की कमचियाँ ढीली नहीं होतीं। उसके बाद जैसा चित्र में दिया गया है, 'रस्सा-बुनाई' के बीच चौड़ी कमचियों से दो चरण बुना जाता है और ४ घुमाव रस्सा-बुनाई बुनी जाती है।

किनारे को पूरा करना—छिपाकर बुननेवाली बुनाई को बतलाया जा चुका है। इस टोकरी में भीतर की ओर प्रत्येक 'दो बाँस' पर नीचेवाले ४ बाँस घुसेड़ते हैं।

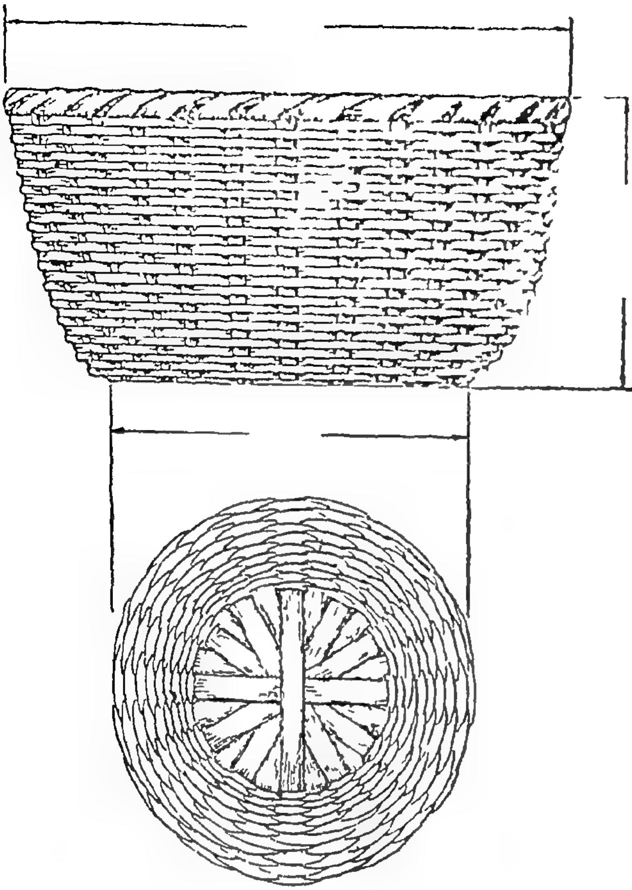
पूर्ण-क्रिया—तैयार हो जाने के बाद ये टोकरियाँ रँगी जाती हैं। रँगने की विधि बताई जा चुकी है।

फूलपेंदा-बुनाई द्वारा बाँस की वस्तुएँ

फूलपेंदा-बुनाई एक प्रकार से पेंदे की बुनाई है, जिसमें फ्रेम की कमचियाँ मोड़ दी जाती हैं और मकड़े के जाल के समान बुनाई की कमचियों से बुनाई की जाती है। यह गुलदाउदी के फूल के समान देखने में लगता है। इसलिए इस बुनाई को फूलपेंदा-बुनाई कहते हैं।

बाँस की बनी वस्तुओं में पेंदे की यह बुनाई बहुतायत से व्यवहृत होती है और यह बुनाई ज्यादातर ढक्कन, पेंदा आदि के बुनने के काम में आती है। इस तरह की बुनाई नौसिखुओं के लिए कठिन होती है। उसके लिए निम्नलिखित विधि ठीक होती है।

सर्वप्रथम बाँस का गोल साँचा बना लिया जाता है और उसमें व्यास के रूप में फ्रेमवाली कमचियाँ लगा दी जाती हैं। साँचा अस्थायी रूप में बना लिया जाता है। बाद, बुनाई की कमचियों में बुना जाता है। पेंदे की बुनाई खत्म हो जाने पर गोल साँचे



(चित्र १७२)

दो जालों को ऊपर करके होनेवाली बुनाई सामान्यतः बाँस से बननेवाली सभी वस्तुओं के काम में आती है। इस विधि को जाल-बुनाई के उदाहरण के रूप में बताया जायगा। इस बात की सतर्कता बरतनी चाहिए कि बाँस की कमचियाँ एक ही चौड़ाई तथा मुटाई की बनाई जायँ और तब वे सटाकर बुनी जाय, जिससे रिक्त स्थान नहीं दिखाई पड़े, जैसा चित्र १७२ के ऊपरी भाग में दिखाया गया है। इस बुनाई के जाल, प्रत्येक ४ कमचियों पर, प्रथम जालों के स्थान पर चले जाते हैं।

ऊपर से नीचे खड़ी की गई फ्रेम की कमचियाँ सिलसिले से रखकर लकड़ी का एक बड़ा खण्ड एक किनारे रख देते हैं, जिससे बुनना आसान हो जाता है। कमचियाँ रखने की क्रिया चित्र १७० के ऊपरी भाग में है।

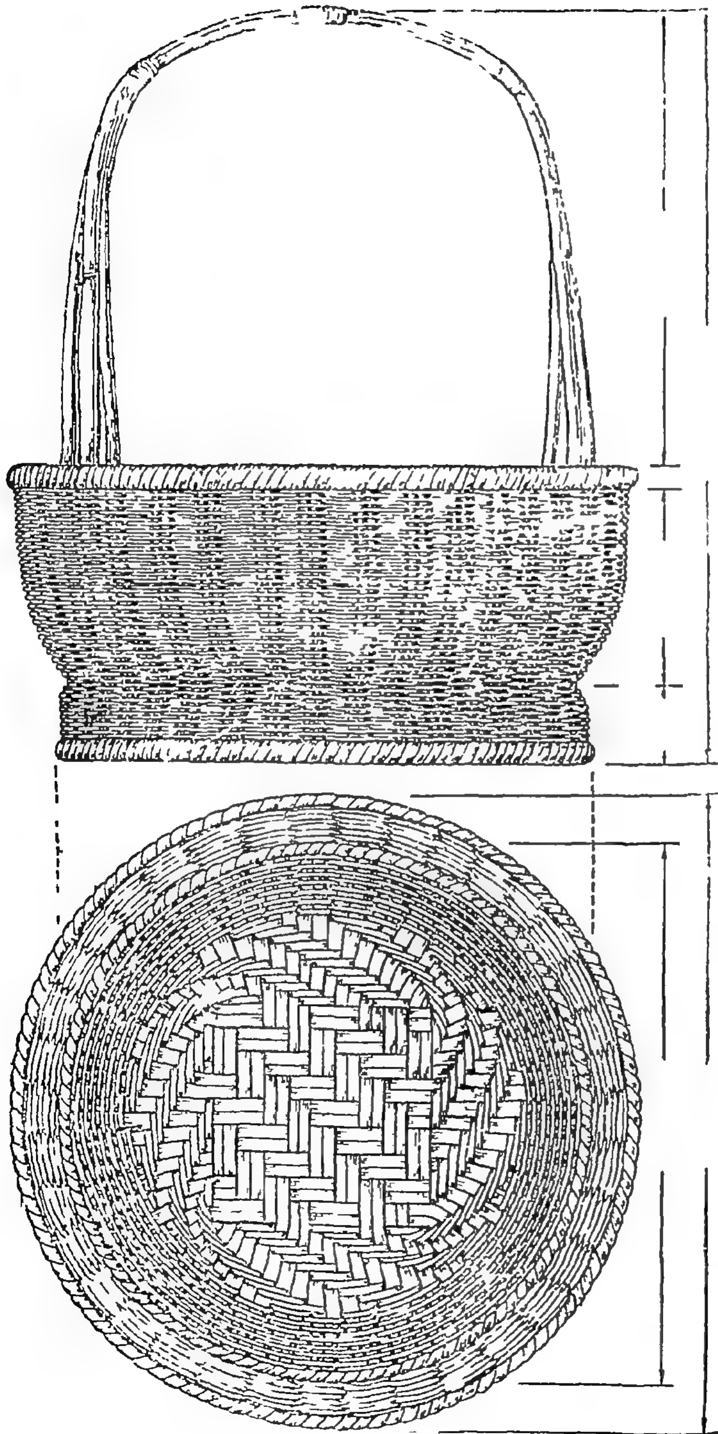
इसके बाद बुनाईवाली संख्या १ की कमची को लीजिए। इसे ० और २ नं० की कमची के नीचे लगाइए और ४ तथा ५ के नीचे और फिर ८ तथा ९ के नीचे लगाइए। यह क्रम चलाते रहिए। इसके बाद बुनाई की कमची से ० के ऊपर इसी क्रम से लगाते चलिए। फिर, सामान से ० और १ के ऊपर २ और ३ के नीचे, ४ और ५ के ऊपर लगाना चाहिए और यह क्रम जारी रखना चाहिए। बुनाई की कमची इसी तरह ० को ऊपर, १ और २ को नीचे, ३ तथा ४ को ऊपर क्रम से लगाते हैं। ० और १ को ऊपर, २ तथा ३ को नीचे रखना चाहिए, जैसा प्रथम बुनाई की कमचियों में किया गया है। चौड़ी बुनाई में कमचियाँ अपने प्रथम स्थान पर चली आती हैं। यह सारी प्रक्रिया चित्र १७२ के निचले हिस्से में ही प्रदर्शित है।

तीन जालों को ऊपर करके बुनाई की विधि यह है कि इससे प्रथम ५ बुनाई के बाद फिर वही बुनाई शुरू होती है।

वर्गाकार पेंदे को गोल बनाने में निम्नलिखित तरीके से सावधानी बरती जानी चाहिए—

(१) कोनों पर पेंदा बुनने की सामग्री यथासम्भव छोटी बना दी जाती है और वैसा करने के लिए सामग्री प्रत्येक कोने पर ऐंठी जाती है। प्रत्येक कोने पर एक ही दिशा में ऐंठना चाहिए, अन्यथा प्रत्येक बार की मुड़ाई में रिक्त स्थान बन जायेंगे। कोने पर ऐंठन की विधि चित्र १७३ के ऊपरी भाग में द्रष्टव्य है।

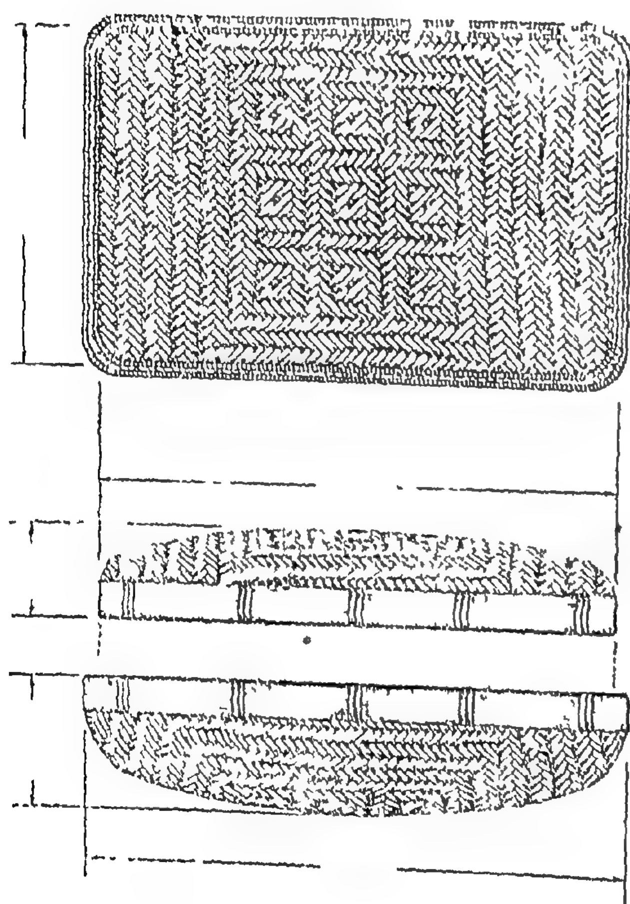
(२) तीन या चार घुमाव पूरा कर लेने पर कोने पर फ्रेम की कमचियों को खोल देते हैं। इससे पेंदे की बुनाई गोल होती है। अनुभवी कारीगर ७।। घुमाव बुन लेने के बाद गोलाकार बुनते हैं। जब फ्रेम की कमचियाँ



(चित्र १७८)

पुस्तक और पत्र रखने की पेटी

पुस्तक रखने की पेटी अन्य टोकरियों में सबसे उच्च कोटि की होती है। ढक्कन का एक भाग तीन जालों पर आर पार करनेवाली बुनाई द्वारा बनाया जाता है और मुख्य भाग तो सम्पूर्ण रूप से इसी बुनाई द्वारा बनाया जाता है। इसके किनारे की मोटाई भी ताप द्वारा ही होती है, जिसे पहले कहा गया है। इसकी बुनाई भी वर्गाकार जालीदार बुनाई की होती है। किनारे को गोल करने के बाद इसकी बुनाई भी तीन जालों का आर पार करके होती है। किनारे पर फ्रेम बनानेवाली कमचियों से जालवाली जगह पर, समानान्तर रूप में, बुनाई करके इसे समाप्त करते हैं।



(चित्र १७५)

इस पुस्तक में प्रदर्शित चित्र १७५ के ढक्कन की जो जाल-बुनाई होती है, वह चौड़ी और पतली दोनों तरह की कमचियों से तैयार होती है। इस तरह की कमचियों से बनाया गया ढक्कन इस चित्र के ऊपरी भाग में दिखाया गया है। कारीगर की दक्षता के अनुसार इसके अनेक रूप तैयार हो सकते हैं। इसके बड़े-बड़े बक्से भी तैयार किये जा सकते हैं।

बनी हुई वस्तुओं को रँगने की विधि

वस्तुओं के निर्माण के बाद आकर्षक और सुन्दर बनाने के लिए रँगने की बात कही गई है। यहाँ रंग चढ़ाने की विधि दी जा रही है—

यदि वस्तु पर खूब गाढा रग चढाना हो, तो उसके लिए निम्नलिखित तरीके अपनाते हैं—

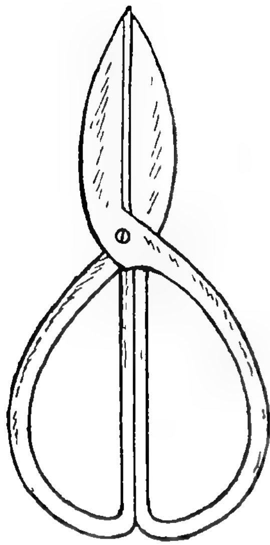
विस्मार्क (चूर्ण)	१४० ग्राम
मालकाइट ग्रीन	४ ,,
क्रीस्टल	४ ,,
पानी	५,१४ ,,
ताप	१०० संटीग्रेड
समय	३० मिनट

इस तरह मिश्रण को गरम करके कुछ देर ठडा होने के लिए छोड दिया जाता है। बाद मे झरनेवाले पानी के नीचे धोकर सुखा लेते हैं। जिस घर के अन्दर जरा भी प्रकाश नही जा सके, उस घर के अन्दर एक सूखे कपडे मे रखकर इसे रगडा जाता है। यह क्रम तबतक चलता है, जबतक उसमें कुछ चमक न आ जावे।

साफ करना (Bleaching)

सूर्य की किरणों से भी बॉस साफ किया जाता है, जिसकी विधि निम्नलिखित है—

बॉस को एक साँचे (फ्रेम) के अन्दर रख दिया जाता है। ऊपर से एक बडा शीशा रखकर सूर्य के सम्मुख करके रख दिया जाता है। शीशे के अन्दर होने के कारण बॉस के ऊपर सीधी सूर्य की किरणें नही पडती हैं। इसके अनुसार बॉस के फटने की सम्भावना नही रहती है और बाँस साफ हो जाता है।



(चित्र १७७)

केवल और दो-तीन चीजों की आवश्यकता होती है। एक तो सुआ (बटी सुई) और दूसरी लकडी की मुँगरी और तीसरी एक कैंची। सुए का व्यवहार चित्र १७६ मे तथा कैंची का आकार चित्र १७७ मे देखना चाहिए। पतेल का नीचे बिछाकर और उसके ऊपर कोपल रखकर वस्तु की बुनाई की जाती है। विधि नीचे दी जा रही है—

(१) पहले मूँज के निचले हिस्से को मुँगरी से अच्छी तरह पीटकर उसे खूब मुलायम कर दिया जाता है। देखिए चित्र १७८ का उपरी भाग। इसके बाद भी उसमे यदि कडा अश रह जाय, तो उसे काटकर हटा देना पडता है।

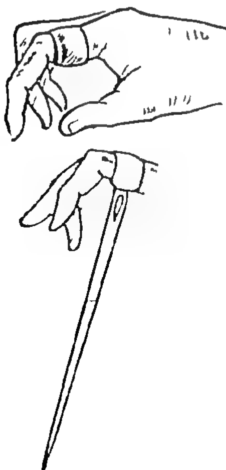
(२) व्यवहार मे लाने के पहले कोपल को पानी मे इस तरह भिगो देना चाहिए कि जिससे वह पानी से बिलकुल तर हो जाय। बाद मे अच्छी तरह उससे पानी झाड देना चाहिए।



(३) पश्चात्, कोपल से पानी निचोड़कर उसे गीले कपडे में लपेटकर रख देना चाहिए, जिससे हवा लगने के कारण कोपल सूखने न पावे।

(४) बुनाई आरम्भ करने के पहले केवल कोपल का ही दो-तीन घेरा देना पडता है और तब मूँज को लगाते हैं।

कोपल (सुपली) का व्यवहार दो तरीकों से किया जाता है। एक तो वह कि जैसी कोपल है, उसका उसी अवस्था में व्यवहार किया जाता है। दूसरी विधि के अनुसार इसे पहले रसायन द्रव्यों से साफ करके तब व्यवहार में लाते हैं।



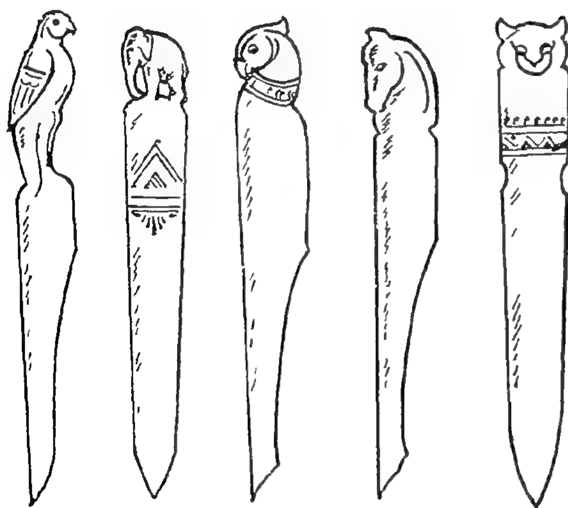
(चित्र १७८)

रसायन के प्रयोग के पहले कोपल (सुपली) को एक बडे पानीवाले पात्र में डुबो लेते हैं। हाइड्रोजन पैरोक्साइड (Hydrogen Paroxide) H २ २ में ३५% और दूसरी Na २, Si ०३ ५०%-५% सोडियम सिलीकेट (Sodium Silicate) को १००% पानी मे मिलाकर अच्छी तरह घोल बनाकर रखते हैं। बाद, पानीवाले पात्र मे कोपलों को निकालकर और

गिलास की माप से थोडा बडा रखकर बाँस को अलग-अलग टुकडे मे काट लेना होता है। इसके बाद ऊपर की हरी त्वचा को हटाकर टुकडों को किसी बडे पात्र मे रखकर और पानी देकर ३० मिनट तक उबालते हैं। पानी मे थोडा कास्टिक सोडा डाल देते हैं। बाद, उबले हुए बाँस के टुकडे को एक सप्ताह तक धूप मे सूखने के लिए छोड देना पडता है। टुकडों के अच्छी तरह सूख जाने पर उन्हे खराद पर चढाकर खरादते हैं। तत्पश्चात्, सैंड पेपर से उन्हें खूब चिकना कर लेना होता है और तब उसपर इच्छित पॉलिश कर देते हैं। यदि गिलास पर किसी तरह की चित्रकारी करनी हो तो, कारीगर को चाहिए कि वे ब्रश के सहारे चाइनीज स्याही से चित्र की आकृति बना दे और ऊपर से चपडे की परत चढा दें। ऐसा करने पर चित्र का रग कभी नही उड सकता। इसके ऊपर यदि 'पोकर' कार्य भी किया जाय, तो अत्युत्तम होता है।

कागज काटने या फाड़नेवाली बाँस की छुरी

इस कार्य के लिए आवश्यकतानुसार बाँस को टुकडे-टुकडे में विभाजित कर लेते हैं। तत्पश्चात्, कागज पर पेंसिल से छुरी की आकृति बना लेते हैं। आकृति जिस कागज पर बनाई जाती है, उसे बाँस के विभाजित टुकडे पर साट देते हैं। बाद मे पतली धार-वाली आरी से छुरी की आकृति मे उसे काट देते हैं और बाहरी भाग को काटकर निकाल देते हैं। छुरी पर बाह्य रेखा देने के लिए उस औजार से काम लिया जाता है, जिससे एक प्रकार की खुदाई आदि का काम होता है। यह औजार एक 'नहरनी' है। बाद, उस बाँसवाली छुरी की धार भी बना देते हैं और धार बनाने के लिए बारीक 'रेती' नामक औजार का व्यवहार करते हैं। धार बना लेने पर 'सैंड पेपर' से उसे खूब चिकना और साफ कर देते हैं। जहाँ छुरी पर नहरनी से काम किया जाय, वहाँ लाह का रग या और कोई दूसरा रग चढा देते हैं। सबसे अन्त में मधु-मक्खीवाली मोम से पॉलिश करके खली का पाउडर घिस देते हैं। इस तरह कागज काटने या फाडने के लिए सुन्दर और उत्तम छुरी तयार कर ली जाती है। ऐसी छुरियाँ चित्र १८१ मे प्रदर्शित हैं।



(चित्र १८१)

(२) कमचियाँ बन जाने पर सभी को, मुटाई और चौडाई आदि मे, बराबर रूप मे काटकर ठीक कर लेना पडता है।

(३) पहले भीतरी भाग की कमचियो को बीच मे रखकर दोनो ओर से छिलके-वाली कमचियो को रखते हैं। इसके बाद दोनो पार्श्वों को साँचे के अन्दर रखकर दबा देते हैं। इसके बाद भी, दोनो पार्श्वा मे रन्दा करते हैं। ध्यान रहे कि सभी कमचियों की मुटाई और चौडाई बराबर रहे, नही तो दबाते समय गाँठो के पास यदि स्थान रिक्त रह गये होंगे, तो वहाँ का हिस्सा सटेगा नही। कमचियो को दबानेवाला साँचा चित्र १८२ मे दिखाया गया है।

(४) बाद मे रेती से घिसकर इसे बराबर कर लेते हैं।

(५) ठीक तरह से सजाई गई इन कमचियो को मुलायम होने के लिए पानी मे रख देते हैं। कुछ देर बाद साँचे में रखकर छडी की मूठ को टेढा करते हैं। मूठ की तरफ, कमचियो मे ही, पहले से एक लोहे का पत्तर लगा देते हैं, जिसे मूठ के साथ ही मोडते हैं।

(६) बाद, इस टेढी की गई मूठवाले भाग को कसकर बाँध देते हैं और उसी अवस्था में काफी देर के लिए छोड देते हैं।

(७) प्रेसर में रखकर पत्तर को ठीक से जोडने के लिए और स्थिर रखने के लिए ऊपर से एक लकडी की कील को धीरे-धीरे ठोक देते हैं। इसके अतिरिक्त छडी को कडी करने के लिए कई जगह ऐसी कीलें ठोकते हैं, जो चित्र मे प्रदर्शित है।

(८) इसके बाद बिजली या रेडियो हीटर से छडी को सुखाना जरूरी होता है। इस पद्धति से छडी के भीतर का पानीवाला अश पूरी तरह सूख जाता है। ऐसा नही करने से लेई से साटते समय कमचियाँ परस्पर ठीक से सट नही सकेंगी। सुखाने के लिए समय ५ मिनट और ताप ७० सटीग्रेड व्यवहार में लाया जाता है।

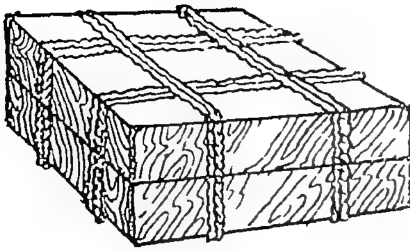
(९) पश्चात्, साँचे में सजी कमचियो को उससे निकाल लेते हैं और छोटे रन्दे से सभी कमचियों को रद कर बराबर कर लेते हैं।

(१०) इसके बाद कमचियो को साटनेवाली विधि की जाती है। इसके लिए सभी कमचियों को अलग-अलग करके सभी में निम्नलिखित प्रकार से बनाई गई लेई लगा देते हैं। लेई बनाने की विधि नीचे दी जाती है—

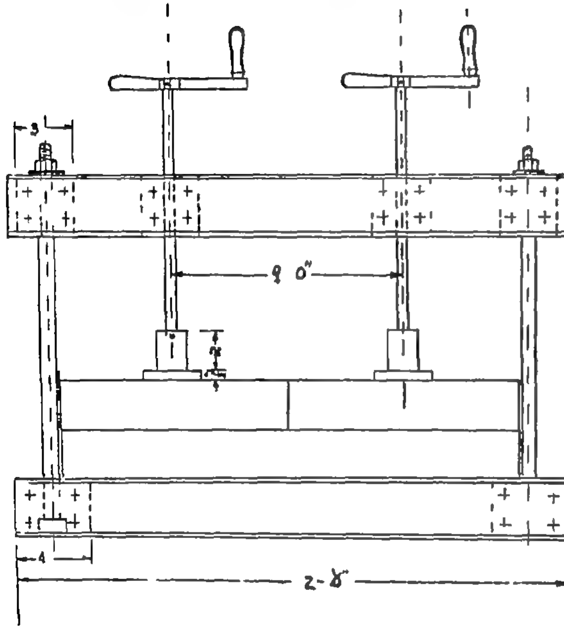
उरिया रेजिन पेस्ट के साथ आमोनियम क्लोराइड (Amonıam Chloride) को पानी मे घोल देत हैं। इनका परिमाण निम्नलिखित है—

उरिया रेजिन	१००%
आनमोनियम क्लोराइड	१०%
पानी	१०%

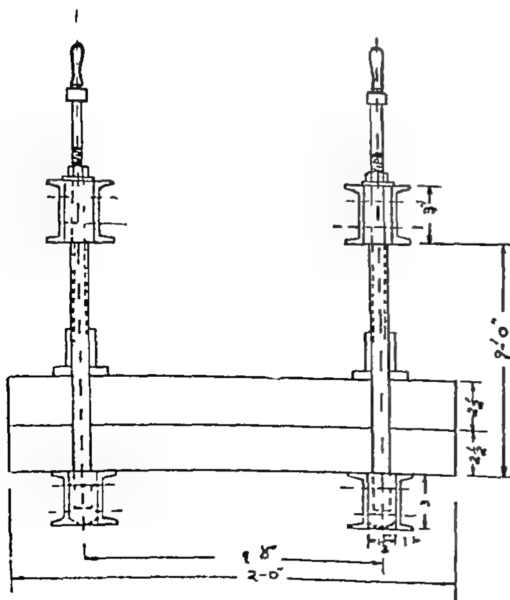
(११) इस लेई को कमचियों मे लगाकर फिर रेडियो हीटर मे रखकर सुखाते हैं। इसके लिए समय १० मिनट और ताप ७० से ८० सटीग्रेड होता है।



(चित्र १८७)



(चित्र १८८)



(चित्र १८९)

रखने का दृश्य चित्र १८५ मे दिखाया गया है।

(४) माँचे मे जाली लगाने के बाद तीना चटाइयो मे उग्गिया-पेस्ट का लेप कर देते है। उक्त माँचे में ढक्कन बैठाकर उसे प्रेसर से कस देते हैं। ढक्कन बैठाने का ढग चित्र १८६ और चित्र १८७ मे दिखाया गया है।

(५) इसके बाद रेडियो हीटर के द्वारा २० मिनट तक इसे सुखाते हैं और बाद मे ठडा होने के लिए बाहर थोडी देर छोड देते हैं।

(६) ठडा हो जाने पर वस्तु को गोल या वर्गाकार अथवा षट्कोण रूप देने के लिए पेंसिल से मनोनुकूल चिह्न कर देते हैं और उसी के अनुसार फिर औजार से काट देते हैं।

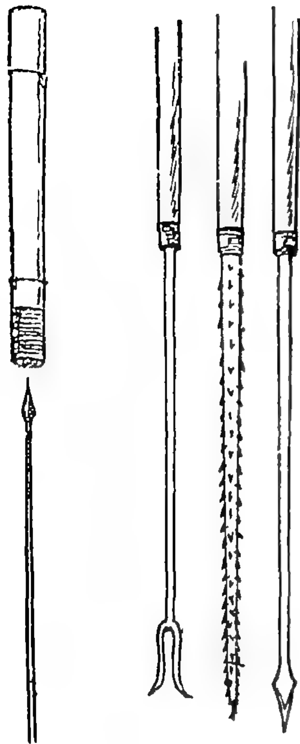
(७) बाद में सैंड पेपर से साफ करते हैं और वस्तु पर चपडे की परत लगा देते हैं।

(८) अगर वस्तु पर रग देना चाहते हैं, तो चाइनीज या जापानी लाह का रग दे सकते हैं।

(९) इसी विधि के अनुसार सिगरेट, जेवर आदि के रखने के लिए भी छोटे बक्स तैयार कर सकते हैं।

साधारण तरीके से भी चटाइयो को प्लाइ ऊड की तरह तख्तेदार बनाया जा सकता है। इसके लिए निम्नलिखित विधि अपनाई जा सकती है—

(१) एक के ऊपर दूसरी और दूसरी के ऊपर तीसरी चटाई रख दें।



(चित्र १९०)

(२) वाद, एक दूसरी मशीन होती है, जिसमे वॉस को डाल दिया जाता है और वह उसपर का छिलका तुरत हटा देती हे।

(३) फिर, तीसरी मशीन बाँस के भीतरवाली गाँठो को निकालकर उसे पूर्ण खोखला कर देती है।

(४) एक और मशीन ऐसी होती है, जो कई मुटाई के वॉसो को कई भागो मे विभक्त कर देती है। प्रत्येक बाँस को विभक्त करने के पहले उसमे अलग-अलग दाग देकर और प्रत्येक को बाँधकर मशीन मे रखते हैं। बाँस की मुटाई के अनुमार विभाजन किया जाता है, ताकि विभक्त बाँसो की मुटाई चौडाई समान रूप में हो। विभाजन-विधि के लिए चार प्रकार की मशीनें काम मे लाई जाती हैं—

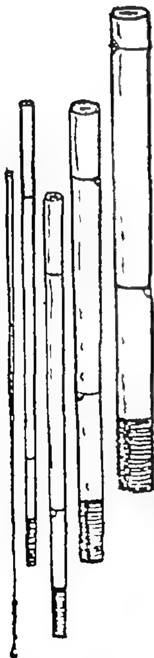
(क) विभक्त करने के लिए।

(ख) चिकना करने के लिए।

(ग) चिह्न देने के लिए।

(घ) त्वचा हटा देने के लिए।

(इसके साथ ही साफ करने के काम के लिए अलग से भी व्यवस्था रहती है।)



(चित्र १९१)

विभाजन के वाद, कीडो से सुरक्षा के लिए रसायनो का व्यवहार करके बाँस को, धूप मे दस घण्टे तक सूखने के लिए छोड देते हैं। निम्नलिखित रसायन और उनका परिमाण व्यवहार में आता है—

रसायन—(क) अलक्लोरिन सॉल्युसन (Alchlorine Solution)

(ख) कास्टिक सोडा

(ग) पी० मी० पी०

(इन्हें बाँस से तेल निकालने और कीडो से वचाने के लिए लगाया जाता है।)

परिमाण—१८० Lire को वडे पीपे मे ६०० ग्राम पी० मी० पी० देकर और रसायन से निकालकर वाद मे १० घण्टे तक धूप मे रखते हैं। इसके वाद सामानो को व्यवहार मे लाया जाता है।

(६) इसके बाद लकडी की राख मलकर धूप मे सुखा देते हैं। इस क्रिया के कारण बसी मे कभी कीडे नही लगते हैं। इस विधि से बनाई गई बसी काफी मजबूत, सुन्दर और सुविधाजनक होती हे। इसकी लम्बाई इच्छानुसार बनाई जा सकती है।

(७) बसी बनाने के लिए अधिकतर 'चाभ' या 'मकोर' बाँस का व्यवहार किया जाता है।

(८) ऐसी बसी के सुरक्षापूर्वक रखने के लिए एक बक्स की भी आवश्यकता होती है, पर उसका मूल्य अधिक हो जाता है।

विभिन्न प्रकार के बाँसो के बैग

इस काम के लिए पहले बाँस से तेल निकालते हैं। तेल निकालने की विधि बताई जा चुकी है। बाद, जब बाँस फाडे जायँ, तब आवश्यकतानुसार चौडाई में ही। फाडने आदि कार्यों के लिए विशेष प्रकार की मशीनों का सहारा लेना उत्तम होता है, जिससे उत्पादन बडे पैमाने पर किया जा सकता है। इन कामो के लिए निम्नाकित मशीने व्यवहार मे आती हैं—

(१) मोटी कमचियाँ बनाने की मशीन।

(२) आरी-मशीन, जो काटने के काम मे आती है।

(३) छेद करने की मशीन।

(४) बराबर करने के लिए और गोलाकार करने की मशीन, यानी रन्दा मशीन।

चटाई से बनी वस्तुओ मे लाह का प्रयोग

इस तरह की वस्तुएँ पहले हमारे देश में बनती थी, पर अब लुप्तप्राय हैं। लाह के प्रयोग से वस्तुओ का सौन्दर्य बढता है और उनमें पूरी मजबूती आ जाती है। भारत में कही-कही अब भी ऐसी चीजें कारीगर बनाते हैं, जिनका दर्शन यदा-कदा हमें मेलो मे हो जाया करता है। उपर्युक्त विधि से बनाई चीजो (जो बहुत कम मूल्य की होती हैं) के ऊपर यदि लाह का लेप देकर उसे आकर्षक और मजबूत बनाया जाय, तो उनका मूल्य कई गुना बढ जायगा तथा लोग खुशी-खुशी खरीदेंगे भी। ऐसी वस्तुओ का निर्माण जापान, चीन, बर्मा आदि देशों मे खूब होता है। यदि उक्त प्रणाली से अपने देश में चटाई बुनने का काम लिया जाय, तो रोजी की बहुत बडी समस्या हल हो जाय।

ऐसी चटाई की बुनाई मे न तो विशेष सामानो की आवश्यकता है या न ज्यादा औजारो की। इसके लिए केवल दो-चार औजारों की ही जरूरत पडती है। अगर चटाई देकर बक्सा बनाना चाहते हैं, तो पहले बक्से के आकार का लकडी का ढाँचा तैयार कर लीजिए। बाद मे बुनी चटाई को, सरेस या युरिया रेजिन से, बक्से के भीतर चारों ओर तथा तल मे साट दीजिए। उसके बाद लाह का लेप लगा दीजिए। इससे बहुत बडा लाभ यह होता है कि कभी उस बक्से मे कीडे नहीं लगेंगे और बक्सा इतना मजबूत

(१) इस प्रणाली के अनुसार बुनी हुई छोटी टोकरी के किनारेवाले अश मे लाह के बराबर पानी मिलाकर बनाये गये घाल को पहले लगा देते हैं। यह इसलिए किया जाता है कि टोकरी के घेरावाले किनारे की बुनावट मजबूत हो जाय और वह निकलने न पावे। इस क्रिया को दो बार करके किनारे को खूब मजबूत बना लिया जाता है।

(२) बाद, घेरे के किनारेवाली तानी की कमचियो को, जो बाहर निकली रहती हैं, काट दिया जाता है।

(३) इसके पश्चात् लाह मिलाये हुए गोबर को पुन दो बार पोत देते हैं, जिससे ऊबड-खाबड स्थान बराबर हो जाते हैं। बाद, वस्तु को अच्छी तरह सुखा लेते हैं, जिससे उसमें मजबूती आ जाती है।

(४) लेप के सूख जाने के बाद, मोटे-पतले लगे लेप को, वस्तु को घुमा-घुमाकर छुरी से बराबर कर देते हैं। खराद पर या चाक पर भी रखकर बराबर करते हैं और इन दोनो विधियो से बराबर करने की सही आकृति मे कोई कमी नही रह जाती है।

(५) बाद, लाह का अधिक अश और गोबर का कम अश देकर लेप बनाते हैं और उसे वस्तु पर पोत देते हैं। पुन सूखने के लिए छोड देते हैं।

(६) पश्चात्, गोबर का अश ज्यादा और लाह का अश कम देकर लेप तैयार करके घोलते हैं और पुन धूप मे सुखाते हैं।

(७) अच्छी तरह लेप के सूख जाने पर पत्थर पर घिसकर चिकना करते हैं।

(८) इतनी क्रिया हो जाने पर केवल लाह का लेप बाहर और भीतर चढाकर धूप में वस्तु को सुखा देते हैं।

(९) यदि वस्तु पर कोई डिजाइन बनाना है, तो एक प्रकार के औजार से या छुरी से डिजाइन तैयार करके ऊपर से लाह अथवा पिगमेंट रग चढाकर अच्छी तरह कपडे से पोछ लेते हैं। बाद, कच्ची लाह का लेप चढा देते हैं।

(१०) पुन वस्तु पर दूसरा रग देने के लिए औजार से रेखाकन करके हरा रग चढा देते हैं तथा सुखा लेते हैं।

(११) तीसरा रग देने के समय पूर्ववत् रेखाकन तैयार करके पीला रग चढाते हैं और सुखाते हैं।

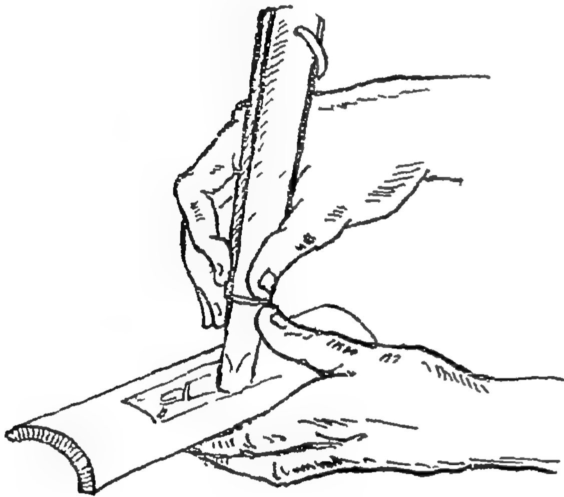
(१२) इन सब विधियो की समाप्ति के बाद लाल रग चढाते हैं और सुखा लेते हैं।

(१३) सबसे अन्त में वस्तु को चिकना करने का काम अरवा धान की भुस्सी की रगड से किया जाता है।

वहाँ कोई कोई 'तनकी' के स्थान पर धान की भुस्सी को जलाकर पाउडर बनाते हैं और उसमें लाह मिलाकर लेप तैयार कर लेते हैं। बर्मावालो का कहना है कि गोबर से उत्तम लेप धान की भुस्सी का ही होता है।

भारतवर्ष में काष्ठ-शिल्प तो है, पर वेणु-शिल्प नही है। इसके अतिरिक्त हमारे यहाँ काष्ठ-शिल्पो के भी अलग-अलग नामकरण नही हुए हैं, पर जापान मे इस शिल्प के विभिन्न नामकरण हो गये हैं, जिससे इस शिल्प-विधि की व्यापकता तथा स्थिरता पर पूर्ण प्रकाश पडता है। जापान मे खुदाई-शिल्प अपने नामकरण के अनुसार १८ प्रकार के हैं।

उपर्युक्त खुदाई-शिल्प के लिए वहाँ विशेष प्रकार के औजार बनाये गये हैं, जिनसे ही ऐसे कार्यों का सम्पादन होता है। ऐसे औजारो की रूप-रेखा चित्र १९३ के द्वारा प्रदर्शित की गई है। प्राय: प्रत्येक खुदाई-शिल्प के लिए एक विशेष प्रकार का औजार होता है और इन औजारो की आवश्यकता विभिन्न कार्यों के लिए होती है। उदाहरण-स्वरूप सीधी रेखा और टेढी रेखा आदि की खुदाई के लिए अलग-अलग औजार होते हैं। उक्त प्रणाली के कार्य के लिए सात-आठ प्रकार के औजार व्यवहृत होते हैं, जो चित्र १९३ में दिये गये हैं।



(चित्र १९४)



(चित्र १-१)

औजारो की प्रयोग-विधि निम्नलिखित है। नीचे दिये गये सभी नाम जापानी भाषा के हैं—

(१) इतोवरी—यह कार्य ऐसे औजार से होता है, जिसका अर्द्धभाग कुछ वक्र होता है। इसमें खुदाई-कार्य करने के पहले ऊपर के हिस्से को जरा चौडाई की ओर से काट लेना पडता है। काटते समय बाँस की जड़ की ओर से ऊपरी भाग की तरफ छुरी चलाई जाती है, अन्यथा छिलके के हट जाने की सम्भावना रहती है। बाद, औजार की मदद से बाँस पर मनोनुकूल चित्र की आकृति तैयार करते हैं और तब हल्की तथा गहरी रेखा के सहारे बारीक रेखावाली आकृति उभार लेते हैं। इस काम के लिए व्यवहृत होनेवाला औजार कुछ चौडा तथा छोटा होता है,

‘मिया उसीवरी’ है। इसकी विविध आकृतियाँ चित्र १९६ में प्रदर्शित है।

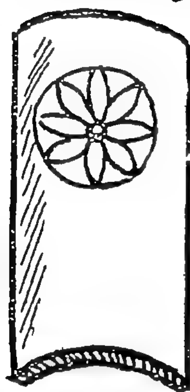
(१०) **सेनवरी**—यह पतली वटाली-जैसे एक विशेष औजार से की जाती है। यद्यपि इसकी विधि वही है, जो उपर्युक्त दो संख्यावाले की है, तथापि विभिन्नता यह होती है कि इसमें अत्यन्त हल्की तथा महीन खुदाईवाली रेखा रहती है, जिसकी गहराई अति क्षीण होती है।

(११) **सिनावरी**—यह वटाली-जैसे अर्द्धाकारवाले औजार से की जाती है। इसमें रेखाओं की गहराई कुछ अधिक होती है। इसे चित्र १९७ में देखें।

(१२) **मारुवरी**—यह भी अर्द्धाकार औजार से सम्पादित होती है। इसमें सब गहरी तथा गोलाकार खुदाई का कार्य होता है। इसका प्रदर्शन भी चित्र १९६ के तीसरे चित्र में हुआ है।

(१३) **फुदेवरी**—इसे भी अर्द्धाकार औजार से ही करते हैं। इसकी विशेषता यह है कि इसकी रेखाएँ मालूम पड़ती हैं—जैसे एक ही वार के वार में बनाई गई हैं। इसे चित्र १९६ के चौथे हिस्से में देखें।





(चित्र १९८)



(चित्र १९९)

(१४) **टाकावरी**—यह विधि भी अर्द्धाकार तथा त्रिकोणाकार औजार से की जाती है। इसकी खुदाई में रेखाएँ सीढ़ी की तरह ऊँचाई-निचाई में दिखाई गई होती हैं। यह विधि चित्र १९६ के पाँचवें हिस्से में प्रदर्शित है।

(१५) **सुकाशीवरी**—इसमें एक प्रकार की वटाली जैसा औजार व्यवहृत होता है, जो अर्द्धाकार तथा त्रिकोणाकार होता है। इसमें खुदाई इतनी गहरी होती है कि बाँस में आर पार छेद हो जाता है।

(१६) **रिटाइवरी**—इसे भी उपर्युक्त औजार से ही करते हैं। इसमें अधिक गोलाई का भाव रखकर खुदाई का काम किया जाता है।

(१७) **फुकावरी**—यह विधि भी अर्द्धाकार और त्रिकोणाकार औजार से ही सम्पन्न होती है। इसकी रेखाएँ भी विशेष रूप से गहरी होती हैं, जो लगभग हिताबरी की तरह की है।

(१८) **थिगवरी**—यह विधि केवल अर्द्धाकार औजार से ही की जाती है। इसमें स्तर प्रति (स्टाम्प) देकर ऊँचाई-निचाईवाली रेखाएँ दिखाई जाती हैं। चित्र १९७, १९८ और चित्र १९९ भी इन्हीं प्रक्रियाओं के चित्र हैं।

नोट—खुदाई करने के पहले कुछ बातों पर विशेष रूप से ध्यान देना होता है

पोकर की कार्य-विधि

पोकर एक प्रकार का यंत्र है, जिसके साथ बिजली की एक कलम लगी होती है। यंत्र के साथ एक प्लक भी लगा रहता है। कार्य आरम्भ करने के पहले प्लक को बिजली के साथ संलग्न कर दिया जाता है। प्लक के द्वारा जब बिजली दौड़ने लगती है, तब यंत्र और उसमें लगी नुकीली कलम गरम हो जाती हैं। पूरी तरह कलम के तप्त हो जाने पर उसे बाँस की बनी वस्तुओं पर अपनी इच्छित नक्काशी के अनुसार चलाते हैं, जिससे वस्तु पर नक्काशी बन आती है। इसकी विशेषता यह है कि तप्त कलम से नक्काशी बनाने के कारण जिधर-जिधर कलम घुमाई जाती है, उधर-उधर का स्थान जल जाता है। इसमें एक प्रकार से भूरा रंग आ जाता है, जो अत्यन्त स्थायी होता है। यह इतना स्थायी होता है कि वस्तु के नष्ट हुए बिना यह नहीं मिट सकता।

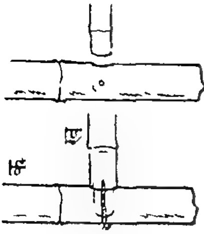
इसमें एक सतर्कता बरतनी पड़ती है कि प्लक लगाने के पहले नुकीली कलम लगे यंत्र को एक ईंट के ऊपर रखते हैं, नहीं तो यंत्र फ्यूज हो जाता है। एक ऐसा पोकर-यंत्र भी होता है, जो अलकोहल से जलता है। इसका व्यवहार उस जगह के लिए उपयुक्त है, जहाँ बिजली का प्रबन्ध नहीं है। इससे भी उसी तरह का सारा काम किया जाता है।

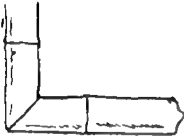
उपर्युक्त आधुनिक विधि का काम, हमारे यहाँ पहले अथवा आज भी, दूसरे तरीके से लोग करते हैं। वस्तुओं पर इच्छित नक्काशी बनाने के लिए ये लोग लोहे का साँचा बना लेते हैं, जिसे आग में तप्त कर, उससे वस्तु पर दाग देकर, काम निकालते हैं। आपने छाते की बेंट अथवा बजानेवाली बंशी पर इस आलंकारिक रूप को अवश्य देखा होगा, जो इसी विधि से तैयार किये गये होते हैं। इस पद्धति को रासायनिक पदार्थों से भी किया जा सकता है, जिसकी विधि नीचे दी जाती है—

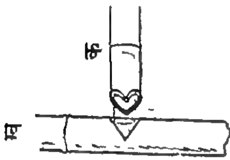
शीशे की बनी नुकीली कलम इस काम में व्यवहृत होती है। रसायन में नाइट्रिक एसिड अथवा सल्फ्युरिक एसिड को लेकर एक शीशे के पात्र में रख देते हैं। उस रसायन में शीशेवाली नुकीली कलम को डुबोकर बाँस या बाँस की बनी वस्तु पर मनोनुकूल आलंकारिक रूप प्रदान किया जाता है। वस्तु पर आलंकारिक रूप दे देने के बाद, वस्तु को आग पर गरम कर लेते हैं, तत्पश्चात् उसे ठंडा होने के लिए छोड़ देते हैं। ठंडा हो जाने पर उसे पानी में धो देते हैं। इसके बाद ठीक 'पोकर की कार्य-विधि' जैसी नक्काशी हो जाती है। इन दोनों में विभिन्नता यह है कि रसायन पद्धति से किया गया अलंकार पोकर-पद्धतिवाले अलंकार-जैसा उतना स्थायी नहीं होता, क्योंकि पोकर-पद्धतिवाले अलंकार में गहराई कुछ ज्यादा हो जाती है।

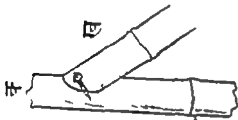
यह कार्य केवल बाँस की बनी वस्तुओं पर ही नहीं, बल्कि लकड़ी के बने विविध सामानों, चमड़े की बनी वस्तुओं, ताड़ के पत्तों एवं बाँस की कोंपलों पर भी होता है, जिससे इन वस्तुओं की सुन्दरता अलंकृत होने के कारण बढ़ जाती है। यह कार्य भारत के विभिन्न [illegible], पर इसमें रुचि-परिष्कार की आवश्यकता है।

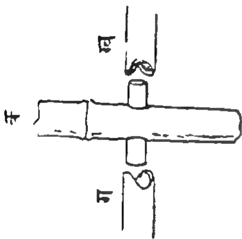
टेबुल, कुर्सी आदि बनाने के लिए उपयुक्त बॉस चुनने पड़ते हैं। ऐसी वस्तुओं के बनाने के लिए ध्यान रखना चाहिए कि न तो बाँस टेढ़े हो या न उनमें कीड़े लगे हों अथवा न छेदवाले हों। विशेषत ढाँचा तैयार करनेवाले बाँस के लिए इसका परीक्षण आवश्यक है। स्वच्छ, सुन्दर और मजबूत बॉस के ही ढाँचे तैयार होते हैं। इस काम के लिए बाँस की मुटाई और भीतर के खोखले अंश का परीक्षण आवश्यक है। जिस बाँस में जितना खोखला कम होगा, वह उतना ही इस काम के लिए उपयुक्त होगा। जो बॉस जितना ही ज्यादा नीसन (खोखला रहित) होगा, वह सेंककर टेढ़ा करने में सुविधाजनक होगा।



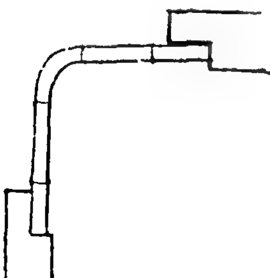






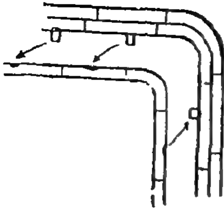


(चित्र २०३)

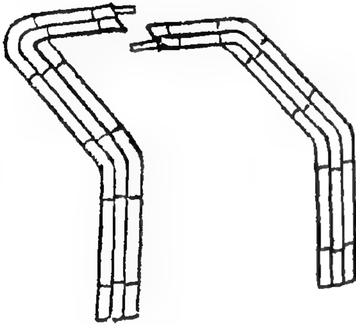


ऐसे उपयुक्त बॉस चुनकर उसकी गाँठों को तेज छुरी से सर्वप्रथम साफ कर दिया जाता है। यदि गाँठ बाँस के समतल भाग के बराबर में साफ नहीं होगी, तो उस स्थान पर इच्छानुकूल वह टेढ़ा नहीं होगा। गाँठ साफ करते समय इस बात पर भी पूरा ध्यान रखना पड़ता है कि कहीं बॉस की बाहरी त्वचा न छिल जाय। त्वचा के नष्ट होने से बाँस की सुन्दरता और मजबूती नष्ट हो जाती है। बाँस से गाँठों को हटाकर राख या धान की भुस्सी अथवा पुआल से मलकर उसे अच्छी तरह साफ कर लेना पड़ता है। बाद, आवश्यकतानुसार बाँस को टेढ़ा या सीधा करने के लिए गैसोलीन (Gassoline) लैम्प, चित्र २०० या ग्लास लैम्प, चित्र २०१ की सहायता लेनी चाहिए। लैम्पों पर बॉस के विशेष स्थान को गरम करते समय उसे इधर-उधर फेरते रहना पड़ता है, ताकि अधिक आँच लगने से बाँस जलने न पावे। इस समय आँच पर बाँस को सीधे न रखकर उसकी भाप से मदद लेनी पड़ती है। भाप से मदद लेने पर बाँस जलने नहीं पाता है और गरम हो जाता है।

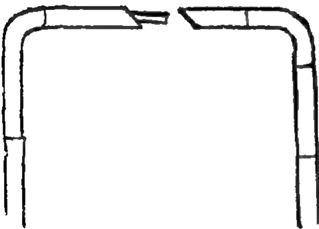
जब बाँस काम के लायक गरम हो जाय तब धीरे-धीरे दबाकर उसे मनोनुकूल टेढ़ा या सीधा कर लिया जाता है। इसके बाद उसे दबाकर रख दिया जाता है। इसकी विधि चित्र २०२ में दिखाई गई है, जो बाँस को सीधा कर रही है। टेढ़ा करने पर उसे



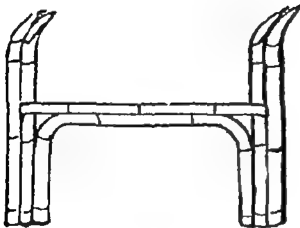
(चित्र २०६)



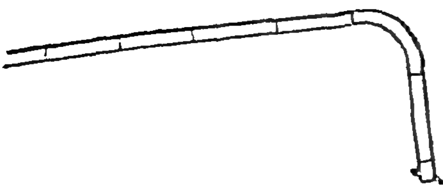
(चित्र २०७)



(चित्र २०८)



(चित्र २०९)



([illegible])

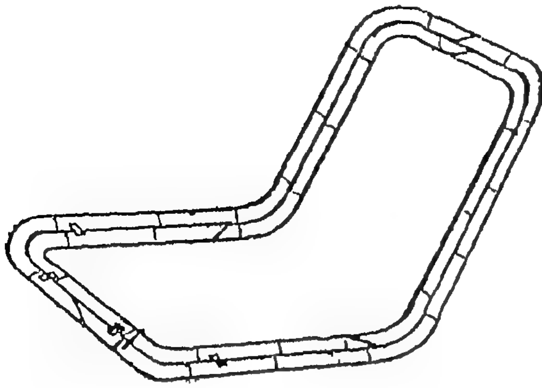
कागज पर बना लिया जाता है। इससे सुविधा यह होती है कि कारीगर चित्र के अनुसार ही, जहाँ जितनी जरूरत है, बाँस को टेढा करता है या घुमाता है। उसकी ऊँचाई-लम्बाई की माप भी वह ठीक करता रहता है। टेढे किये गये बाँस को एक फ्रेम मे डालकर कुछ देर छोड दिया जाता है। फ्रेम मे लगाकर रखे गये बाँस का चित्र २०४ मे दिया गया है। इस तरह फ्रेम लगाकर जितनी अधिक देर बाँस को छोड दिया जायगा, उतना ही ज्यादा अच्छा होगा।

जिस आकार में बाँस को टेढा करना चाहते हैं, अगर वैसा रूप देने में कठिनाई हो रही है तो एक तख्ते पर उस आकृति में सजा-कर काँटियाँ ठोंक दी जाती हैं। फिर बाँस को गरम करके उन काँटियों में फँसा दिया जाता है। अधिक देर तक छोड देने पर बाँस इच्छित आकार में टेढा हो जायेगा। इसकी विधि चित्र २०५ मे दिखाई गई है।

यदि कुर्सी में दो फ्रेम की आवश्यकता है तो दोनो फ्रेमों के पार्श्व भागो को रदे से रँद कर बराबर कर लिया जाता है। पहले दोनो फ्रेमो को सटाकर देख लेना चाहिए कि कहाँ-कहाँ लकडी की कील देकर जोडाई की जायगी। कील ठोकने के स्थानों में पहले चिह्न लगाकर उन स्थानो में छेद कर देते हैं और उन छेदो में कील ठोक कर फ्रेम को जोड देते हैं। इसकी सारी विधि चित्र २०६ मे प्रदर्शित है।

तीन बाँस के फ्रेम बनाकर जोड देने पर उसका आकार जिस प्रकार का होगा, उसका रूप चित्र २०७ मे दिखाया गया है। बाँई ओर का फ्रेम चित्र में बाँई ओर है और दाहिनी ओर का दाहिने भाग में।

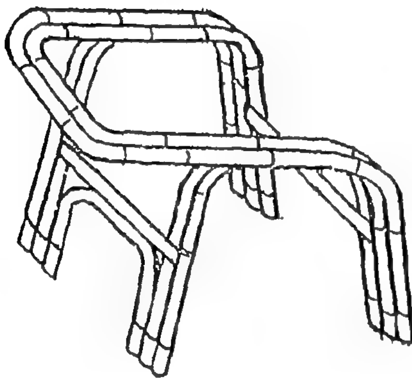
पैरवाले भाग को एक निश्चित ऊँचाई पर निशान लगाकर वहीं से मोड़ते हैं। इसे चित्र २१० में देखना चाहिए। फ्रेम के दूसरे भाग का भी, एक निश्चित चौड़ाई रखकर, उसी प्रकार मोड़ते हैं और तब मुड़े हुए भागों के दोनों पैरों को एक रस्सी तानकर बाँध देते हैं। बाँधने के बाद उसे उसी अवस्था में कुछ घण्टे छोड़ देते हैं। देखिए चित्र २११। इस बात का बराबर ध्यान रहे कि जब जहाँ मोड़ना हो, वहाँ तब बाँस को गरम कर लेना अतिआवश्यक है।



(चित्र २१४)

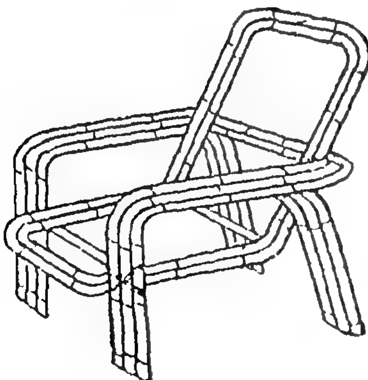
चित्र २१२ में दिखाया गया है कि पैर वाले बाँस के जोड़ने तथा आँटी लगा देने पर किस ऊँचाई के आधार पर बाँस को काटा जायगा।

इस प्रकार जब फ्रेम तैयार हो जाते हैं, तब उन्हें एक साथ मिलाकर जोड़ दिया जाता है, जिसका आकार चित्र २१३ में दिखाया गया है। बैठनेवाले फ्रेम को ही उक्त विधि से बनाकर, मोड़कर और फिर जोड़कर तैयार कर लिया जाता है, जो चित्र २१४ में प्रदर्शित है। सभी फ्रेमों के तैयार हो जाने पर सबको मिलाकर और काँटी ठोक कर जोड़ दिया जाता है, जिसका चित्र २१५ में दिखाया गया है।



(चित्र २१५)

कुर्सी के बिचले हिस्से को, जो फ्रेम के बीच भाग में होता है और जहाँ आदमी बैठता है, बड़ी सफाई से बनाना पड़ता है। बीच के बुनाई वाले स्थान को बनाते समय बाँसों के ऊपरवाले चिकने स्तर को हटा दिया जाता है और मोटा सा भी रेत में रगड़कर बराबर और गरम चिकना कर दिया जाता है। ऐसा करने से बाँसों के फाड़ने में आसानी होती है। फाड़ने की प्रक्रिया पहले ही बतलाई



(चित्र २१६)

(Chloroform) दिये विना लाह को ठीक से तरल नही होने देता है। किन्तु आइमो-एमील अलकोहल (Iso Amyl alcohol) मे शीघ्र घुलन की शक्ति मौजूद रहती है और वह जल्दी सूखता भी नही है। इसमे तरलता की मात्रा इतनी अधिक है कि इसे पानी का छीटा अथवा हवा देकर सुखाना पडता है।

(२) यह भी देखा गया है कि यदि (Diethyl phthalate) के साथ सामान्य परिमाण मे क्लोरोफार्म मिलाकर छानते हैं, तो तरलता मे आधा ही फल मिलता है।

(३) कार्बन टेट्राक्लोराइड (Carbon tetrachloride) मिलाकर जब लाह को छानते हैं, तब भी आधा ही घोल होता है।

(४) Chloroform और Tetrachloride बराबर परिमाण में मिलाकर छानते हैं तो भी आधा ही लाभ होता है।

(५) लाह के साथ आइसो-एमील अलकोहल (Iso Amyl alcohol) और क्लोरोफार्म मिलने पर भी आधा ही घुलन होता है। किन्तु, इसमें अलकोहल अपने रूप में परिणत नही होता है। फिर भी इस पद्धति से आधी ही सफलता मिलती है।

(६) यदि लाह के साथ आइसोएमील अलकोहल (Iso Propyl alcohol) और आइसोनक्लीर अलकोहल (Isochloro alcohol) मिलाया जाय, तो भी आधा ही फल प्राप्त होता है।

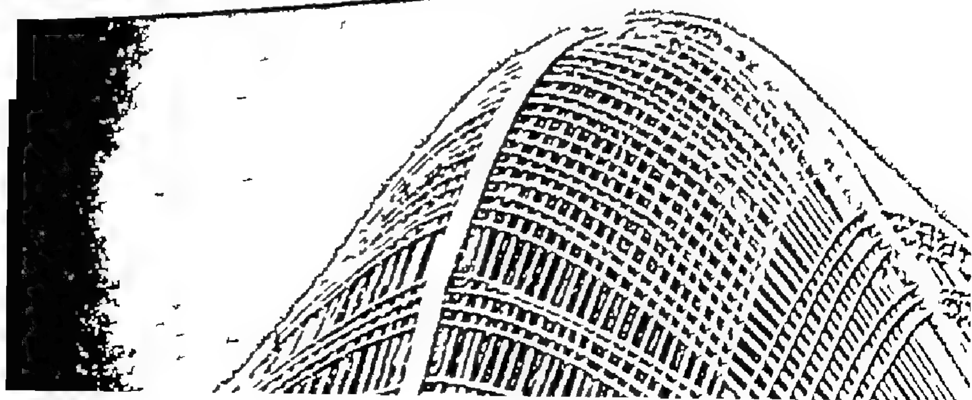
(७) लाह के साथ आइसोएमील अलकोहल और क्लोरोफार्म मिलाकर जो लेप बनाया जाता है, यदि उसके साथ युरिया रेजिन पेट (Uria Resin Paint) मिला दिया जाय, तो इसी का व्यावसायिक नाम इज्युमिलाक (Ozumilac) होता है। किन्तु यह नकली रेजन (Resin) मोनथेटीक रेजन (Shysenthic Resin) है। इनका बराबर-बराबर भाग मिलाकर लेप (Paste) बनाते हैं, जिससे आधा फल मिलता है।

(८) आइमो-एमील और अलकोहल के साथ कुछ मिथिल अलकोहल मिलाते हैं। इसमें उपरिनिर्दिष्ट उरियारेजिन आधा भाग और टानोको (Tonoko) आधा मिलाकर तब प्रयोग किया जाता है।

(९) चपडे के साथ मिथिल अलकोहल (Methyl alcohol) और फेनोल रेजन (Phenol Resin) तथा टोनको (Tonoko) आधा भाग एव पानी ५% मिलाकर लेप बनाया जाता है। इसका परिमाण इस प्रकार है—

३७	प्राचीन भारत की सांग्रामिकता—पं० रामदीन पाण्डेय	६ ५०
३८	बाँसरी बज रही—श्रीजगदीश त्रिगुणायत	८ ००
३९	चतुर्दशभाषा-निबन्धावली—(संकलित)	४ २५
४०	भारतीय कला को बिहार की देन—डॉ० विन्ध्येश्वरीप्रसाद सिंह	७ ५०
४१	भोजपुरी के कवि और काव्य—श्रीदुर्गाशंकरप्रसाद सिंह	५ ७५
४२	पेट्रोलियम—श्रीफूलदेव सहाय वर्मा	५ ५०
४३	नील-पंछी—(मूल लेखक मॉरिस मेटरलिंक) अनु० डॉ० कामिल बुल्के	२ ५०
४४	लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ मानभूम ऐण्ड सिंहभूम	४ ५०
४५	षड्दर्शन-रहस्य—पं० रंगनाथ पाठक	५ ००
४६	जातककालीन भारतीय संस्कृति—श्रीमोहनलाल महतो 'वियोगी'	६ ५०
४७	प्राकृत भाषाओं का व्याकरण—मूल लेखक : श्रीरिचर्ड पिशल	२० ००
४८	दक्खिनी हिन्दी-काव्य-धारा—महापण्डित राहुल सांकृत्यायन	६ ००
४९	भारतीय प्रतीक-विद्या—डॉ० जनार्दन मिश्र	११ ००
५०	संतमत का सरभंग-सम्प्रदाय—डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री	५ ५०
५१	कृषिकोश (प्रथम खण्ड)—संपादक डॉ० विश्वनाथ प्रसाद	३ ००
५२	कुँवरसिंह-अमरसिंह—अनु० पं० छविनाथ पाण्डेय	५ ००
५३	मुद्रण-कला—पं० छविनाथ पाण्डेय	७ २५
५४	लोक-साहित्य : आकर-साहित्य-सूची—सं० आचार्य नलिनविलोचन शर्मा	० ५०
५५	लोकगाथा-परिचय—सं० आचार्य नलिनविलोचन शर्मा	० २५
५६	लोककथा-कोश—सं० आचार्य नलिनविलोचन शर्मा	० ३७
५७	बौद्धधर्म और बिहार—पं० हवलदार त्रिपाठी 'सहृदय'	८ ००
५८	साहित्य का इतिहास-दर्शन—आचार्य नलिनविलोचन शर्मा	५ ००
५९	मुहावरा-मीमांसा—डॉ० ओमप्रकाश गुप्त	६ ५०
६०	वैदिक विज्ञान और भारतीय संस्कृति—पं० गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी	५ ००
६१	पंचदश लोकभाषा-निबन्धावली	४ ५०
६२	हिन्दी-साहित्य और बिहार (७वीं से १८वीं शती तक)—सं० आचार्य शिवपूजन सहाय	५ ५०
६३	कथासरित्सागर (प्रथम खण्ड)—मूल लेखक महाकवि सोमदेव भट्ट	१० ००
६४	भारतीय शब्दकोश (शकाब्द १८८२)—सं० श्रीगदाधरप्रसाद अम्बष्ठ	६ ००
६५	अयोध्याप्रसाद खत्री-स्मारक ग्रन्थ	५ ००
६६	सदलमिश्र-ग्रन्थावली—सं० आचार्य नलिनविलोचन शर्मा	५ ००
६७	रंगनाथ रामायण (तेलुगु से अनूदित)—अनु० श्री ए० सी० कामाक्षि राव	६ ५०
६८	गोस्वामी तुलसीदास—स्व० श्रीशिवनन्दन सहाय	५ ५०

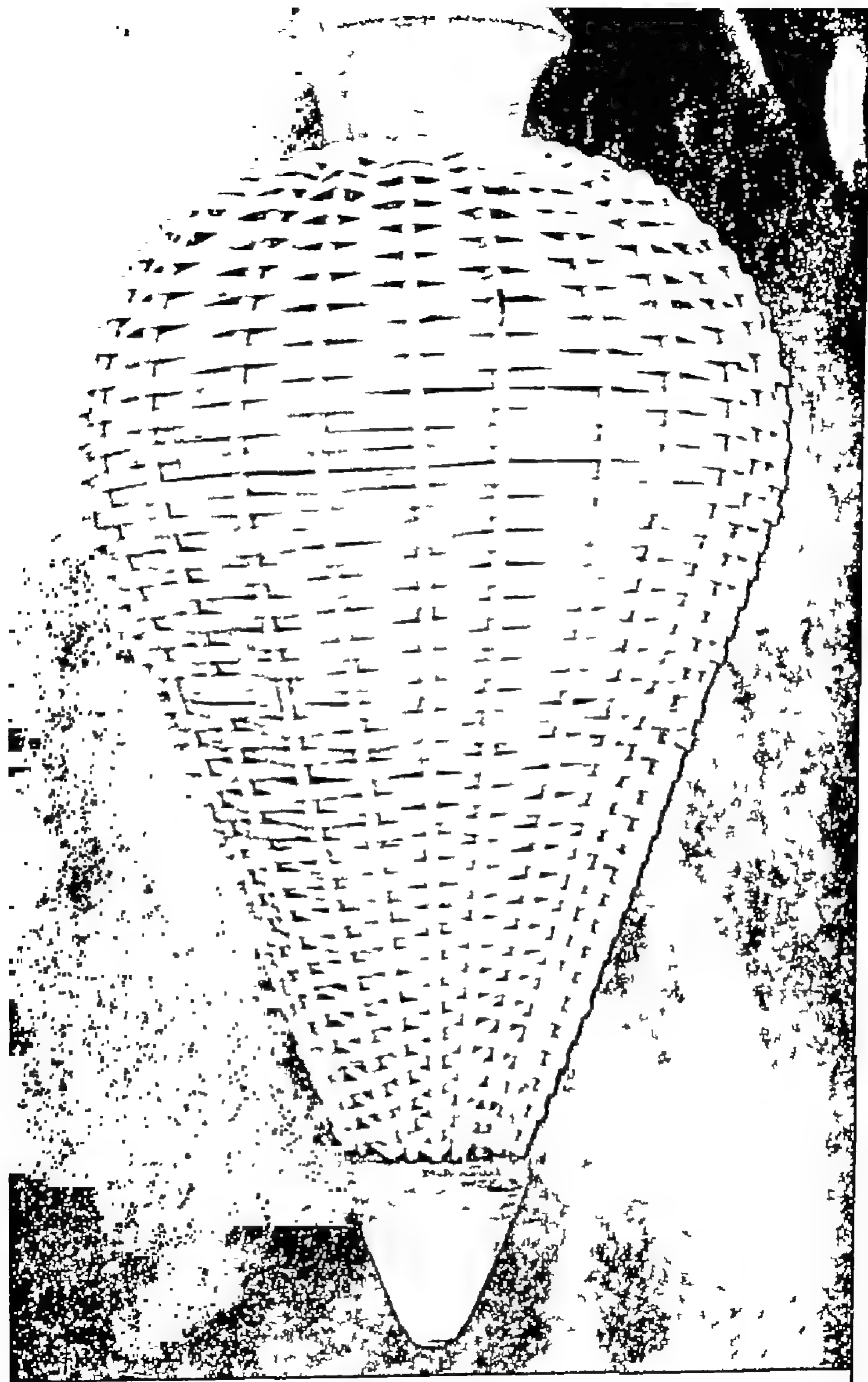
*

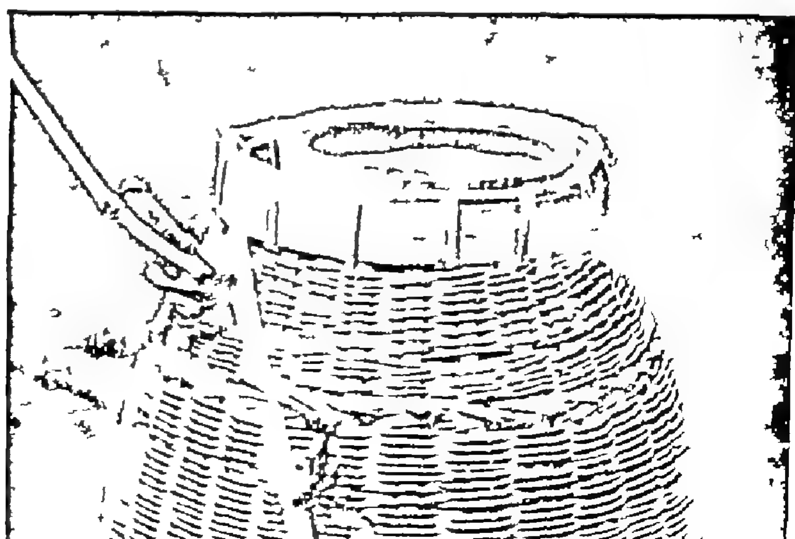


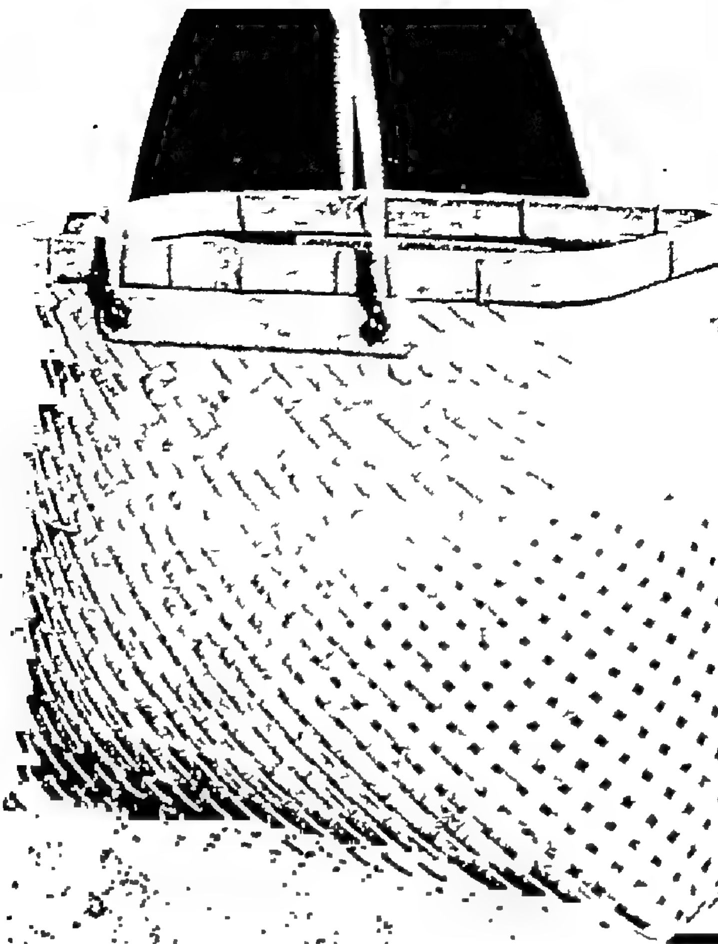


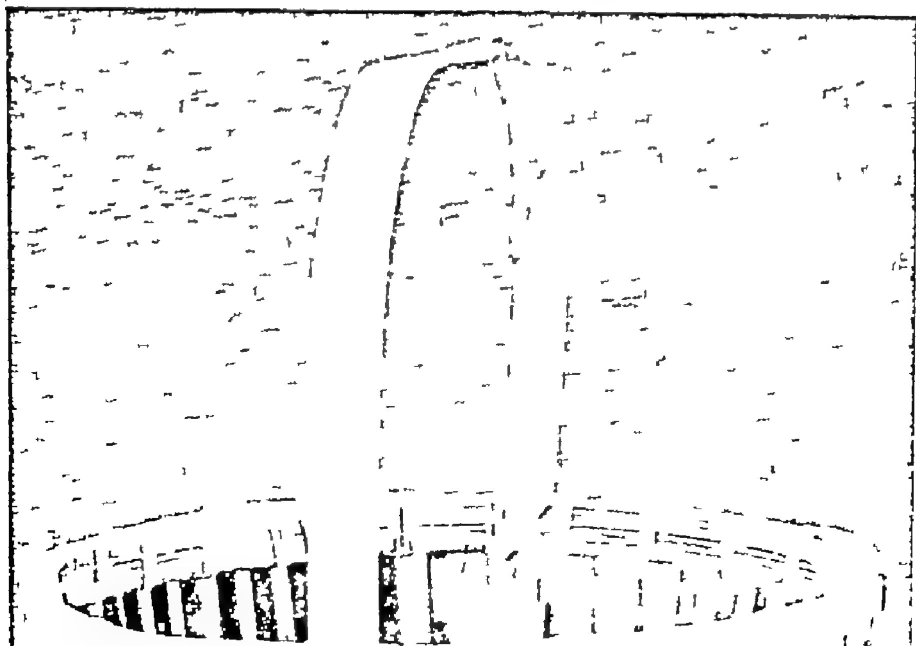
हैण्ड बैग के अन्य नमूने। ऊपर का नमूना केवल बाँस से निर्मित है।

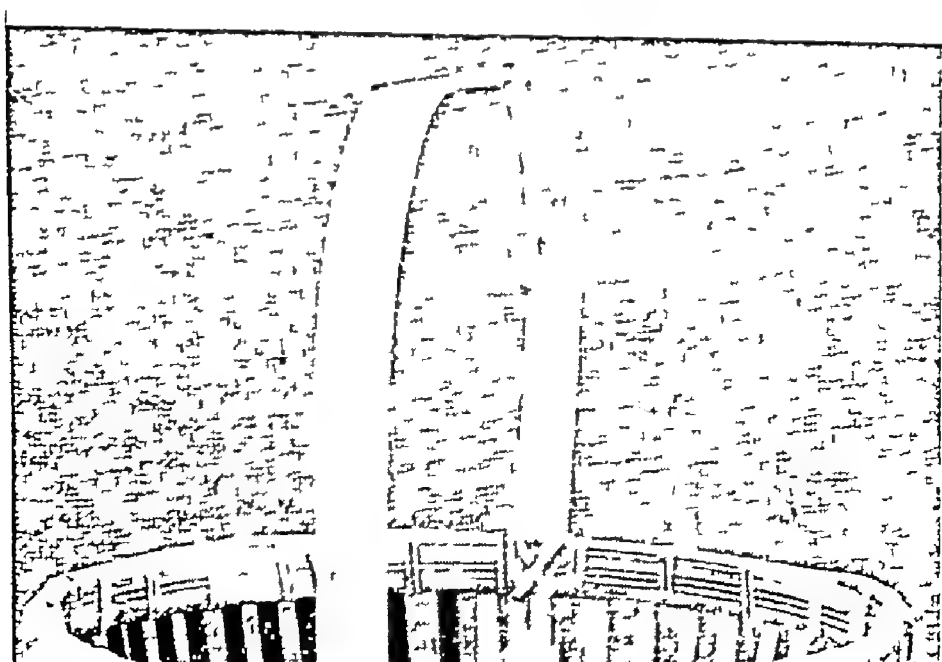
नीचे—एक बैग और टेबुल-मेट, जो बाँस की कोपल से तैयार हुए हैं।

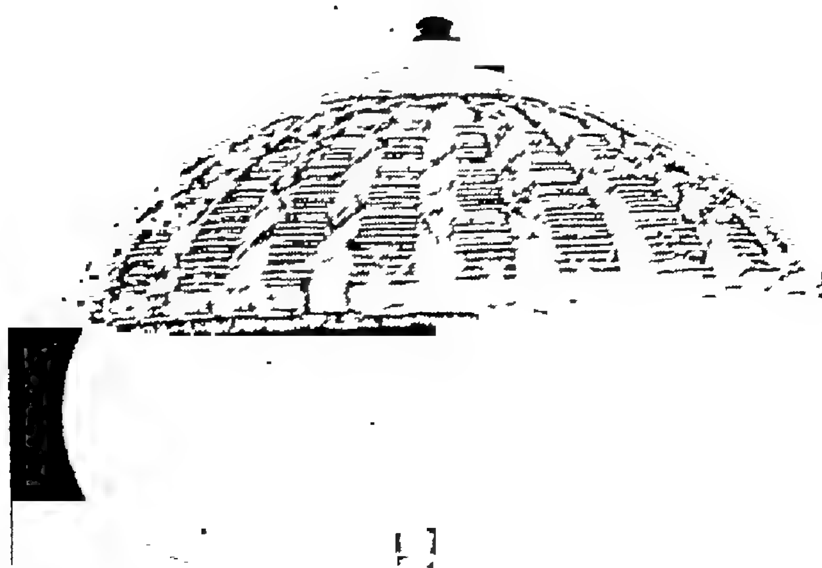




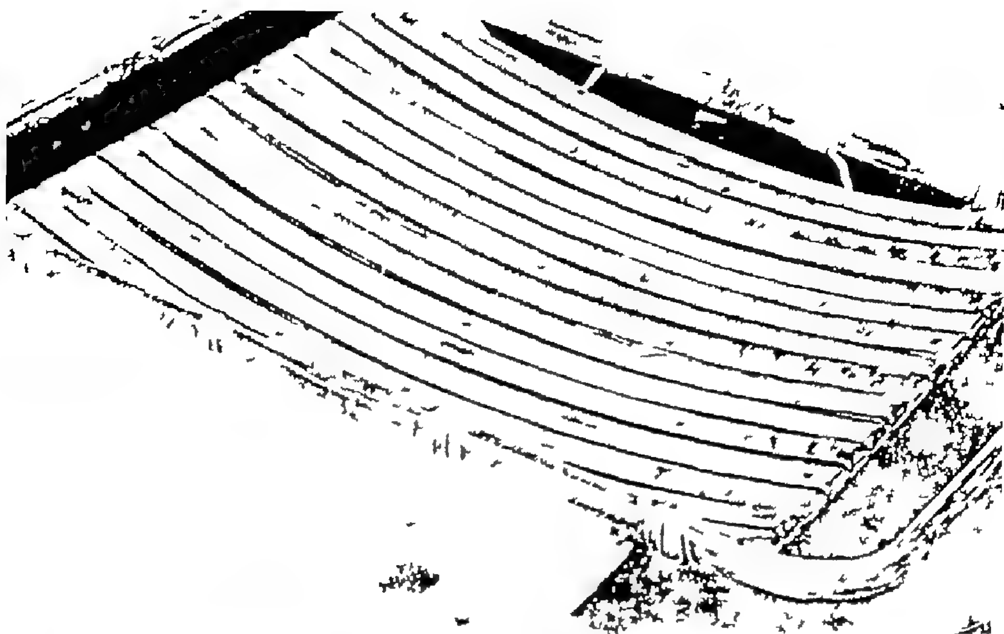




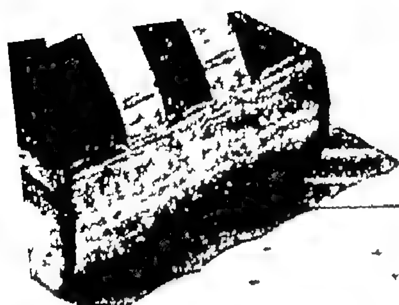
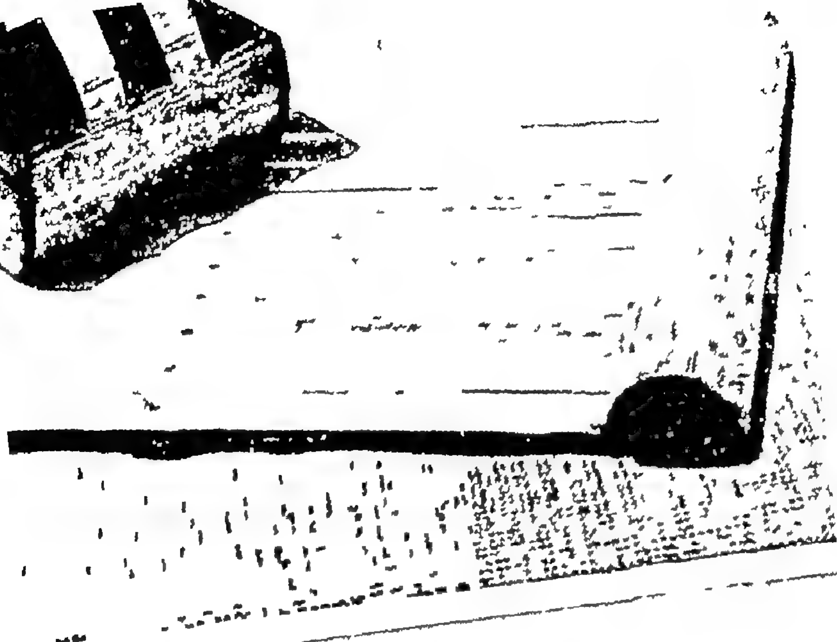
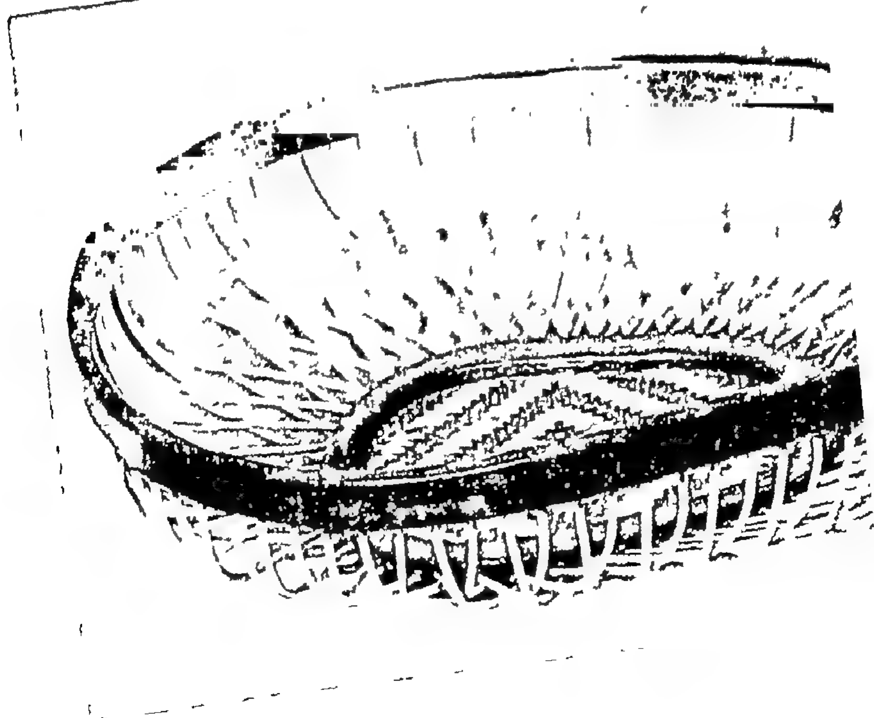




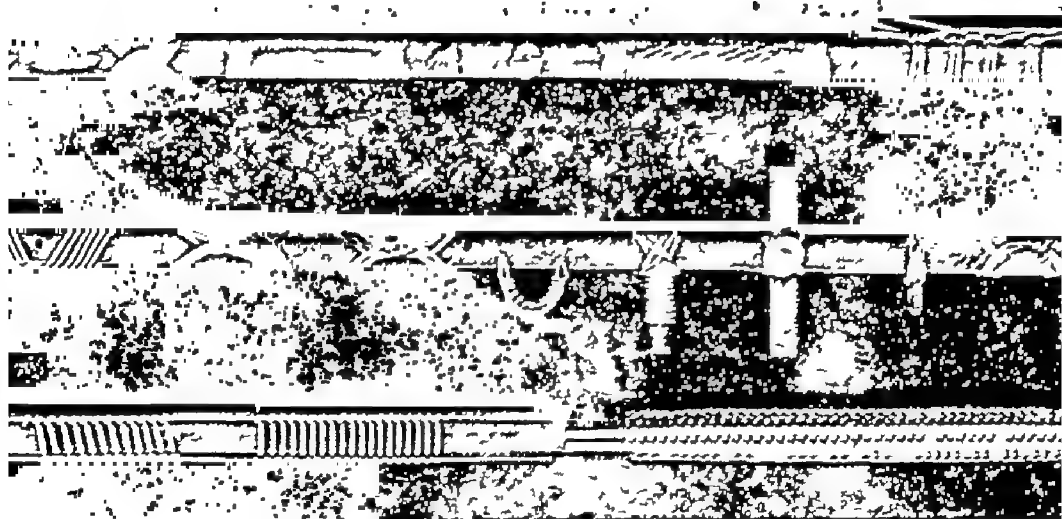


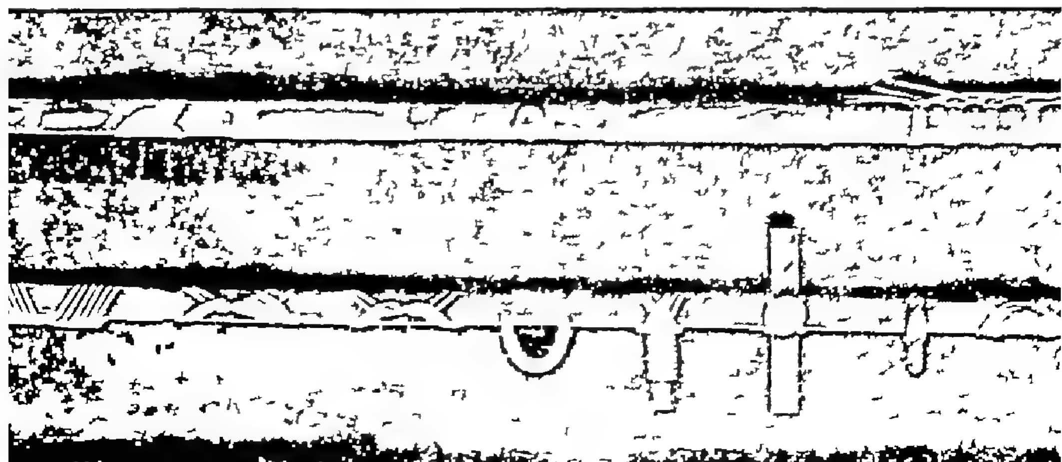


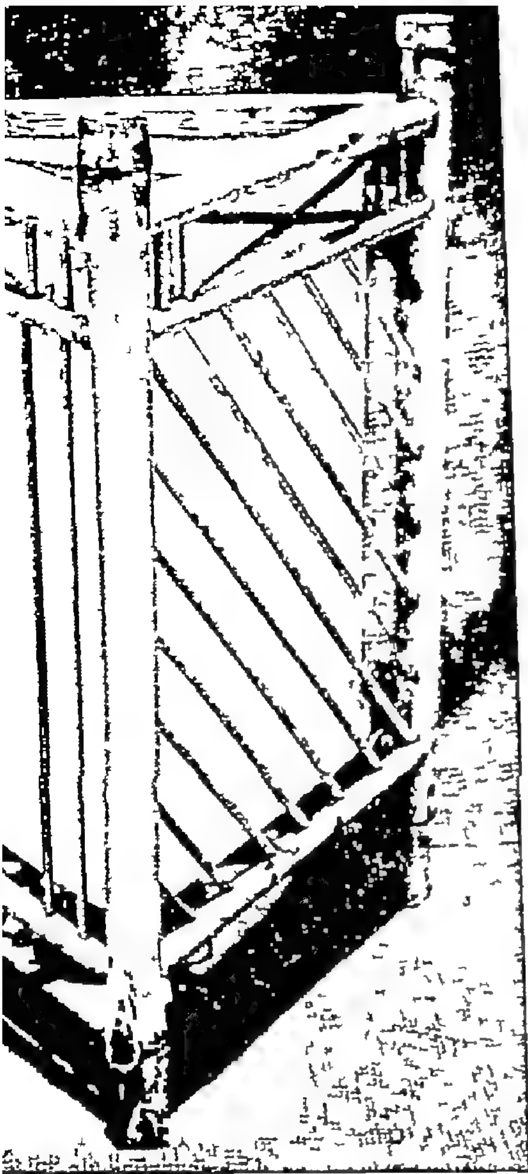


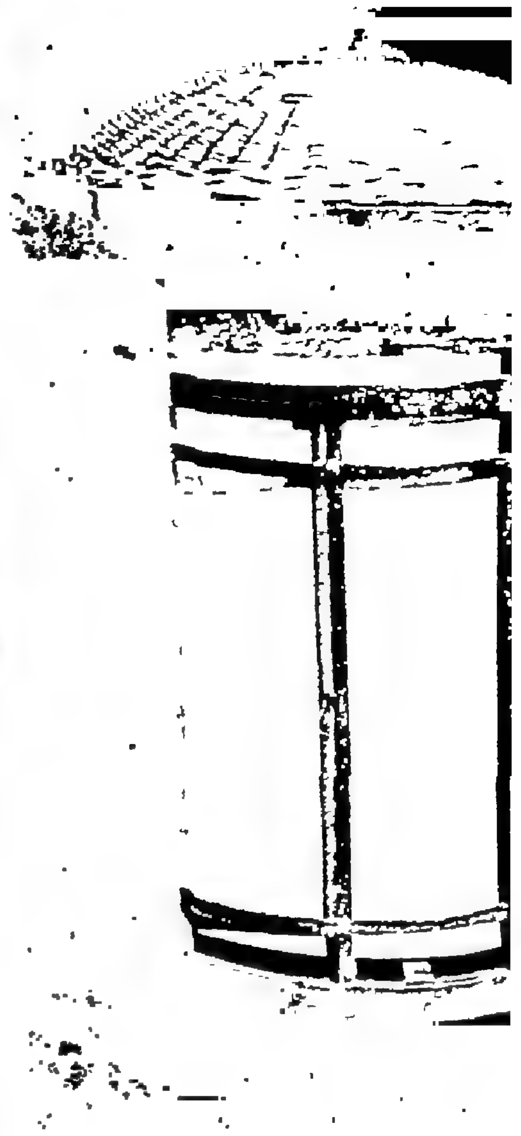




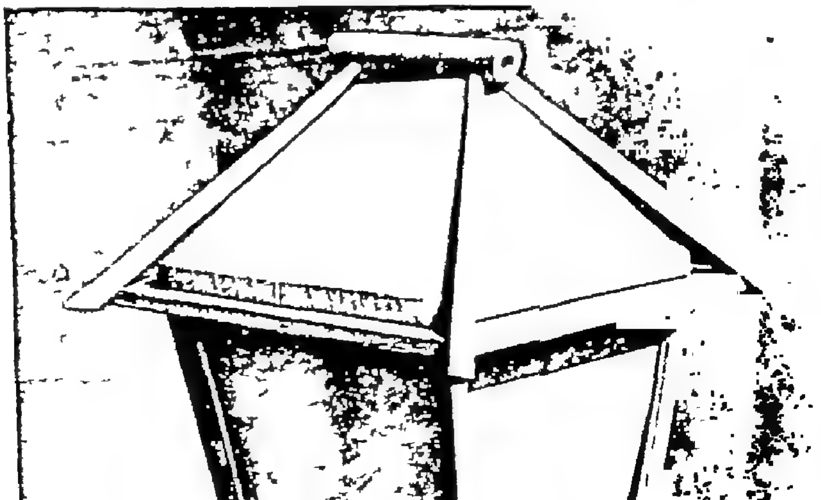


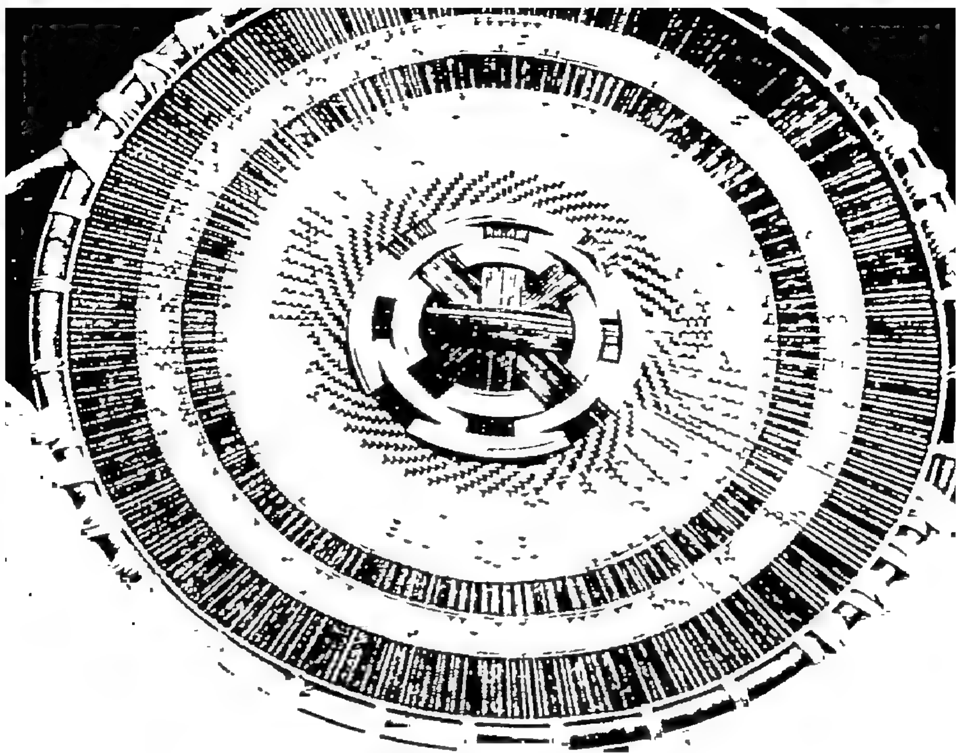




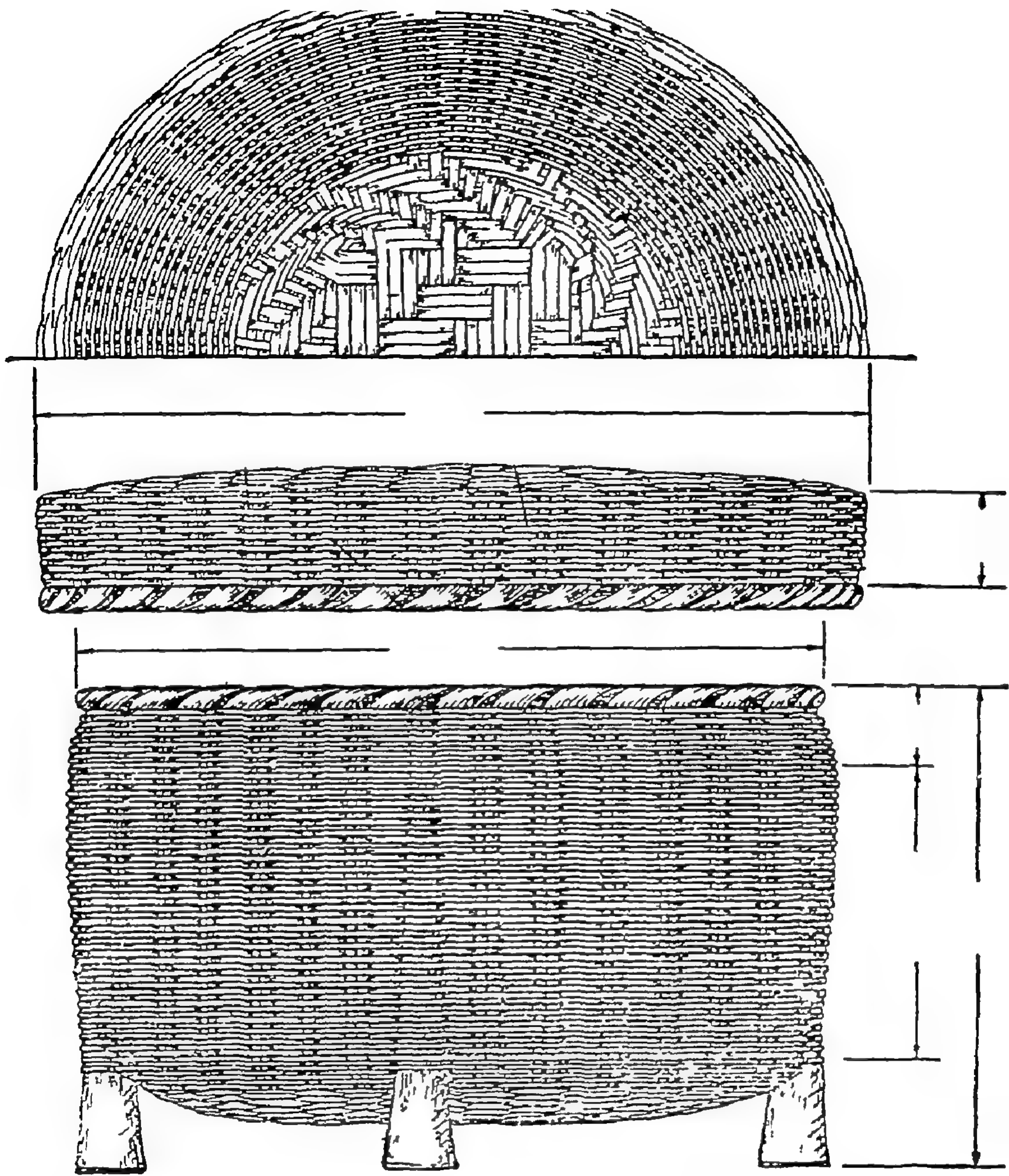












पुस्तक रखने की पटी का नमूना

वक्तव्य

बिहार-सरकार द्वारा संस्थापित और संचालित बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के तत्त्वावधान में प्रति वर्ष अधिकारी विद्वानों द्वारा अपने शोधविषयक साहित्य पर भाषणमाला का आयोजन किया जाता है। तदुपरान्त वे भाषणमालाएँ पुस्तकाकार प्रकाशित होती हैं। परिषद् का यह परम सौभाग्य है कि अपने जीवन के प्रारम्भ-काल से ही उसे भारत के मूर्धन्य विद्वानों का हार्दिक सहयोग और मङ्गलमय आशीर्वाद प्राप्त है। प्रस्तुत 'वेणु-शिल्प' उसी प्रकार की भाषणमाला का एक ग्रन्थ-रूप है।

भारत-प्रसिद्ध चित्रकार श्रीउपेन्द्र महारथी ने गत १९५७ ईसवी में वेणु-शिल्प में विशेष शिक्षा प्राप्त करने के लिए जापान की यात्रा की थी। डेढ़-पौने दो साल तक वहाँ के विभिन्न कला-संस्थानों में घूम-घूमकर शिक्षा प्राप्त कर वे पटना लौट आये। परिषद् के आद्य संचालक आचार्य श्रीशिवपूजन सहाय ने वेणु-शिल्प पर भाषण देने के लिए उन्हें आमंत्रित किया। श्रीमहारथीजी ने प्रसन्नतापूर्वक उनका आमंत्रण स्वीकार किया। परिणामस्वरूप, मार्च १९५९ ईसवी में, कदमकुआँ-स्थित बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन-भवन में वेणु-शिल्प-सम्बन्धी एक वृहत् प्रदर्शनी खोल कर, अपने भाषणों से श्रीमहारथी ने कई दिनों तक श्रोताओं और दर्शकों को आश्चर्यान्वित, आनन्दित और आप्यायित किया। बाँस-जैसी साधारण-सी दीख पड़नेवाली वस्तु से कैसी-कैसी आश्चर्य-जनक, नेत्ररंजक और मनोमोहक सामग्री तैयार की जा सकती है, देखते ही बनता था। श्रीमहारथी ने ज्ञान और आनन्द का एक नया संसार ही रच दिया है और निश्चय ही यह इस विशिष्ट विषय पर हिन्दी क्या, किसी भी भाषा में पहली पुस्तक है। उनकी भाषणमाला को आज पुस्तक के रूप में प्रकाशित कर सर्वसाधारण पाठकों के सामने प्रस्तुत

भारतीय कला और संस्कृति के प्रतिमूर्ति

एवं

मेरे गृह-शिल्प-कला के मार्ग-प्रदर्शक

श्रीसुधेन्द्रनाथ मजुमदार आइ० सी० एस्०

के

कर-कमलों में

सादर समर्पित

—महारथी

भारतीय कला और संस्कृति के प्रतिमूर्ति

एवं

मेरे गृह-शिल्प-कला के मार्ग-प्रदर्शक

श्रीसुधेन्द्रनाथ मजुमदार आइ० सी० एस्०

के

कर-कमलों में

सादर समर्पित

—महारथी

FOREWORD

Bamboo is one of the most luxuriant and decorative of nature's gifts to man Somewhat like the cocoanut palm, it serves a variety of purposes It adds beauty, lends coolness and shade to the grounds. Its shoots are eaten as delicacy, and used in medicine for their healing properties As a whole it is used for a large variety of things from thatching a roof and covering the floor, to fashionable hand-bags, bowls and mugs and even furniture In fact, its uses are infinite and at a pinch a whole household it seems can be fitted up by bamboo Shri Maharathi has in this very valuable book not only described but illustrated elaborately yet lucidly through diagrams, the many uses to which this single tree can be put

This book however is much more than a catalogue or ennumeration of items He gives its very interesting historical background especially its being closely woven in with Buddhism, its growth and with its wider ramifications information which perhaps comes to many for the first time This however reassures us that bamboo has

प्राक्कथन

प्रकृति ने मानव की सुख-समृद्धि और साज-सज्जा के लिए जितने भी साधन दिये हैं, उनमें वेणु (बाँस) का स्थान सर्वोपरि है। लगभग नारियल के ही पेड़ के सदृश वेणु के भी अनेक उपयोग हैं। इससे बस्ती की शोभा और सुषमा बढ़ती है और यह उसे शीतलता तथा छाया प्रदान करता है। इसकी कोंपल सुस्वादु होती है और लोग सुरुचि के साथ खाते हैं। इसके आरोग्यप्रद गुणों के कारण इसका उपयोग ओषधि के रूप में भी होता है। सारांश यह कि यह छप्पर, छाजन और चटाई से लेकर आकर्षक हाथ बैग (झोला या बटुआ), प्याला, झारी (गड़ुआ) तथा उपस्कर (खाट, चौकी, कुर्सी, मेज इत्यादि) तक निर्मित करने के काम में व्यवहृत होता है। वास्तव में इसके उपयोग अनगिनत हैं। संक्षेप में यह कि गृहस्थी का सारा घर वेणु के विविध उपादानों से सजाया जा सकता है। महारथीजी ने इस बहुमूल्य पुस्तक में केवल वेणु के अनेक उपयोगों का ही वर्णन नहीं किया है, अपितु विस्तार के साथ, स्पष्टतापूर्वक, अपने चित्रों के सहारे, उनको अच्छी तरह समझाया भी है।

यह पुस्तक केवल उपयोग-विधियों की सूची-मात्र अथवा उनकी गणना करानेवाली ही नहीं है, प्रत्युत लेखक ने इसमें वेणु के ऐतिहासिक पृष्ठभूमि की अनेक रोचक बातें भी बतलाई हैं। विशेषतः बौद्धधर्म से वेणुशिल्प के घनिष्ठ सम्बन्ध और इसके विकास तथा विस्तृत उपयोग-वैविध्य पर भी प्रकाश डाला है। वेणु के सम्बन्ध में उन्होंने जो ज्ञातव्य विवरण प्रस्तुत किये हैं, वे बहुतों के लिए तो सम्भवतः बिलकुल ही नये होंगे। इस प्रकार यह निश्चित बात है कि सुदूरवर्ती जापान में वेणु-निर्मित टिकाऊ वस्तुओं के हमारे देश में प्रचलित होने के [illegible] भारत में वेणु एक सर्वमान्य वनस्पति

OPINION

I have known Sri Maharathi and his work as an artist, designor, decorator, and craftsman since I first came in contact with him in 1952 when I was Governor in Bihar (1952-57) He is a rare type His love of art is something enviable But I did not suspect that he would develop into a good author on a subject which was not directly his own

He turned to full use his visit to Japan and applied himself to bamboo-craft like a devoted student This book seems to be the fruit of his deep and single-minded study of the craft in Japan and his subsequent experiments in India

The book bids to be a complete Text-Book on the subject both on the theoretical and practical side and also on the culture of this kingly grass of our rich forests. I hope that it would prove useful to every one who is interested in the development of the craft and that a full translation or an abridged version of it would soon appear in the different languages of India

R. R. DIWAKAR
Chairman
Gandhi National Memorial Fund

RAJGHAT, NEW DELHI-1

सम्मति

मैं श्रीमहारथी और उनके कार्यों से भली भाँति परिचित हूँ। ये एक अच्छे कलाकार, परिकल्पक, सजावक तथा शिल्पकार हैं। सन् १९५२ ई० में पहली बार मैं इनके सम्पर्क में आया। उस समय (१९५२-५७) मैं बिहार का राज्यपाल था। ऐसे व्यक्ति विरल हैं। कला के प्रति इनका अनुराग स्पृहणीय है। परन्तु, मैं सोच नहीं सकता था कि ये एक ऐसे विषय का निष्णात लेखक भी हो सकते हैं, जिससे इनका सीधा सम्बन्ध नहीं है।

इन्होंने एक अध्यवसायी विद्यार्थी के रूप में वेणु-शिल्प में अपने-आपको खपाकर अपनी जापान-यात्रा को पूर्णरूपेण सफल बनाया है। प्रस्तुत पुस्तक, इनके जापान-प्रवास के समय उक्त शिल्प के गम्भीर एवं एकनिष्ठ अध्ययन, तत्पश्चात् भारतवर्ष में उसके प्रयोग का प्रतिफलन प्रतीत होती है।

सैद्धान्तिक एवं प्रयोगात्मक, दोनों ही दृष्टियों से यह अपने विषय का सर्वथा मौलिक ग्रंथ है। हमारे समृद्ध वनों में उत्पन्न इस वनस्पतिराज वेणु के परम्परागत विविध उपयोगों पर भी अपने ढंग की यह एक ही पुस्तक है। हमें विश्वास है कि इस शिल्प के विकास में अभिरुचि रखनेवाले प्रत्येक व्यक्ति के लिए यह पुस्तक उपयोगी सिद्ध होगी। पूरी पुस्तक का अथवा इसके संक्षिप्तीकरण का अनुवाद भारतवर्ष की विभिन्न भाषाओं में प्रस्तुत होगा, ऐसी आशा है।

प्रस्तावना

हस्तशिल्पों का विकास किस काल में हुआ, यह ठीक-ठीक बताना कठिन है। किन्तु, प्राणिशास्त्रवेत्ताओं और समाजशास्त्रियों की राय में मानव के विकास में उसके हाथों और अँगुलियों की देन सर्वोपरि है। मनुष्य ने अपने विकास के क्रम में हिमयुग की आर्द्रता से बचने के लिए सर्वप्रथम पहाड़ों की गुफाओं को अपना घर बनाया होगा और जीवन-रक्षा के लिए जानवरों का शिकार कर एवं फलमूल को तोड़-खोदकर अपने पेट की समस्या हल की होगी। अपनेसे बलवान् वन्य पशुओं का सामना करने के लिए तथा आखेट की सुविधा के लिए भी उसने उस समय पत्थर तथा हड्डी के कठोर टुकड़ों का प्रहरण के रूप में प्रयोग करना भी सीखा। इस प्रकार अपने अध्यवसाय, बुद्धि और अनुभव के उपयोग से उसने प्रकृति के अद्भुत रूपों और अपने सहचर प्राणियों पर भी प्रभुता स्थापित करने का उपक्रम किया, जिसमें उसके हाथों का ही वैशिष्ट्य प्रमुख रहा।

भूगर्भ ने प्रमाणित कर दिया है कि आदिम मनुष्य के प्रारंभिक हथियार पत्थर और हड्डी के थे। सादे पत्थर के अनगढ़ टुकड़े ही उस समय हथियार के काम में लाये गये थे। कालक्रम से मनुष्य ने फिर अपने हाथों के सहारे पत्थरों से हथियारों का गढ़ना भी सीख लिया। पत्थरों की गढ़ाई में वह उस समय निपुण नहीं हो सका था, अतः घने जंगलों में जाकर और दुर्गम पर्वतों पर चढ़कर दूसरे पत्थरों को काटना और उससे अच्छे हथियारों का बनाना उसके लिए कठिन था। लेकिन हाथों से हथियारों एवं उपकरणों का प्रयोग कर वह जीवन-यापन में समस्त प्राणियों का अग्रणी बन गया। शारीरिक और पाशविक बल में दूसरे-दूसरे प्राणियों से कम होते हुए भी वह शस्त्र चलाकर बड़े-से-बड़े जीवों पर विजयी हुआ। इस प्रकार, आदिम मनुष्य का इतिहास उसके हाथ और उसकी बुद्धि की कुशलता पर आधारित समाज के विकास का इतिहास स्वीकृत प्रतीत होता है। इन सारी घटनाओं की समीक्षा करने पर ऐसा कहा जा सकता है कि शिल्पों के विकास का भी आदिम इतिहास हो सकता है।

उसे बाँस के सम्बन्ध मे ऐसी चेतना आई कि बाँस म दृढता है, मजबूती है और लचीलापन भी है। उसे इच्छानुसार सीधा और टेढा किया जा सकता है। इन्ही भावनाओ को मनुष्य ने जब क्रियात्मक रूप दिया, तब उसने जीवन के विभिन्न कार्यों मे उसे सहायक जानकर उसकी उपयोगिता पर विश्वास कर लिया। उपयोगिता की दृष्टि से डडा, धनुष, तीर और तरकस का निर्माण बाँस का प्रथम और महत्त्वपूर्ण कार्य रहा होगा। यह कार्य प्रस्तर और लोह-युग मे ही सम्पादित हुआ होगा। इसलिए कि प्रस्तर और लौह-युगो मे जगली जानवरो से रक्षित होने के लिए कुछ औजारों का निर्माण हो चुका था और अविकसित रूप मे मनुष्य कुछ कृषि-कार्य भी करने लग गया था। उन्ही औजारो मे से कुल्हाडी या डाल काटनेवाले हथियार भी उसके सामने आये और उनका उपयोग मनुष्य ने अन्यान्य वृक्षो या पौधों की तरह बाँस पर भी किया।

धनुष और बाण का निर्माण हो जाने के बाद एक साथ कई बाणो को लेकर चलने की समस्या भी उसके सामने आई होगी। इसके लिए बाँस के खोखलेपन पर उसका ध्यान गया। इससे एक साथ कई बाण रखने की समस्या स्वत. हल हो गई। कई पोरो का बाँस काट कर उसमे बाण रखना उसने सीखा। वही बाद मे तरकस नाम से प्रचलित हुआ। अब मनुष्य इच्छानुसार बाणो को तरकस मे रख और उसे पीठ पर बाँधकर एव धनुष को कन्धे पर डाल कर घने जगलो में निर्भीक विचरण करने लगा।

जनपदों के विकास के कारण और गृहस्थी मे स्थिरता आ जाने पर मानव को दिन-प्रतिदिन विविध सामानों की आवश्यकता भी पडी। इस काम मे भी बाँस उसके लिए सबसे ज्यादा व्यावहारिक प्रमाणित हुआ। यह छप्पर और टाटी बनाने के काम मे भली भाँति आने लगा। इतना ही नही, नदियो को पार करने के लिए भी मनुष्य बाँसो का बेडा बना लेता था और सुविधापूर्वक नदी-सतरण कर जाता था। पशुओं के बाँधने के खूँटे, अन्नों के रखने की कोठी, दीवार मे लगाने की टाटी, पशुओ से फसलों को बचाने के लिए घेरे के बाडे, पशुशालाओं के द्वार के बाडे, पिटारी, सूप, चलनी, सीढी मचान आदि बनाने मे बाँस मनुष्य के लिए वरदान रूप मे मिला।

वेदों के बाद हम वेणु-शिल्प की चर्चा 'शतपथ ब्राह्मण' में मिलती है। यज्ञ-क्रियाओं के सम्पादन में शालाओं के निर्माण-हेतु बाँस का प्रयोग भली भाँति होता था—

तच्छालां वा विमितं वा प्राचीनवंशमिन्वन्ति। ३, १, ६

अर्थात्—यज्ञशाला के निर्माण में पुराने पके बाँसों का ही वे व्यवहार करते थे और जिनसे यज्ञशाला सुदृढ़ बनाई जाती थी।

शतपथ का ही एक दूसरा मंत्र है, जिसमें कहा गया है कि उदीची दिशा में होनेवाले बाँसों से शाला का निर्माण करना चाहिए—

योदीची दिक् सा मनुष्याणां तस्मान्मानुष
उदीचीनवंशामेव शालां वा विमितं वा मिन्वन्ति। ३, १, ७

ऐतरेय ब्राह्मण के ३०वें अध्याय का छठा आह्निक तो शिल्प का प्रकरण ही है, जिसका पहला वाक्य है—

शिल्पानि शंसन्ति।

शिल्प के सम्बन्ध में एतरेय ब्राह्मण कहता है कि—

हस्ती कंसो वासो हिरण्यमश्वतरीरथः शिल्पम्।

उक्त वाक्य पर 'सायण' का भाष्य द्रष्टव्य है—

लोके शिल्पेन कर्मकारा मृद्दार्वादिभिर्हस्तिसदृशमाकारं निर्मिमते। यथाऽन्ये शिल्पिभिः कंसोदर्पणादिभिः कंसो दर्पणादि निर्मीयते। अपरैर्वासो विविधं निर्मीयते। अपरैः सुवर्णमय कटकमुकुटादि निर्मीयते। अपरश्चाश्वतरी रथो निर्मीयते। × × × नाभानेदिष्टादिशिल्पमाश्चर्यकर्मेति निश्चेतव्यम्।

अर्थात्—शिल्पी मिट्टी और लकड़ी के हाथी बनाते हैं। कोई शिल्पी शीशे से दर्पण, कोई वस्त्र, कोई सोने आदि के कटक-मुकुट और कोई खच्चरों से खींचे जानेवाले रथों का निर्माण करते हैं। नाभानेदिष्ट आदि लोगों के शिल्प आश्चर्य में डालनेवाले होते हैं।

इससे पता चलता है कि आज से हजारों वर्ष पहले भारत में शिल्पियों की कला आश्चर्य रूप में विकसित थी और भिन्न-भिन्न वर्ग के लोग एक-एक विशिष्ट शिल्प में दक्ष होते थे।

'मानवधर्मशास्त्र' भी वेणु-शिल्प की चर्चा करता है। उसमें ब्राह्मणों को विद्याध्ययन के समय जलसहित कमण्डलु और बाँस का दण्ड धारण करने को कहा गया है—

वैणवीं धारयेद् यष्टिं सोदकञ्च कमण्डलुम्।—मनु० / ३'

यह मनुस्मृति वेणु-शिल्पियों के एक अलग वर्ग की ही चर्चा करती है, जिससे ज्ञात होता है कि उस समय तक वेणु शिल्पियों की अलग श्रेणी बन गई थी—

चाण्डालात् पाण्डुसोपाकस्त्वक्सारव्यवहारवान्।
आहिण्डिको निषादेन [illegible] [illegible]।—मनु० १०, [illegible]

अर्थात्—चाण्डाल से वैदेही में उत्पन्न 'पाण्डु सोपाक' कहलाते हैं, जो [illegible] त्वक्सार (बाँस) के शिल्प का काम करते हैं। बाँस का एक नाम 'त्वक्सार' भी है—

[illegible]

वेदों के बाद हम वेणु-शिल्प की चर्चा 'शतपथ ब्राह्मण' में मिलती है। यज्ञ-क्रियाओं के सम्पादन में शालाओं के निर्माण-हेतु बाँस का प्रयोग भली भाँति होता था—

तच्छाला वा विमितं वा प्राचीन वंशमिन्वन्ति। ३, १, ६

अर्थात्—यज्ञशाला के निर्माण में पुराने पके बाँसों का ही वे व्यवहार करते थे और जिनसे यज्ञशाला सुदृढ बनाई जाती थी।

शतपथ का ही एक दूसरा मंत्र है, जिसमें कहा गया है कि उदीची दिशा में होनेवाले बाँसों से शाला का निर्माण करना चाहिए—

योदीची दिक् सा मनुष्याणां तस्मान्मानुष
उदीचीनवंशामेव शाला वा विमितं वा मिन्वन्ति। ३, १, ७

ऐतरेय ब्राह्मण के ३०वें अध्याय का छठा आह्निक तो शिल्प का प्रकरण ही है, जिसका पहला वाक्य है—

शिल्पानि शंसन्ति।

शिल्प के सम्बन्ध में ऐतरेय ब्राह्मण कहता है कि—

हस्ती कंसो वासो हिरण्यमश्वतरीरथ शिल्पम्।

उक्त वाक्य पर 'सायण' का भाष्य द्रष्टव्य है—

लोके शिल्पिनः कर्मकारा मृद्दार्वादिभिर्हस्तिसदृशमाकारं निर्मिमते। यथाऽन्यैः शिल्पिभिः कंसोदर्पणादिभिः कंसो दर्पणादि निर्मीयते। अपरैर्वासो विविधं निर्मीयते। अपरैः सुवर्णमयं कटकमुकुटादि निर्मीयते। अपरैश्चाश्वतरी रथो निर्मीयते। ××× नाभानदिष्टादिशिल्पमाश्चर्यकरमिति निश्चेतव्यम्।

अर्थात्—शिल्पी मिट्टी और लकड़ी के हाथी बनाते हैं। कोई शिल्पी शीशे से दर्पण, कोई वस्त्र, कोई सोने आदि के कटक-मुकुट और कोई खच्चरों से खींचे जानेवाले रथों का निर्माण करते हैं। नाभानेदिष्ट आदि लोगों के शिल्प आश्चर्य में डालनेवाले होते हैं।

इससे पता चलता है कि आज से हजारों वर्ष पहले भारत में शिल्पियों की कला आश्चर्य-रूप में विकसित थी और भिन्न-भिन्न वर्ग के लोग एक-एक विशिष्ट शिल्प में दक्ष होते थे।

'मानवधर्मशास्त्र' भी वेणु-शिल्प की चर्चा करता है। उसमें ब्राह्मणों को विद्याध्ययन के समय जलसहित कमण्डलु और बाँस का दण्ड धारण करने को कहा गया है—

वैणवीं धारयेत् यष्टिं सोदकञ्च कमण्डलुम्।—मनु० ४, ३६

यह मनुस्मृति वेणु-शिल्पियों के एक अलग वर्ग की ही चर्चा करती है, जिससे ज्ञात होता है कि उस समय तक वेणु-शिल्पियों की अलग श्रेणी बन गई थी—

चाण्डालात् पाण्डुसोपाकस्त्वक्सारव्यवहारवान्।
आहिण्डिको निषादेन वैदेह्यामेव जायते॥—मनु० १०, ३७

अर्थात्—चाण्डाल से वैदेही में उत्पन्न 'पाण्डु सोपाक' कहलाते हैं, जो उस समय त्वक्सार (बाँस) के शिल्प का काम करते थे। बाँस का एक नाम 'त्वक्सार' भी है—

[illegible] (अमरकोश—२ वनौषधि वर्ग, १६०)।

वर्ग, वल्क-वर्ग, दारु-वर्ग, ओषध-वर्ग के साथ-साथ वेणु-वर्ग की भी चर्चा करता है। उसने बाँसों की विभिन्न जातियों का उल्लेख इस प्रकार किया है—

उटजचिमियचापवेणुवंशसातीनकण्टकभाल्लूकापि वेणुवर्ग ।

—कौटलाय० अधि० २, अध्या० १७

इस सूत्र की टीका इस प्रकार है—

उटजो महासुषिरस्तनुकण्टक कर्कशपृष्ठ । चिमियो निस्सुषिरो मृदुत्वक । चापवेणु स्वल्पसुषिरोऽतिखरश्च, निष्कण्टकश्चापयोग्य । वंशा दीर्घपर्वक सरन्ध्र सकण्टकश्च । सातीन-कण्टकौ वेणुभेदौ । भाल्लूक स्थूलदीर्घो महाप्रमाणो निष्कण्टक ।

अर्थात्—उटज बाँस खूब पोला और काँटेदार होता है तथा उसका छिलका कठोर होता है। चिमिय बाँस निश्छिद्र और कोमल त्वचावाला होता है। चापवेणु मे छिद्र छोटा होता है और यह कड़ा और काँटे से रहित एव धनुष बनाने के योग्य होता है। वंश-जाति के बाँस का पोर दूर-दूर पर होता है और यह छिद्रवाला एव काँटेदार होता है। सातीन और काँटा बाँस के सम्बन्ध मे टीकाकार का ज्ञान नही है, इसलिए बाँस के दो भेद कहकर ही वह संतोष करता है। भाल्लूक बाँस के पोर काफी लम्बे होते हैं और इसकी लम्बाई सबसे बडी होती है और यह काँटों से रहित होता है। आज भी इस जाति के बाँस उत्तर-बिहार और असम मे प्रचुर मात्रा मे पाये जाते हैं।

इस तरह मौर्य-काल के आरम्भ मे ही बाँसों की जातियों का विश्लेषण हमें प्राप्त होता है। उस समय बाँस के अनेक शिल्प तैयार होते थे। आज का बल्लम या बर्छे उस समय में भी बाँस की लम्बी लाठी में लगा कर बनाये जाते थे—

कार्या कार्मारिका शूलवेधनाग्राश्च वेणव ।—अधि० २, अध्या० ३

अर्थात्—लुहारो से लाठियो के अग्रभाग मे शूल ठोकवाकर शस्त्रागार मे रखना चाहिए।

उसी 'कौटलीय अर्थशास्त्र' के 'दुर्ग-निवेश'-प्रकरण में बतलाया गया है कि मुख्य दुर्ग के पश्चिमोत्तर भाग में यान-रथशाला और उसके पीछे पश्चिम भाग में ऊर्णा-सूत्र, वेणु, चम, वर्म और शस्त्राच्छादन के शिल्पियो की शाला की स्थापना करानी चाहिए।

पश्चिमोत्तर भाग यानरथशाला तत पर ऊर्णासूत्रवेणुचर्मवर्मशस्त्रावरणकारव

शूद्राश्च पश्चिमा दिशमधिवसेयु ।—अधि० २, अध्या० १५

रसोई घर के मुख्य उपकरणों में तराजू, मापने के बरतन, दाल दलने की चक्की, मूसल, ऊखल, ढेंकी, आटा पीसने की चक्की, पत्तल, सूप, चलनी, चँगेरी, पिटारी, बढनी आदि का उल्लेख भी कौटलीय शास्त्र करता है—

तुलामानभाण्ड रोचनीदृषन्मुसलोलूखलकुट्टकरोचकयन्त्रपत्रकशूर्पचालनिका-
कण्डोलीपिटकसम्मार्जन्यश्चोपकरणानि ।—अधि० २, अध्या० १५

अनेक चर्चाएँ हैं। उस समय के वाद्यों में बाँस से बननेवाला 'शुषिर' नामक वाद्य है, जिसे आज वंशी या मुरली कहते हैं—

तत तन्त्रागत वाद्य वंशाद्य शुषिर तथा।

इस 'शुषिर' के भी कई भेद थे, जिनके नाम पारी, मधुरी, तित्तिरी काहल, तोड्ही, मुरली, बुक्का, शृङ्गिका, स्वरनाभि आदि हैं—

वंशोऽथ पारीमधुरीतित्तिरीशुद्धकाहला।
तोड्हीमुरलीबुक्काशृङ्गिकास्वरनामय॥
शृंग कापालिक वंशश्चर्म्मवंशस्तथा पर।
एते शुषिरभेदास्तु कथिता पूर्वसूरिभि॥

इससे ज्ञात होता है कि बाँस के द्वारा बननेवाले ये वाद्य 'भरत' के बहुत पहले से बनते आ रहे थे, जिसके सम्बन्ध में भरत ने कहा है कि इन भेदों को पूर्व के ही विद्वानों ने बतलाया है।

पाँचवी सदी में अमरसिंह ने 'नामलिंगानुशासन' कोश की रचना की है। उसमें भी बाँस और उसकी जातियों की तो चर्चा है ही, वेणु-शिल्प की अनेक वस्तुओं का भी उल्लेख है। जैसे—अनाज फटकनेवाले सूप, सत्तू और आटे चालनेवाली चलनी, चँगेरी, पिटारी, वंशी आदि।

प्रस्फोटन शूर्पमस्त्री चालनी तितउ पुमान्।
स्यूतप्रसेवौ कण्डोलपिटौ कटकिलञ्जकौ॥ —३, वैश्य वर्ग, २६

संस्कृत में राजनीतिशास्त्र का एक ग्रन्थ है—'शुक्रनीति'। यह ग्रन्थ छठी शताब्दी का निर्मित बताया जाता है, क्योंकि गुप्त शासन व्यवस्था के अनुसार ही इसमें मन्त्रि-परिषद् आदि का उल्लेख है। इसमें जहाँ ६४ कलाओं की चर्चा है, वहाँ उनमें एक वेणु-शिल्प भी है। इनमें शिल्प के दो भेद किये गये हैं। एक का नाम 'कृतिज्ञान कला' और दूसरे का नाम 'विज्ञान-कला' है। उनमें वेणु-शिल्प और तृण-शिल्प को 'कृतिज्ञान' कहते हैं और काच आदि धातु-शिल्प को 'विज्ञान' कहते हैं।

वेणुतृणादिपात्राणा कृतिज्ञान कला स्मृता।
काचपात्रादिकरण विज्ञान तु कला स्मृता॥ —४, ३३३

'शुक्रनीति' बतलाती है कि अन्य कई वस्तुओं की तरह बाँस भी मौक्तिक का जन्म-स्थान है—

मत्स्याहिशंखवाराहवेणुजीमूतशुक्तित।
जायते मौक्तिक तेषु भूरिशुक्त्युद्भव स्मृतम्॥ —४, १७३

इसी शुक्रनीति से पता चलता है कि गुप्तकाल में भी आजकल की तरह मछली पकड़ने की बंसी बन चुकी थी, जिससे मछलियाँ आसानी से पकड़ी जाती थी। अन्तर इतना ही था कि आजकल जहाँ चारा और आँटे की गोलियाँ अंकुश में लगाई जाती हैं, वहाँ मछलीमार उस समय अंकुश में मांस-खण्ड लगाते थे।

अगाधसलिले मग्नो दूरोऽपि वसतो वसन्।
मीनस्तु सामिष लोहमास्वादयति मृत्यवे॥ —१, १०७

भारतीय जीवन में जिस वेणु-शिल्प की इतनी बड़ी प्राचीन महिमा है, उसपर एक भी पुस्तक भारतीय भाषा में मुझे देखने को नहीं मिली। विशेषत राष्ट्रभाषा का पद प्राप्त करनेवाली हिन्दी में इस विषय की पुस्तक न होना, खलने की बात थी। हिन्दी-जैसी राष्ट्रभाषा में अभी अनेक हस्तशिल्पों पर पुस्तकों का अभाव है और इन विषयों पर अभी दर्जनों पुस्तकों की आवश्यकता है। विश्वास है, हमारे कलाविद् शिल्पी इस अभाव की पूर्त्ति में अपना पूर्ण सहयोग देकर राष्ट्रभाषा को समृद्ध बनायेंगे।

मैं न तो लेखक हूँ या न हिन्दी का विद्वान ही। इसलिए यदि पुस्तक में कोई त्रुटि हो तो विद्वान् सज्जन क्षमा करेंगे। इसके अतिरिक्त वेणु-शिल्प विषयक इस पुस्तक के तैयार करने में अन्य ग्रन्थों से मुझे किसी प्रकार का साहाय्य नहीं प्राप्त हो सका। दुर्भाग्य यह रहा कि अँगरेजी-जैसी समृद्ध भाषा में भी इस विषय की एक भी ऐसी पुस्तक मुझे देखने को न मिली, जिससे कुछ सहायता ली जा सकती। यूरोप में बाँस की उपज नहीं होती, शायद इसीलिए यूरोपीय लेखकों ने इस विषय पर अपनी लेखनी नहीं उठाई है। मैंने अपने जापान-प्रवास-काल में वेणु-शिल्प के सम्बन्ध में जो कुछ सीखा और समझा, केवल उसी के आधार पर इस पुस्तक का निर्माण किया। हाँ, कुछ जापानी वेणु-शिल्पियों से मैंने सहायता अवश्य प्राप्त की है। मैं जापानी भाषा का भी पूरा जानकार नहीं था, अत जैसा चाहिए, उन शिल्पियों से पूरा-पूरा लाभ नहीं उठा सका। मुझे इस पुस्तक के निर्माण में विशेषत अपने ही ज्ञान का भरोसा रखना पड़ा है, इसलिए त्रुटियाँ स्वाभाविक हैं। फिर भी इससे यदि भारतीय शिल्पियों को थोड़ा भी लाभ पहुँच सका, तो मैं अपना परिश्रम सार्थक समझूँगा।

६ गार्डिनर रोड,
पटना–१
५–१–६१

उपेन्द्र महारथी

शिल्प का ज्ञान मुझे कराया था। उसके बाद मादो' द्वीप के 'आकादमागी' स्थान में स्थित 'बम्बू रिसर्च केन्द्र' के निर्देशक तथा वहाँ के प्रधान अध्यापक 'श्रीकुसुये' एवं श्री 'आन्दोमान' आदि शिल्प विशेषज्ञो से भी मैंने इस शिल्प की शिक्षा ली थी। आज अपने इन सभी गुरुओं के प्रति कृतज्ञता प्रकट करता हूँ, जिनसे ज्ञान प्राप्त करके इस पुस्तक को मैंने तैयार किया। इनके अतिरिक्त भी मैंने जापान के जिन अनेक शिल्पियों से वेणु-शिल्प का ज्ञान प्राप्त किया था, उन सभी का चिरकृतज्ञ हूँ।

उपर्युक्त व्यक्तियों के अतिरिक्त 'बेपु' के वेणु कारपोरेशन स्कूल और वेणु-शिल्प औद्योगिक संस्थान के निर्देशक तथा अध्यापकों से भी मैंने शिक्षा ली। कुरु मे स्थित इंडस्ट्रियल आर्ट स्कूल के निर्देशक और प्रधान अध्यापक मे एवं मिजुआका, ओदाआरा, कीवटा, सेन्दाई, सेतो आदि स्थान की वेणु अनुसंधान संस्थाओं के निर्देशकों तथा वेणु-शिल्प-विभाग और रसायन-विभाग के अध्यापकों के प्रति भी मैं पूर्ण कृतज्ञ हूँ, जिनका साहाय्य मुझे सर्वदा प्राप्त होता रहा। प्रोफेसर सुजुकी आदि मित्रों के सान्निध्य और प्रेम को तो कभी भूल ही नहीं सकता हूँ, जिनसे विभिन्न प्रकार की सहायता मुझे सुलभ हुई।

अपने देश भारत में, सबसे ज्यादा मैं कृतज्ञ हूँ—केन्द्रीय आकाशवाणी के प्रधान डाइरेक्टर श्रीजगदीशचन्द्र माथुर का, जो उन दिनों बिहार-सरकार के शिक्षा-सचिव थे। श्रीमाथुर जैसे गुणग्राही मित्र ने ही जापान के यूनेस्को सेमिनार में योगदान करने के लिए, भारतीय प्रतिनिधि के रूप में, मेरा नाम प्रस्तावित किया था। यदि श्रीमाथुर न होते, तो मेरा जापान जाना न तो सम्भव हो पाता और न आप लोगों के समक्ष मैं यह पुस्तक ही प्रस्तुत कर पाता। अतः, इस पुस्तक के निर्माण का सारा श्रेय माथुर साहब को ही है। पुस्तक-प्रकाशन का श्रेय मेरे अग्रज-तुल्य आचार्य श्रीशिवपूजन सहायजी को है, जो उन दिनों बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के संचालक थे। उनके प्रोत्साहन और बार-बार के तकाजे ने पुस्तक के हिन्दी रूप देने में गुरु की छड़ी की तरह मेरे लिए काम किया और तब कहीं मुझमें तत्परता आई। अखिल भारतीय गृहशिल्पोद्योग-संस्थान की अध्यक्षा श्रीमती कमलादेवी चट्टोपाध्याय का मैं विशेष कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने इस पुस्तक के लिए प्राक्कथन लिखने की कृपा की है। हिन्दी-पाण्डुलिपि तैयार करने में सर्वप्रथम दैनिक 'नवराष्ट्र' (पटना) के सहायक सम्पादक श्रीकृष्णानन्दजी से मुझे पूरी सहायता मिली, जिसके लिए मैं उनका आभारी हूँ। मेरे मित्र श्रीबंकिमचन्द्र बनर्जी ने भी उल्लेखनीय योगदान किया है। किन्तु, पाण्डुलिपि तैयार करने तथा उसके संशोधन-सम्पादन में सबसे अधिक साहाय्य प्रिय भाई श्रीहवलदार त्रिपाठी 'सहृदय' ने पहुँचाया है। वे मेरे साथ बैठकर तथा एकाकी भी पाण्डुलिपि दुरुस्त करने में अथक परिश्रम करते रहे। उनके घोर परिश्रम के परिणामस्वरूप ही यह पुस्तक आपके समक्ष प्रस्तुत है। अतः, अपने इन बन्धुओं के प्रति मैं अपना शतशः आभार प्रकट करता हूँ। पुनः मैं तपन प्रिंटिंग प्रेस (पटना-८) के सचालक के प्रति भी कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने मेरे अनुरोध पर ही पुस्तक के मुद्रण का भार स्वीकार कर इसे सुन्दर रीति से मुद्रित कर दिया।

वेणु-शिल्प

प्रथम भाग

मानव-जीवन और वेणु-शिल्प

मनुष्य जब कृषि-कर्म मे पूर्ण दक्ष नहीं था, और वह जगली जीवन व्यतीत करता होगा, तभी उसका सम्बन्ध बाँस से स्थापित हुआ होगा, यह निश्चित है। अपनी आत्म-रक्षा और प्रहार इन दोनो मे बाँस उसके लिए उपयोगी सिद्ध हुआ था—डडा, धनुष और कुल्हाडी के रूप मे। बाँस ही एक ऐसा पौधा है, जिसमे दृढता के साथ लचीलापन भी है। इसे इच्छानुसार सीधा और टेढा किया जा सकता है। भीषण आँधी के झकोरो मे भी जब वह उखडता और टूटता नही होगा—केवल झुककर रह जाता होगा—तब आदिम मानव-जाति ने इसके लचीलेपन के वैशिष्ट्य को समझा होगा।

मनुष्य ने लोह-युग मे धनुष और कुल्हाडी का ज्ञान प्राप्त किया, पर उससे भी पहले प्रस्तर-युग मे ही उसे डडे का ज्ञान हुआ। लोहे की कुल्हाडी और छुरी जब तैयार होने लगी, तब उसने धनुष और बाण बनाना सीखा। किन्तु, यह सब अरण्य-निवासकाल मे ही—जब न तो कृषि-कार्य-का पूरा विकास हो पाया था और न जब जनपद बसाये गये थे।

कुल्हाडी से बाँस को काटकर और छुरी से तराशकर जब धनुष-बाण का निर्माण हुआ, तब एक साथ कई बाणो को रखने की समस्या भी उसके सामने आई। इस कार्य के लिए भी उसे बाँस ही उपयोगी जँचा। बाँस स्वत. खोखला होता है, अत. एक पोर का बाँस काटकर शिकारी ने उसका तरकस भी बना लिया। इसके बाद वह उसमे तीरों को रख और उसे पीठ पर बाँधकर घने जगलों मे निर्भीक विचरण करने लगा।

मानव जब समाज-रूप मे सगठित हुआ और गृह बनाकर जनपद बसाने लगा, तब बाँस की फाडी गई फराठी टट्टी और छप्पर बनाने के काम मे आने लगी। इस टट्टीवाले गृह से तत्कालीन मानव को इस बात की सुविधा थी कि वह जब चाहे, आसानी से उसे छोड दे और तोडकर जहाँ चाहे, ले भी जाय और फिर घर बना ले। यह उस समय की बात है, जब मनुष्य स्वच्छन्द एव विचरणशील था। स्थायी सम्पत्ति उसके पास नही होती थी। बाद मे जब कृषि का विकास हुआ, तब पशुओ से उसकी रक्षा करने के लिए बाँस के बेडे बनने लगे। इतना ही नही, पालतू पशुओं को बाँधने के लिए खूँटे की आवश्यकता भी उसे पडी और उसने इस काम के लिए बाँस को ही सर्वोपयोगी पाया, क्योंकि मजबूती और ठोकने पर नहीं फटने का गुण अन्य लकड़ियों के बनिस्बत बाँस मे अधिक है। इसी तरह गोले, आयताकार, त्रिभुजाकार आदि सभी प्रकार के छप्पर बाँस की फराठियो से बनाये जा सकते हैं और मानव ने अपनी सुविधा और सुन्दरता के खयाल से

बतलाती हैं, उस तरह बाँस के प्राचीन शिल्प भूगर्भ से हमें सुलभ नहीं हैं, जिनसे हम उनका इतिहास प्राप्त कर सकें। हाँ, थोड़ा-सा इतिहास हमें धार्मिक तथा साहित्यिक ग्रन्थों में तथा आदिम वन-जातियों की अर्द्धसत्य दंत-कथाओं में सुरक्षित मिलता है। संक्षिप्त रूप में इतना जान लेना चाहिए कि वेदों, आरण्यकों, उपनिषदों, रामायण, महाभारत, धर्मशास्त्रों, बौद्ध-साहित्य के निकायों, जातकों तथा कालिदास और बाणभट्ट के साहित्यों में हमें बाँस-शिल्प की सामग्रियों की थोड़ी चर्चा मिलती है। पुराणों में तो बाँस-शिल्प के अनेक उदाहरण भरे हैं। इसपर विस्तार से चर्चा करने के लिए अलग ग्रन्थ की आवश्यकता है।

आदिम वन-जातियों के यहाँ बननेवाले वेणु-शिल्प स्वयं उनके यहाँ अपनी प्राचीन प्रतिष्ठा के गवाह हैं। आज भी साधारण औजारों की सहायता से जैसी सामग्री ये वन-जातियाँ प्रस्तुत करती हैं, वैसी सामग्री इस युग के बने सुन्दर और सूक्ष्म औजारों से भी बड़े-बड़े शिल्पी नहीं कर सकते। इन जातियों के ऐसे शिल्प ही बतलाते हैं कि उनके रक्त में वेणु-शिल्प का परम्परागत इतिहास निहित है।

बाँस-शिल्प के विकास का इतिहास धातु-शिल्प के विकास के साथ परस्पर गुँथा हुआ है। लौह या ताम्र-शिल्प के क्रमिक विकास के अनुसार ही वेणु-शिल्प का भी विकास हुआ, इसमें जरा भी संदेह नहीं। लौह के बने औजारों में जैसे-जैसे विकास होता गया, वैसे-वैसे वेणु-शिल्प में भी उपयोगिता के आधार पर विकास होता गया। यह भी पहले कहा गया है कि कृषि-कार्य के विकास के आधार पर बाँस-शिल्प का भी उत्कर्ष होता गया और उसमें सूक्ष्मता और सुन्दरता, औजारों के विकास के अनुसार, दिन-प्रतिदिन आती और बढ़ती गई। ऐसे औजारों के विवरण आदिम-जातियों के प्रचलित इतिहासों में, कहानियों के रूप में, सुरक्षित हैं। ऐसी कहानियाँ हमें अस्त-व्यस्त और असम्बद्ध रूप में उपलब्ध होती हैं। इन कहानियों में वर्णित औजारों का विवरण किस काल तक रहा, यह बतलाना भी कठिन है, पर इतना अवश्य कहा जायगा कि औजारों के विकास में आदिम-जातियों और अग्नि का प्रयोग जाननेवाली आर्य-जातियों के पारस्परिक सहयोग का काल एक क्रान्तिकारी पट-विक्षेप का काल रहा है। इस तरह अग्नि के प्रयोग के द्वारा मानव ने औजारों के विकास में अद्भुत सफलता प्राप्त की और औजारों के विकास के साथ ही वेणु-शिल्प की भी चरमोन्नति हुई।

हमारे समाज में श्रेणियों का विभाजन इस बात का साक्षी है कि हस्त-शिल्प के विकास के आधार पर ही यह विभक्तीकरण की योजना लागू की गई, वैदिक साहित्य और बौद्ध-जातकों के आधार पर हम यह अच्छी तरह कह सकते हैं कि इनके निर्माण तक हमारे देश के हस्त-शिल्प उन्नति के चरम शिखर पर पहुँच गये थे। इन्हीं शिल्पों के विकास के कारण देश में बड़े-बड़े नगर बस गये। ऐसे नगरों में एक-एक शिल्प के आधार पर लोगों का अपना संगठन हो गया। ऐसे संगठन को उस समय 'श्रेणी' कहा जाता था और प्रत्येक श्रेणी की अपनी परिषद् या सभा होती थी। इन्हीं श्रेणियों के आधार पर लौहकार, स्वर्णकार, चर्मकार, कर्मकार, कुम्भकार, वेणुकार, वड्ढकी (रथकार), तन्तुवाय आदि जातियाँ संगठित की गई। आगे चलकर इन शिल्पों के आधार पर ही श्रेणियों में ही उपश्रेणियाँ बनीं।

कोष्ठागारों, पुष्करिणियों, स्तम्भों, आभूषणों आदि को देखकर वेणु-शिल्प के विकास का भी हमें भली भाँति ज्ञान प्राप्त होता है। गृहस्थी के काम में आनेवाले मिट्टी के बरतनों पर की गई कारीगरी तो हमें और भी आश्चर्यविमूढ़ कर देती है और तत्कालीन कला-प्रेम का रूप सामने खड़ा कर देती है। इन मिट्टी के बरतनों और खिलौने में जो कला-शिल्प हमें दिखाई पड़ते हैं, उनमें बाँस का माहात्म्य नितान्त अपेक्षित था। चाक के छिद्र में बाँस के डंडे का प्रयोग और मृद्-शिल्प (सूख जाने पर कच्ची अवस्था में) के सुधार में चाकू-सदृश बाँस की छोटी कमची का प्रयोग—दोनों इस बात के साक्षी हैं कि उस काल में वेणु-शिल्प विकसित था। इस तरह वेणु-शिल्प मानव के जीवन काल में ही नहीं, मरण-काल तक अपेक्षित था। इसका उदाहरण शव के गाड़नेवाले पात्रों में हम पाते हैं। ऐसे पात्रों के ऊपर ज्यामितिक आकृतियोंवाली सरल रेखाओं, कोणों, वृत्तों और वृत्तांशों से बनी विभिन्न कला-कृतियाँ हमें बरबस लुभा लेती हैं। कुछ मिट्टी के पात्रों पर पुष्प पत्तियों और पशु-पक्षियों के रूप भी हमें मोहते हैं। इन प्राप्त कला-कृतियों के द्वारा हम अच्छी तरह समझ सकते हैं कि उस समय वेणु-शिल्प का भी विकास इसी तरह अपनी चरम सीमा पर पहुँचा होगा। आज से पाँच हजार वर्ष पहले की ये कला कृतियाँ जब हमारे समक्ष अपनी जवानी की कहानी बतलाती हैं, तब इनके बचपन के कथा-सूत्र को ढूँढना हमारे लिए बिलकुल असम्भव-सा लगता है।

बौद्धधर्म के विकास-काल में वेणु-शिल्प की हम खूब उन्नति पाते हैं। यही कारण रहा कि जिधर-जिधर भारत से बौद्धधर्म गया, उधर-उधर वेणु-शिल्प भी अपना विस्तार करता गया। भारत में इस शिल्प का ह्रास भी, बौद्धधर्म के ह्रास के साथ ही आरम्भ हुआ। बौद्धों ने बाँस को समाज के जीवन का अंग मानकर अपने प्रत्येक कर्म में उसे व्यवहृत किया और उसे सर्वोच्च स्थान दिया। उन्होंने मानव-जीवन के साथ बाँस के घनिष्ठ सम्बन्ध को अच्छी तरह समझा था। यहाँ तक कि बड़े-बड़े बौद्धप्रेमी सेठ और राजा 'यष्टिवन' तथा 'वेणुवन' बौद्धों को दान कर यश का भागी बनते थे। यही कारण रहा कि इस संस्कृति से प्रभावित होकर गृहस्थों ने भी अपने घर के आस-पास वंश-रोपण की परम्परा जारी रखी। किन्तु जब भारत में बौद्धधर्म पर प्रहार हुआ, तब बाँस को दूषित ठहराया गया और निकट स्थानों में बाँस को लगाना अशुभ माना गया। इतना ही नहीं, वेणु-शिल्पसाधकों को भी समाज में नीच बतलाया गया, जिससे वेणु-शिल्प की बहुत बड़ी क्षति हुई। अतः, कुलीन वर्ग ने वेणु-शिल्प की शिक्षा लेना त्याग दिया और यह शिल्प दरिद्र और उपेक्षित वर्ग में ही सिमटकर रह गया। फिर भी, अपनी उपयोगिता के कारण भारत में वेणु-शिल्प मरा नहीं—भले ही इसका विकास रुक गया और दायरा संकुचित हो गया।

वेणु-शिल्प का अतीत हमारे देश में कैसा था, इसका अनुमान हम उन बौद्ध देशों से कर सकते हैं, जहाँ भारत से बौद्धधर्म के साथ वेणु-शिल्प गया। यह केवल हमारा अनुमान ही नहीं है, बल्कि आज भी भारत के विभिन्न प्रदेशों में वेणु-शिल्प की जो कलाकृतियाँ हमें मिलती हैं, उनसे जब हम एशिया के विभिन्न बौद्ध देशों के वेणु-शिल्प का मिलान करते हैं,

इसका व्यवहार अनेक प्रकार से होता है। धनी हो या गरीब—सबको बाँस का मडप (मँडवा) बनाना ही पडता है। मँडवे के बाँस इतने ऊँचे होते हैं कि दूर से ही राहगीरों को विवाह सम्पन्न होने की सूचना देते हैं। इसके अतिरिक्त विवाह मे बाँस की कमच्चियों का बना 'डाला' सजाया जाता है, जिसमे मागलिक कपडे और मिष्टान्न सजकर जाते हैं। यह वर-पक्ष की ओर से लडकी के यहाँ भेजा जाता है और उस पर आलकारिक रूप दिया रहता है। विवाह की घडी मे, भाँवरे भरते समय, धान का भूँजा (लावा) बाँस की बनी सुपली के सहारे ही गिराया जाता है। विवाह के पहले जिस रात्रि को 'मटकोड' (शुद्ध मिट्टी खोदकर लाने की विधि) होती है, उसी दिन मडप मे एक और विधि होती है, जो 'हरवशकडी' कहलाती है। मडप के बीच मे जहाँ केले का खम्भ गडा रहता है, वहीं पत्ते-समेत बाँस की हरी करची भी गाडी जाती है और वहाँ एक प्रकार की पूजा होती है। कहीं-कहीं विवाह मे 'सॅपउवी-पूजा' भी होती है, जिसे बाँस की पाँच करचियो से सम्पन्न करते हैं। यज्ञोपवीत मे भी जब लडका ब्रह्मचारी का वेष धारण करता है और गुरुगृह मे शिक्षा लेने जाने का स्वाग रचता है, तब उसके पास पलाश-दण्ड के साथ बाँस की हरी करची भी होती है।

औषधो के रूप मे बाँस की उपयोगिता

वंशलोचन—वर्षा-ऋतु में जब बादल गरजते हैं, तब बाँस की कोंपल जड से निकलती हैं। नर-मादा भेद करके बाँस की दो जातियाँ होती हैं। नर बाँस ठोस होते हैं और मादा बाँस पोले होते हैं। आयुर्वेद-शास्त्र का कहना है कि जब स्वाति-नक्षत्र का पानी मादा बाँस के भीतर प्रवेश करता है, तब वही जमकर वशलोचन बन जाता है। बाँस जब पककर सूख जाता है, तब उसे फाडकर वशलोचन निकाल लिया जाता है। यह बडे-बडे औषधो के काम मे लाया जाता है। विशेषकर पक्षाघात के उपचार मे यह रामबाण का काम करता है। सस्कृत में इसके कई नाम है। जैसे—वशलोचन, त्वक्क्षीरी, क्षीरिका, कर्पूररोचना, तुङ्गा, रोचनिका, पिंगा, वशशर्करा और वशकर्पूर।

वशलोचन एक खास जाति के बाँस के भीतर से निकलता है। उस बाँस का नाम 'नजला बाँस' है। इस बाँस की जाति मादा है। इसमे एक प्रकार का मद जम जाता है, जो बाँस के पकने और सूखने के बाद निकाला जाता है। इसी को हिन्दी मे वशलोचन और गुजराती मे वाँसकपूर कहते हैं। आजकल बाजार मे नकली वशलोचन की भरमार हो गई है। असली वशलोचन का रग बिलकुल सफेद होता है, उसपर कुछ नीले रग की झाई दिखाई पडती है। इसको जब लकडी या पत्थर पर घिसते हैं, तब किसी प्रकार की लकीर नहीं उभरती। यह हाथ की चुटकी से दबाने पर टूटता नहीं है और न मुँह मे रखने से घुलता है। इसमे पानी सोखने की शक्ति है। पानी सोख लेने के बाद असली वशलोचन पारदर्शक हो जाता है। किन्तु, नकली वशलोचन के घिसने पर लकीर खिच जाती है और पानी मे डालने से वह घुल जाता है।

वशलोचन के गुण-दोष—आयुर्वेदिक मतानुसार यह रूखा, कसैला, मधुर, रक्त को शुद्ध करनेवाला, शीतल, वीर्यवर्द्धक और कामोद्दीपक होता है। यह क्षय, श्वास, खाँसी

३. मक्खियाँ और उनके … ग्वीर की ऐसी प्रणाली में ४५ मिनट में जाते हैं।

४. ऐसा देखा गया है कि … मच्छड़ों को रखकर उसमें बाँस कोपड़ के रस में भिगाया रूई का फाहा डाला गया, तो मच्छड़ ३ से ५ मिनट में मर … बिना पानी मिलाये रस में वे ही मच्छड़ ४५ मिनट में मरे। इससे ज्ञात होता है बाँस की कोमल कोपड के रस में हाइड्रोक्लोरिक-एसिड और पोटाशियम-सायनाइड समान जहरीली औषधियों की अपेक्षा अधिक कृमिनाशक शक्ति है।

बाँस की राख में सिलेसिक एसिड २८ प्रतिशत, चूना ८ प्रतिशत, मेगनेशि… ६ प्रतिशत, पोटासियम ३८ प्रतिशत, सोडियम १२ प्रतिशत, फ्लोरिन २ प्रतिशत गन्धक २ प्रतिशत पाया जाता है।

यूनानी मतानुसार बाँस सर्द और खुश्क होता है और जला देने के बाद गरम … खुश्क हो जाता है। जली हुई बाँस की जड़ और छाल को सिरके में मिलाकर … उड़े हुए स्थान पर यदि लगाया जाय, तो उस स्थान पर बाल जम जाते हैं। बाँस … राख से मलने पर गंदे दाँत साफ हो जाते हैं। बाँस की जलाई हुई जड़ और छ… के बराबर भाग में मेंहदी ले ली जाय और इन्हें पीसकर यदि बालों में लगाये जा… तो बालों की जड़ें मजबूत होती हैं और जहाँ से बाल गिर गये हैं, वहाँ फिर बाल … आते हैं। बाँस का कोयला पीसकर यदि घाव पर भुरभुराया जाय, तो जख्म भी … जाता है। बाँस की कोंपड को सिरके के साथ पीसकर कमर और कूल्हों पर लगाने से … आराम हो जाता है। बाँस तथा उसके पत्तों पर जमी चिकनाई यदि आँख… लगाई जाय, तो आँख का जाला कट जाता है। बाँस को पानी में जोश देकर पी… से रुका हुआ मासिक धर्म और पेशाब जारी हो जाता है। इसके हरे पत्तों को पानी… खूब मलकर साफ करके यदि पीया जाय, तो मुँह से आता हुआ खून बन्द हो जाता है… इसके पत्तों को जलाकर यदि उसका लेप सूखी या तर खुजली पर लगाया जाय, … खुजली अच्छी हो जाती है। बाँस की जड़ को जलाकर उसकी राख को पानी … घोलकर उसका निखरा पानी यदि पीया जाय, तो आमाशय और यकृत की गरमी शान्त… हो जाती है। बाँस की जड़ को जलाकर चमेली के तेल में मिलाकर लगाने से … मिट जाती है और माथे का गंजापन जाता रहता है। बाँस के पत्तों का अर्क यदि शहद के साथ मिलाकर पीया जाय, तो खाँसी में भी लाभ होता है।

इसके अतिरिक्त बाँस हमारे जीवन का कैसा सहचर और सहायक है, इसका … उदाहरण तो जीवन-काल में प्राप्त होता ही है, हमारे बुढ़ापे में भी इसकी लाठी … जीवनाधार होती है। साथ ही मरने के बाद भी यह सच्चे बन्धु की तरह सहारा देता है। इसकी बनी 'रथी' (अरथी) पर शव मरघट तक ले जाया जाता है, जिसको चार भाई … लगाकर ढोते हैं। यह रथी हरे बाँस की ही बनती है और अभाव की अवस्था में इसके लिए सूखे बाँस व्यवहृत होते हैं।

इस तरह हम देखते हैं कि बाँस की उपयोगिता मानव-विकास के जीवन में …

वेणु-कार्य की प्रामाणिकता

भारत किसानों का देश है। षड्ऋतुओं के प्रभाव के कारण इसकी जलवायु यूरोप आदि शीत-प्रधान देशों से बिलकुल भिन्न होती है। भारत की जलवायु पर ग्रीष्म का अधिकार तो है ही, लेकिन शीत और वर्षा के कारण जलवायु में न तो अधिक शुष्कता आती है और न वह अधिक गीली ही होती है। हिमालय और विन्ध्य पहाड़ों की शृंखला समस्त देश में व्याप्त रहने के कारण भारत की मिट्टी में अद्भुत उर्वरा-शक्ति पाई जाती है। इसलिए हम देखते हैं कि भारत की पहाड़ी और समतल भूमि, विभिन्न प्रकार के असंख्य वृक्षों की खान है—एक बृहत् भाण्डागार है।

भारतीय किसानों की बराबर यह दृष्टि रही है कि गाँवों में उपलब्ध सामग्री से ही प्रतिदिन के सभी उपयोगी कार्यों को सम्पादित किया जाय। अर्थात्, किसान स्वतः उत्पन्न उन वृक्षों, पौधों और लताओं का उपयोग करते आ रहे हैं, जो सहज में उपलब्ध हैं, मजबूत और टिकाऊ हैं और जो आसानी से उनके अधिक-से-अधिक कार्यों में उपयोगी सिद्ध होते हैं। वे उन्हें आसानी से अपने गाँवों में लगाकर उनका विस्तार भी करते हैं। शताब्दियों से किसानों के कार्यों में वैसे व्यवहृत होनेवाले वृक्षों में बाँस का स्थान हम विशेष रूप से पाते हैं। जान पड़ता है, मानो बाँस उनके जीवन की हर अवस्था में एक सच्चा सहायक मित्र है। इसीलिए हम यह भी देखते हैं कि भारत के नागरिकों ने बाँस को बरगद, पीपल, पाकड़, आम आदि वृक्षों की तरह ही पवित्र मान लिया है और अपने धार्मिक और मांगलिक कार्यों में भी हरे बाँस और उसके पत्तों तथा टहनियों का रखना शास्त्रीय विधि बना दी है। हमारे देश में बाँस की उपयोगिता प्रकट करने के लिए ही एक कहावत भी चल पड़ी है—'बाँस गरीबों का बन्धु है।' अर्थात्, बाँस एक ऐसी वनस्पति है, जो अन्य वृक्षों और वनस्पतियों की अपेक्षा अधिक उपयोगी है तथा गरीब-से-गरीब और धनी-से-धनी व्यक्ति भी बाँस का उपयोग समान रूप से करते हैं।

किसी भी वृक्ष को कार्य में लाने के समय काटने-फाड़ने आदि के लिए विशि[ष्ट] प्रकार के अस्त्र की तथा उन अस्त्रों के शिक्षित संचालकों की जरूरत होती है। सामूहिक रूप से उन अस्त्रों को बनानेवाले तथा व्यवहार में लानेवाले भी नहीं प्राप्त होते हैं। उ[न] अस्त्रों के प्रयोग के लिए भी खास तौर-तरीके से शिक्षा लेने की आवश्यकता होती है। लेकिन, बाँस एक ऐसी वनस्पति है, जिसके लिए विशेष अस्त्र की आवश्यकता नहीं है। ए[क] मामूली अस्त्र या कत्ति आदि से बाँस काटे जाते हैं और उससे महीन-से-महीन कमचिय[ाँ] बनाई जाती हैं तथा उन कमचियों से तरह-तरह की कलात्मक सुन्दर चीजें बनाई जाती हैं। भारतीय बच्चे, जवान और बूढ़े अपने-अपने ढंग से बाँस का उपयोग अनेक कार्यों [में] करते हैं।

यों तो, दुनिया में ७०० प्रकार के बाँस हैं, पर भारत में १३६ प्रकार के बाँस पा[ए] जाते हैं। यथा—सुन्दर-चिकनी त्वचावाले बाँस, नल की आकृतिवाले हलके बाँस, लची

कभी उन्हे किसी नये ओजार की आवश्यकता पडती ह, तव वे उसे बना लिया करते है। जापान मे भी मुझे इसी तरह की बात देखने को मिली। वहाँ बाँस-शिल्प-सस्थाओ तथा किसानो मे जगह-जगह उनकी सुविधाओ के लिए अलग अलग ओजार व्यवहार मे लाये जाते है। अत., वॉस-शिल्प मे उन्नति प्राप्त करने के लिए बाँस का पूर्ण ज्ञान तो अपेक्षित है ही, साथ ही शिल्पी एव वॉस-शिल्प-सस्थाओ को यह ध्यान मे रखना चाहिए कि वे वाँस-शिल्प की विभिन्न वस्तुओ के निर्माण के लिए उपयुक्त ओजारो का भी आविष्कार कर लें।

वांस-उत्पादन के लिए भूमि

ससार मे ७०० से अधिक प्रकार के बाँस पाये जाते हैं। गर्म तथा सर्द दोनो प्रकार के क्षेत्रो में ये उपलब्ध हैं। लेकिन, अधिकतर वॉस के विभिन्न प्रकार, गर्म क्षेत्र में ही उत्पन्न होते हैं। हमारे यहाँ नया वॉस लगाने का मौसम जेठ और आषाढ है।

उष्ण कटिवन्ध के वाँस वहुत लम्बे होते हैं। उनकी गाँठो के वीच की दूरी भी लम्बी होती है। ये वाँस वहुत अधिक मुलायम होते हैं, पर कलात्मक वस्तुओं के वनाने योग्य नही होते हैं। इस तरह के वॉस, दक्षिण-पूर्व एशिया मे अधिकतर उत्पन्न होते हैं। हमारे देश मे भी ऐसे वॉस सर्वत्र उत्पन्न होते हैं।

वाँस के प्रकार

वॉस लम्बाई और मुटाई के अनुसार दो से अधिक प्रकार के होते हैं। हम यह भी देखते हैं कि कोई वाँस ठोस होता है और कोई पोला होता है। ठोस वाँस का उपयोग अधिकतर काठ की तरह गृहादि-निर्माण मे होता है और पोले वाँस का उपयोग घरेलू शिल्प के उपयोग मे आता है। यह सही है कि वाँस-शिल्प मे जापान ने विशेष रूप से अनुसधान किया है। जापान के शिल्पियो ने वाँस को नर और मादा—दो प्रकार का वतलाया है। अक्सर वे लम्बे तथा मोटे वाँस को नर कहते हैं और छोटे तथा पतले वाँस को मादा कहते हैं। जैसा हमारे देश में ठोस और पोले के अनुसार वॉस का उपयोग होता है, उसी तरह जापान के वॉस-विशेषज्ञों ने भी स्वीकार कर लिया है कि वॉस से दो तरह के काम सम्पन्न होते हैं। ठोस वाँस से गृह-निर्माण आदि कार्य और पोले वाँस से शिल्प-उद्योग-धधे के कार्य होते हैं।

हमारे यहाँ 'चाभ' और 'हरौती' लम्बे वाँस होते हैं। कही-कही 'मकोर' वाँस भी लम्बे पाये जाते हैं और उनकी मुटाई अधिक होती है। जैसा ऊपर कहा गया है, ठोस और पोले वॉस का उपयोग अलग-अलग होता है। उसी के अनुसार जापान के शिल्प-विशेषज्ञों ने भी पोले वाँस की सख्या, उनके विभिन्न नामों के अनुसार, ७० तरह की बताई है। जापान मे अलग-अलग जाति के वॉस के अलग-अलग नाम हैं और उनकी उपयोगिता भी अलग-अलग है।

हमारे देश के विभिन्न प्रान्तों मे वाँस के विभिन्न नाम हैं। सस्कृत-भाषा में तो इनकी उपयोगिता के आधार पर कई नाम आये हैं। जैसे—वहुपल्लव, धनुर्द्रुम,

५ Bambusa tuldat (वम्बुमा टुल्डा)—हिन्दी मे इसे पेका तथा बॅगला मे टुल्डा, मिटेंगा या जोवा कहते हैं। यह करीव ७० फुट लम्बा होता है। इसकी प्रत्येक गाँठ से शाखाएँ निकलती हैं। यह वगाल, विहार और आमाम मे पाया जाता है।

६ Bambusa polymorpha (वम्बुमा पोलीमोर्फा)—यह वाँम ८०-६० फुट लम्बा होता है और इसकी मोटाई करीव ६ इच होती है। यह वॉम सुन्दर, मीधा और प्राय. शाखा-रहित होता है। यह पूर्वी वगाल और आमाम मे पाया जाता है।

७ Bambusa arundinaria (वम्बुमा अरुण्डिनारिया)—यह वॉस कॅटीला होता है। मध्यप्रदेश मे इसे कटग कहते हैं। यह ८०-१०० फुट लम्बा तथा ६-७ इच मोटा होता है। यह कुमाऊॅ, उत्तरी कनारा (मैसूर), नीलगिरि, मध्यप्रदेश, विहार और उडीमा में पाया जाता है।

८ Oxytenenthra nignociliata—यह ३०-५० फुट लम्बा और करीव ४ इच मोटा होता है। यह विलकुल हरा होता है। कहीं-कहीं पर पीले रग का लम्बा धब्बा वाँम पर लगा होता है। यह गारो पहाड तथा अन्दमान मे पाया जाता है।

६ Oxytenenthra monostigna (अक्मीटेनेन्थरा मोनोस्टिग्ना)—यह करीव २० फुट लम्वा और करीव १ इच मोटा होता है और पश्चिमी घाट के पहाडो मे पाया जाता है।

१० Dendrocalamus strictus (डेण्ड्रोकैलमम स्ट्रीक्टम)—इसे हिन्दी मे केवल वाँम कहते हैं। यह करीव-करीव विलकुल ठोम होता है। इमकी लम्वाई २०-२५ फुट तक तथा मुटाई १ से ३ इचों तक होती है। प्रथम तथा द्वितीय वर्ष मे इमका रग हरा होता है, पर तृतीय वर्ष के वाद इमका रग पीला हो जाता है। यह आमाम और उत्तरी-पूर्वीय वगाल को छोडकर करीव मभी प्रान्तो मे पाया जाता है। विहार के गॉवो मे जो वाँम पाये जाते हैं, वे मभी इमी प्रकार के होते हैं। इसे रोपा बाँस कहते हैं।

११ Dendrocalamus homiltonii (डेण्ड्रोकैलमम होमिल्टोनिआई)—हिन्दी मे इसे कघी वॉम कहते हैं। यह ८०-६० फुट लम्बा तथा ६-७ इच व्यास का मोटा होता है। यह वॉम वहुत ही पोला होता है, क्योकि इसकी दीवार की मुटाई वहुत ही पतली होती है।

१२ Dendrocalamus giganteus (डेण्ड्रोकैलमम जाइगेण्टियम)—यह ८०-१०० फुट तक लम्बा होता और ८-१० इच व्याम तक का मोटा होता है। यह भारतीय वाँमों मे मवसे वडा होता है। आमाम, वगाल तथा विहार के नैपाल तराईवाले भाग मे और दक्षिणी भारत मे पाया जाता है।

१३ Cephalostachyum pergracile (मेफालोस्टाकियम परग्रेमाइल)—यह ४०-५० फुट लम्बा तथा ३ इच व्याम का होता है। यह भी वहुत पोला होता है। इसकी कोंपल (जिसे हम लोग गाँवो मे मिपुली कहते हैं) नारगी रग की या ईट के रग की तरह लाल होती है। यह सिंहभूमि छोटानागपुर और नागा पहाड़ मे पाया जाता है।

चाभ की ही जाति का एक दूसरा बॉस, 'चाभ' से आकार मे छोटा होता है, जिस पर मोम की तरह मुलायम एक प्रकार की रेणु पाई जाती है। इसे अत्यन्त आसानी से चीरकर पतली-से-पतली कमचियॉ बनाई जा सकती है। लेकिन, यह बहुत बड़ा होता है। इस कारण मजबूत कामो के लिए इसका व्यवहार खूब होता है। मुख्यत इससे ताजिय, आकाशदीप के ढॉचे तथा 'चिक' बनाये जाते हैं। पतग उडाने की लटाई भी इसी बॉस की कमचियो से बनती है। इस प्रकार चाभ की कई जातियॉ होती है। सामान्यत, मकोर आदि भारतीय बॉस जापानी बाँस के समान ही होते है। किन्तु, भारतीय बाँसो मे यही भिन्नता पाई जाती है कि वे जापानी बॉसो से अधिक मुलायम और रसीले होते हैं। इस कारण कीडे इनमे बहुत जल्द लग जाते हैं।

१६ **मकोर**—यह भी 'चाभ' श्रेणी का ही बॉस है, लेकिन चाभ की तरह लम्बा और मोटा नही होता है। यह जल्दी बढकर तैयार होता है। इसकी गाँठो मे रेशे नहीं होते। इसके ऊपर एक तरह की रेणु पाई जाती है। यह बॉस कडा होता है। धनुष आकाशदीप, ताजिये के ढॉचे, मेहराब, चिक आदि बनाने के कार्य मे इस बॉस का भी उपयोग विशेष रूप से होता है।

१७ **हरौती**—'चाभ' की पैदावार के लिए जो स्थान उपयुक्त है, हरौती के लिए भी वही स्थान उपयुक्त है। अर्थात्, हरौती के लिए भी समशीतोष्ण जलवायु की आवश्यकता है। हरौती बाँस गठीला होता है। इस बॉस मे छेद बहुत छोटा होता है। इसकी गाँठ की दूरी निकट-निकट पर होती है। यह बहुत मजबूत होता है। इसका उपयोग गृह-निर्माण के कार्य मे विशेष रूप से होता है। इसके कोरे, बीम आदि लोहे की तरह टिकाऊ होते हैं। किन्तु कमचियो से बननेवाले सामान मे इसका व्यवहार कम होता है, क्योकि आसानी से यह फाडा नही जा सकता। हमारे देश मे भी ऐसे बॉस हैं, जिनकी कोपलों का भीतरी भाग भोजन के काम मे आता है। इसके लिए हरौती मुख्य है। जब यह बॉस जमीन से निकलता है, उस समय इसकी कोंपलो के भीतरी भाग का अँचार भी बनाया जाता है।

१८ **रोपा बाँस**—यह भारत के प्राय सभी स्थानों मे पाया जाता है। इसका आकार छोटा होता है। इसकी ऊँचाई प्राय ३० से ३५ फुट तक और इसका व्यास २ से ३½ इच तक होता है। यह चिकना और लचीला होता है। इसकी गॉठो की दूरी बहुत कम होती है। यद्यपि यह आसानी से नहीं फाडा जा सकता है, तथापि इसकी पतली कमचीदार परतों से छीटा, बेनी, चटाई, पानी उलीचने की सैर, बडा दौरा, टोकरी, मौनी, सूप आदि सामान खूब बनते हैं। इसकी लाठी और मोटे अच्छे होते हैं।

मकोर की एक दूसरी जाति के बाँस को जापान मे 'मिजुताके' कहा जाता है। इसकी ऊँचाई केवल १० से १५ फुट तक और व्यास आधे इच से एक इच तक होता है। यह बाँस भी मुलायम होता है। इससे पिंजडे, टोकरियाँ आदि बनते हैं। इसका भीतरी भाग अधिकतर खोखला होता है।

५ माखालि—यह छह से आठ इंच मोटा होता है। यह लम्बाई में ६० से ६० फुट तक का होता है। यह मूली बाँस की तरह सीधा होता है, पर इसकी गाँठें उसकी तरह ऊँची नही होती। इसकी विशेषता यह है कि इसकी त्वचा सफेद, चमकदार, पर कडी होती है। इससे मोढा, कुर्सी, टोकरी आदि आसानी से बनते हैं, जो मजबूती मे अपने ढग के होते हैं। इन कामो मे एक वर्ष से ढाई वर्ष की आयु के बाँस लिये जाते हैं।

६ मिरतिंगा—यह भी माखालि की ही जाति का है। इसके भीतरी भाग का रग गुलाबी होता है। यह ऊपर-नीचे समान आकार का होता है। यह छप्पर बनाने तथा खूँटा आदि के काम मे आता है। इसकी कमचियो की अच्छी और मजबूत फूलदानी बनती है। किन्तु इस काम मे इसके मूल भागो का ही व्यवहार किया जाता है। इसमें अलकरण के लिए खुदाई का काम सुन्दर होता है।

७ बराक—इसकी लम्बाई १६० फुट की और मुटाई १६ इंच तक की होती है। यह उपर्युक्त सभी बाँसो से बडा, मोटा और सशक्त होता है। इसमे भी छिद्र अत्यन्त कम होता है और गाँठें ऊँची तथा घनी होती हैं। यह खूब ठोस होता है। इससे बनी टोकरी, फूलदानी आदि अच्छी होती है। दैनिक व्यवहार की वस्तुओं के लिए यह बहुत ही उपयोगी है। अपनी ठोस प्रकृति के कारण यह लकडी की जगह व्यवहार में आता है।

८ बारी—इसकी लम्बाई १६० से २०० फुट तक होती है। बराक की तरह इसकी गाँठें ऊँची नही होती। मुटाई तो इसकी २० इंच तक की होती है। अपनी मुटाई के अनुसार यह फोंफला भी खूब होता है। सामानो के रखने के लिए इसका चोंगा अच्छा बनता है। पेंसिल, ब्रस, अलकार, सिगरेट आदि रखने के लिए छोटा खोल-बक्स भी सुन्दर बनता है। इसके अगाडी भाग से खिलौने आदि भी बनते हैं।

९ बोम—यह अधिकाश तौर पर माखालि बाँस से मिलता-जुलता है। यह लम्बाई मे १०० फुट तक और मुटाई मे १२ इंच तक का होता है। अन्य बाँसों की अपेक्षा यह नरम होता है और इसकी चटाई सुन्दर होती है।

१० कनक कँइच—यह लम्बाई मे २५ से ३० फुट से बडा नही होता। इसकी मुटाई सिर्फ ३ से ४ इंच तक की होती है। यह मछली पकडनेवाली बंसी बनाने के काम मे बहुत आता है। यह मद्रासी और सिंगापुरी बेंत की तरह अनेक कामों मे व्यवहृत होता है। इससे कुर्सी, टेबुल, टोकरी तथा बक्स अच्छे बनते हैं।

११ खलाई या पहाडी—इसकी लम्बाई ४० फुट तक की होती है तथा छप्पर छाने के काम मे अधिकतर व्यवहृत होता है।

१२ ढाल—अन्य बाँसों के अतिरिक्त त्रिपुरा (आसाम) का यह पतला बाँस १०० फुट तक लम्बा होता है। इसकी गाँठों की दूरी ३ फुट की होती है। इतनी दूरी पर होनेवाली गाँठ दूसरे किसी बाँस मे नही होती। तीन या चार मास के बाँस का व्यवहार बेंत के सदृश उत्तम होता है। यह चटाई, पटिया आदि बनाने में परम

२ Dunda Calamus Hamiltonva—यह बाँस भी ज्यादातर बंगाल और आसाम में ही मिलता है। यह कद में छोटा और इसकी लम्बाई १८ फुट तक की होती है। इसकी मुटाई लगभग ४ इंच अथवा कुछ अधिक होती है। यह जैसे जैसे बढ़ता जाता है, इसके रंग में परिवर्त्तन होता जाता है। स्वभावतः यह कुछ टेढ़ा होता है।

३ Bambusa Nutans—यह बाँस पकने पर भी हरा ही रहता है। इसकी लम्बाई २० से ४० फुट तक की होती है और मुटाई १½ से ३ इंच तक की होती है। इसका व्यवहार प्रत्येक कार्य में एक समान होता है।

४ Bambusa Balcooa—यह बाँस काफी मजबूत और बड़ा होता है। इसकी लम्बाई ३० से ७० फुट और मुटाई ३ से ६ इंच की होती है। रंग इसका भी हरा ही होता है। इसकी त्वचा मोटी होती है और भीतर का छेद ½ इंच होता है। इसकी भी प्राप्ति बंगाल में ही होती है। इसकी त्वचा बहुत मोटी होती है, अतः इसे सीजन (Seasan) करना कठिन होता है। फाड़ने में भी कठिनाई होती है। समय से पहले काट लेने पर इसका व्यवहार किसी मजबूत काम में नहीं हो सकता।

इसकी कुछ विशेषताएँ हैं, जो इस प्रकार हैं—(क) नीचे से ऊपर तक की मुटाई प्रायः बराबर होती है। (ख) गाँठों के पास लगता है, जैसे जोड़ा गया हो। (ग) जहाँ दो गाँठे होती हैं, मालूम पड़ता है, जैसे यहाँ विभाजन किया गया है। (घ) इसकी कोंपलें ऐसी सटी रहती हैं कि दीवार जैसी लगती हैं और डालियाँ एक से दूसरी लिपटी होती हैं। (च) इसकी डालियाँ बसन्त की पतझड़ जैसी पत्रहीन होती हैं। (छ) डालियाँ निकलनेवाली गाँठ के पास का रंग तम लोहा-जैसा होता है।

उत्कल-प्रदेश के बाँस और उनका विवरण

उड़ीसा में अनेक प्रकार के बाँस होते हैं, किन्तु दूसरे प्रान्तों की तरह यहाँ भी न तो बाँस के सम्बन्ध में किसी तरह का अनुसन्धान हुआ है और न व्यावहारिक दृष्टिकोण से सबका नामकरण ही हुआ है। प्रायः बाँस के सम्बन्ध में भारतीय प्रदेशों की स्थिति एक-जैसी है। उड़ीसा में भी बाँसों की लम्बाई और मुटाई स्थान और जलवायु की प्रकृति पर ही निर्भर है। इस प्रान्त के 'बाणपुर' के जंगलों और देशी राज्यों के जंगलों के बाँस प्रायः अधिक मोटे और लम्बे पाये गये हैं।

उड़ीसा में प्रायः जो बाँस व्यवहार में लाये जाते हैं उनका विवरण निम्नलिखित है—

१ काँटा बाँस—इसकी जड़वाला भाग अत्यन्त गठीला होता है, और भीतरी भाग में बारीक छोटा छेद होता है। अपनी इस ठोस प्रकृति के कारण ही मजबूतीवाले कामों में यह व्यवहृत होता है। जैसे—घर के छप्पर बनाने, खम्भे और पशु बाँधने के खूँटे के काम में आता है। इसके अगले भाग में छेद बड़ा होता है और यह भाग ज्यादा फोंफड़ा होता है। इसको उड़ीसा में 'डबा' बाँस कहा जाता है। इसकी कमचियाँ बनाकर

जहाँ वाँस अत्यन्त घने उपजते हैं, केवल चारों तरफ के वाहरवाले वाँसो मे यह गुण पाया जाता है।

(२) उस क्षेत्र के वाँस, जहाँ तेज हवा वहती है, उसकी जडे कमजोर हो जाती हैं। अत., उनका विकास खूब नही होता और अच्छी तरह सीधे खडे भी नही रह पाते। वे छोटे और टेढे हो जाते हैं। वे कडे भी हो जाते हैं। इसलिए, जब उनके वारीक विभक्तीकरण का अवसर आता है, तब कठिनाई उत्पन्न हो जाती है। अच्छे वाँस जगल मे उपजते हैं, जहाँ वाँसो को सीधी और तेज हवा नही लग पाती।

(३) आर्द्र तथा अँधेरे स्थान मे लगाये गये वाँसो की गाँठे निकट-निकट होती हैं और ये वाँस कम मजबूत होते हैं।

(४) पहाडी क्षेत्र के वाँस की त्वचा पतली और हरी होती है और उसके भीतर का भाग कडा होता है। लेकिन, उपजाऊ स्थान के वाँस की त्वचा की हरीतिमा गाढी और मुलायम होती है। ये वाँस लचीले और मजबूत नही होते और इनकी गाँठें भी नजदीक-नजदीक होती हैं। इस कारण इस वाँस को कारीगर विशेष पसन्द नही करते।

(५) आसाम और नैपाल की तराई के जगलो मे उपजनेवाले वाँस वहुत अच्छे होते हैं। ये वाँस लम्वे, सीधे लचकदार और वस्तुओ के वनाने मे अधिक योग्य होते हैं, लेकिन देवदारु के जगलो मे उपजनेवाले वाँस अच्छे नही होते।

(६) स्थान-भेद से 'रोपा-वाँस' की प्रकृति में वहुत अन्तर आ जाता है। देखा गया है कि एक ही स्थान पर लगाये गये रोपा-वाँस एक ही उम्र मे एक समान नही होते तथा उनके काटने का समय भी एक नही होता।

(७) वाँस के कार्य करनेवाले के लिए वाँस की लम्वाई और उसका व्यास दोनो ही वहुत महत्त्व रखते हैं। उदाहरण के लिए, ५, ६, ७, ८ इच व्यासवाले 'चाभ' वाँस सभी प्रकार के कार्यो के लिए विशेष उपयुक्त होते हैं।

(८) वाँस के खेत में कितनी सख्या मे वाँस होने चाहिए, इस वात पर भी वाँस की प्रकृति वहुत-कुछ निर्भर करती है। सम्पूर्ण खेत के ६ प्रतिशत भाग मे ही वाँस को लगाया जाता है और लगाया जाना चाहिए। प्रत्येक ६ वर्गफुट मे वाँस की एक 'कोठ' होनी चाहिए और उसमे कितने वाँसों को वढावा दिया जाय, इसका व्योरा नीचे दिया जाता है।

एक कोठ मे ३ इचवाले व्यास के वाँस ३०, ४" वाले वाँस १७, ५" वाले ११, ६" वाले ८, ७" वाले ६ ८" वाले ५, ९" वाले ४, १०" वाले ३ और ११" वाले व्यास के वाँस २ होने चाहिए।

किन्तु सामान्यत वाँस निम्नलिखित रूप मे रोपे जाते हैं—

'चाभ' ३ से ५ तक प्रति ६ वर्गफुट मे, 'चाभ' जाति का दूसरा वाँस ४ से ६ तक प्रति ६ वर्गफुट मे और 'हगैती' २ से ४ तक प्रति ६ वर्गफुट मे।

बाँस की खेती का तरीका

जमीन का चुनाव

१ उचित गीली और बालू से भरी हुई जमीन।

२ ऐसी जमीन जो आसानी से सींची जा सके।

३ जहाँ सीधी धूप न पड़ती हो और हवा से बचाव हो।

जमीन की तैयारी

१ भूमि के भीतर का तना (Under-ground-stem) अच्छी तरह विकसित हो सके, इसके लिए १-२ फुट गहरा खोदकर सफाई कर लेनी चाहिए।

२ उस गड्ढे में पत्ता, सूखी घास, भूसा (Straw) और खाद डालकर भर देना चाहिए।

समय

१ वर्षा ऋतु के आरम्भ में बाँस की जड़ रोपना अच्छा होता है।

लगाने की पद्धति

१ बाँस को भीतरी जड़ के साथ (Under-ground-stem) लगाना चाहिए।

२ केवल बाँस की जड़ (खूँटी) लगाने की पद्धति भी प्रचलित है।

३ केवल भीतरी जड़ (Under-ground stem) लगाने की पद्धति भी है।

१ भीतरी जड़ के साथ बाँस लगाने की पद्धति—(क) पहली पद्धति में एक-दो साल का बाँस काम में लाना चाहिए।

(ख) मूल-बाँस का गिरदा (Round) ३-४ इंच का होना चाहिए।

(ग) लगाने के लिए ऐसे बाँस का चुनाव करना चाहिए, जिसकी गाँठें नजदीक-नजदीक हों।

(घ) मूल-बाँस की जड़ को एक-दो फुट नीचे गाड़कर (Under-ground stem) लगाना चाहिए और बाजू के अंकुरों को नहीं तोड़ना चाहिए। इस तरह गाड़ना चाहिए, जिससे अंकुरों को किसी प्रकार आघात न पहुँचे।

(च) हवा से बचाव के लिए बाँस को नीचे से ४-५ गाँठ (Node) को छोड़कर उसके ऊपर का भाग काट देना चाहिए।

(छ) भीतरी जड़ को बराबर नरम करना चाहिए।

(ज) लगाने के पहले उचित गहराई तक खूब गड्ढा खोदकर पानी डालना चाहिए।

(झ) मूल बाँस के पास खम्भा खड़ा करना चाहिए।

(ट) लगाने के बाद, मिट्टी से ढकते समय, धूल न मिलानी चाहिए।

खाद

बाँस के लिए निम्नलिखित खाद उपयोगी हैं—

१ मल (मनुष्य की टट्टी और पेशाब)

२ कम्पोस्ट (Farm-yard Manure)

३. सूखी घास (Fallen Leaves)

४ राख (Ashes)

लेकिन इसमें (नमकीन खाद) या पानी नहीं डालना चाहिए, क्योंकि बाँस नमक पसन्द नहीं करता है।

हर साल में $\frac{1}{8}$ प्रति एकड़ मल-खाद ४००० पौण्ड तथा Compost वगैरह ४००० पौण्ड देना उचित होगा।

(क) जलमय-खाद (Liquid Manure) $\frac{1}{10}$ प्रति एकड ५-६ स्थानों में हल्का गड्ढा खोदकर डालना चाहिए। बाद, मिट्टी से ढक देना चाहिए।

(ख) Under-ground-stem जिधर बढ़नेवाला हो, उधर ही गड्ढा बनाना चाहिए, क्योंकि Under-ground-stem इसी ओर बढ़ता है।

(ग) एकबार ज्यादा खाद देने की अपेक्षा साल में ५-६ बार खाद देना अच्छा होगा।

(घ) दो साल के बाद घास, भूसा (Straw), खाद वगैरह को चारों तरफ दो इंच तक डालकर भर देना चाहिए और उसके ऊपर दूसरी जगह से मिट्टी लाकर डाल देनी चाहिए। प्रति ३ या चार साल के बाद एक बार ऐसा करना चाहिए।

सुधार (Care-repair-Trimming)

(क) साल में दो बार घास निकालकर सफ़ाई करनी चाहिए।

(ख) आबोहवा अगर सूखी है, तो पानी देना चाहिए।

(ग) जिस साल बाँस लगाया जायगा, उस साल लगभग नहीं उठेगा। दो साल के बाद ५-६ बाँस पैदा होंगे और ७-८ फुट तक बढ़ेंगे।

(घ) करीब ५ साल के बाद बाँस तैयार हो जायेंगे और ७-८ साल तक पूरी कोठ (बाँस-वन) तैयार हो जायगी।

जब यह ७ या ८ वर्ष का हो जाता है, तब इसकी त्वचा लाल और खुरदरी हो जाती है। इस समय इसके तेल का भाग कम हो जाता है और इसका चमड़ा रूखा और टूटनेवाला हो जाता है। बाँस के बागीचे की रक्षा की दृष्टि से, हमलोग उन बाँसों को काटने के लिए चुनते हैं, जिनकी जड़ नष्ट हो रही हो। ऐसा बाँस, जिसकी जड़ नष्ट होने लगती है, कलात्मक कार्य के लिए अनुपयोगी हो जाता है। इस खयाल से ५ से ६ वर्ष की आयुवाला बाँस काटना चाहिए, जो सबसे अधिक उपयुक्त होता है। निष्कर्ष यह कि साधारण व्यवहार के लिए खाभ और गोपा-बाँस ५ वर्ष, पतला मकोर २ वर्ष तथा हरौती लगभग ६ वर्ष की उम्र में काटे जाने के योग्य होते हैं।

मकोर को २ वर्ष की ही उम्र में काटने का कारण यह है कि अक्सर भय बना रहता है कि इसका रंग फीका पड़ जायगा। अगर काटे जाने योग्य बाँस न काटे जायँ, तो न केवल बाँस कलात्मक दृष्टि से निम्न कोटि का हो जायगा, बल्कि बाँस का बागीचा पोषक तत्त्व की कमी के कारण नष्ट भी हो जायगा।

(६) बाँस की त्वचा के रंग से ही बाँस की उम्र पहचानी जाती है। छोटी उम्र का बाँस ताजा और हरा होता है। लेकिन आगे चलकर आयु के अनुसार उसका रंग गाढ़ा हो जाता है और अन्त में उसमें थोड़ा पीलापन भी आ जाता है। स्थान-भेद से इस नियम में भी अन्तर आता है। इस कारण बाँस की वास्तविक आयु क्या है, यह पता लगाना कठिन है। इसके लिए ही बाँस की उत्पत्ति के वर्ष में ही स्याही से उस पर लिख दिया जाता है। मौसम के आधार पर कीड़ों की उत्पत्ति स्वतः होती है। इसलिए बाँस काटने के समय मौसम की जानकारी भी आवश्यक है, अन्यथा काटे हुए बाँस में कीड़े लगने की सम्भावना रहती है। इस गलती से सावधानी बरतने की भी आवश्यकता है।

काटने का समय

(१) बाँस काटने के मौसम और उसमें कीड़ा के लगने में गहरा सम्बन्ध है। बाँस को अक्टूबर से दिसम्बर तक काटना अच्छा है। इसका कारण यह है कि बाँस के बढ़ने का जो समय है, वह उपर्युक्त समय के पूर्व ही समाप्त हो जाता है। जब बाँस बढ़ता रहता है, उस मौसम में यदि उसे काट लिया जाता है, तो उसमें कीड़े लगने का भय रहता है। ऐसे समय के कटे हुए बाँस लचीले या मुड़नेवाले नहीं होते, टूटनेवाले होते हैं। उनकी गाँठें कमजोर हो जाती हैं और उनमें अच्छी चमक भी नहीं रह जाती। अर्थात्, जब बाँस के बढ़ने का समय होता है, तब उसमें रस भरा रहता है और वह मीठा होता है तथा उस समय काटने पर बाँस की गाँठों में कीड़े अवश्य और अधिक लगते हैं।

(२) कुछ लोगों की राय में जो बाँस शीत ऋतु में काटा जाता है, वह बहुत ही कड़ा और टूटनेवाला होता है। इस कारण मध्य अक्टूबर से मध्य नवम्बर तक बाँस काटने का सर्वोत्तम समय है।

(३) किन्तु बाँस काटने का दूसरा अच्छा समय दिसम्बर से मार्च तक का होता है। इसी तरह यदि [illegible] को [illegible] (सबसे अधिक गर्मी के दिन) तक काट

(११) भारत तथा अन्य देशो के किसान बाँस का रग देखकर ही उसकी आयु बता देते हैं। खास उम्र मे बाँस का खास रग हो जाता है। इसलिए किसानो और बाँस के विशेषज्ञो के लिए आयु बता देना आसान है। बाँस की पैदावार मे लगे हुए जापान के किसान बाँस की खेती मे बडे निपुण होते हैं। वे कई खेतों मे बाँस लगाते हैं और उनका नक्शा बनाकर, पूरे ब्योरे के साथ लिखित रूप मे रखते हैं। इस प्रकार वे बाँस की खेती-सम्बन्धी सारी बातें ठीक वक्त पर पूरा करते हैं।

मैंने जापान के 'सादो' द्वीप के 'अकादोमारी' गाँव में 'बाँस-अनुसधान-प्रतिष्ठान' मे काम करते हुए देखा कि एक किसान ने बाँस की खेती में खाद का व्यवहार करके बाँस के विकास मे आशातीत सफलता प्राप्त की। खाद के व्यवहार से मोटी किस्म के बाँस उत्पन्न होने लगे।

(१२) जिन बाँसो या बाँस की कोठ मे फूल निकल आता है, वे बाँस बेकार हो जाते हैं—किसी काम के नही होते। ऐसे बाँस केवल जलावन अथवा कागज बनाने के काम मे ही आ सकते हैं। बाँस में फूल निकल आना हमारे देश में अशुभ माना जाता है और अकाल का लक्षण समझा जाता है। ऐसा विश्वास जापान मे भी है। गत महायुद्ध के समय जापान में बाँसों मे फूल निकल आये थे। इसका फल खाने के काम में भी आता है।

बाँस मे लगनेवाले कीडो की रोक-थाम

बाँस मे लगनेवाले अधिकाश कीडे उसके अन्दर घुसकर उसे खा जाते हैं। इस कारण, बाँस के कटे और चीरे गये सामान सुरक्षित रखे जाने चाहिए। टोकरी अथवा पिंजडा बनानेवाले कारीगर, जो सालों-भर काम करते हैं, एक वर्ष के लिए शिशिर ऋतु में कटे बाँस खरीद लेते हैं। लेकिन जब उनका सामान खत्म हो जाता है और उन्हें शिशिर के पहले बाँस के सामान की जरूरत पडती है, तब शिशिर के लिए वे वसन्त मे कटे बाँस खरीदते हैं। कारीगर बाँस को काट-फाड़ कर, कीडों से बचाने के लिए, एकत्र कर रख देते हैं। जब वे उन सामानों से टोकरी या पिंजडे बनाने लगते हैं, तब उन्हें दो-तीन दिनो तक पानी मे रख छोडते हैं। आर्थिक दृष्टिकोण से एक ही समय सामान को काट-फाड लेना और उन कटे-फटे सामानों से एक वर्ष के लिए वस्तुएँ तैयार कर लेना, सबसे अच्छा तरीका है।

अनेक अनुसधानों से यह सिद्धान्त अस्वीकृत हो चुका है कि बाँस मे जो रस रहता है, उसी के कारण उसमे कीडे लगते हैं अथवा बाँस कृष्ण पक्ष मे काटा जाना ही चाहिए।

बाँस के बने सामान अथवा वस्तुओं में कीडे लगने और गर्मी में साइडिड (गेरुई रोग) लगने की समस्या कारीगरों के लिए बहुत जटिल है। लेकिन, इन समस्याओं के हल के लिए कृषि-विभाग तथा विभिन्न स्थानों की अनुसधान-समितियों ने कई बातें बताई हैं।

बाँस का सभी रस निकल जाने पर ही उसे व्यवहार मे लाया जाता है। अगर बाँस की आर्द्रता १२ से १५ प्रतिशत सुरक्षित रख ली जाय, तो उसमे अथवा उसकी बनी

(Phenol), एसिड। लेकिन ये वस्तुए विषैली हैं, इसलिए खाने के बरतन मे इन्हे नही रखना चाहिए। इसके अतिरिक्त एसिटिक अम्ल (Acetic Acid) और सॉल्ट, फिटकरी (Alum), कौरोसिव सब्लीमेट (Corrosive Sublimat), सोडियम फ्लोराइड (Sodium fluoride) भी कीडा मारने के लिए उपयोगी हैं। कॉपर सल्फेट सॉल्युशन भी कीडा मारने के काम मे लाया जाता है। कभी-कभी गध के कारण लगनेवाले कीडे के लिए गरम पानी भी काम मे आता है।

३ गैस-प्रयोग—फारमालिन (Formalin) तथा गधक ० ८। कीडे मारने का एक तरीका गधक-गैस का प्रयोग भी है। जुलाई तथा अगस्त महीने मे बाँस मे (Aspijutious, Pancilium, Fizopin, Meneor) कीडे लगते हैं। ये कीडे औसतन प्रतिमास ५०-५० बच्चे देते हैं और हर तीसरे महीने बच्चे देते हैं। मादा कीडे भीतर ही रहते हैं, लेकिन नर कीडे बाहर चले जाते हैं। ये कीडे ६० दिनो के बाद अण्डा देना शुरू कर देते है। एक वर्ष तक उसमे रहने के बाद वे कीडे बाँस को छोड देते हैं, लेकिन बाँस तबतक बरबाद हो जाता है। अत॰, कीडो से रक्षा के लिए जुलाई-अगस्त मास के पहले ही उपाय किये जाने चाहिए। कीडे सूखे सामान मे जाना नापसन्द करते हैं, क्योंकि उन्हे वहाँ रसीला द्रव्य नही मिलता।

(Nael Solution) को अगर बोरिक एसिड के साथ मिला दिया जाय और उसमे बाँस का सामान रखकर १५ से २० मिनट तक गरम किया जाय, तो उसमे भी कीडे मर जाते हैं।

कीड़ो से सुरक्षा के लिए बाँस के बने कच्चे सामान मे उपर्युक्त सॉल्युशन का अच्छी तरह लेपकर पचा देना काफी होगा लेकिन इस सॉल्युशन मे अगर वे सामान डुबो दिये जायॅ जिससे वह उनके भीतरी भाग मे भी प्रवेश कर जायॅ, तो यह और भी अच्छा तरीका होगा।

साधारण प्रेसर प्रोड्यूसिग विधि

वैकुअम पम्प से बाँस मे मिश्रित पदार्थ पचाया जा सकता है—

(क) सल्फेट ऑफ् कॉपर का सॉल्युशन ० ८ मे १ २५%

(ख) एसिटेट का सॉल्युशन १ ० मे २ ०%

(ग) फिनौल १ ० मे २ ०%

हमे क, ख तथा ग का व्यवहार करना चाहिए। जिंक-सल्फेट बाँस के कच्चे सामान को थोडा रगीन बना देता है इसलिए इसका व्यवहार नहीं करना अच्छा होगा। जिंक सल्फेट तथा एसिटेट सॉल्युशन विषैले पदार्थ हैं, अत इसमे व्यवहृत बाँस के बने

पी० सी० पी० ३ ग्राम, जल ३०० ग्राम—दोनो को ठीक से मिलाकर उसमें बाँस को २४ घटे तक रखते हैं। फिर सामान को निकालकर बिना धोये-पोंछे धूप मे सूखने को रख दिया जाता है।

५. **सामान को उबालना**—कीडो को हटाने का सबसे सरल और सस्ता तरीका

(चित्र २)

जी० आई० चदरा का टब

(चित्र २ क)

[illegible] है कि बाँस के सामान को पानी में [illegible]

कीडो से बचाने की व्यवस्था नही की जाय, तो बॉस नया हो अथवा पुराना, उसमे उस गध के चलते कीडे जरूर ही लगेंगे।

क्रीयोसॉट ऑयल (Creosote oil) कीडो से बचाने के लिए बहुत ही प्रभावकारी होता है। दूसरा रासायनिक द्रव्य malmite होता है, जो sodium fluoride और डाइनाइट्रोफिनॉल (Dinitrophenol) का बना हुआ होता है। यह मिश्रित पदार्थ भी कीडों को भगाने के लिए बहुत ही उपयोगी होता है।

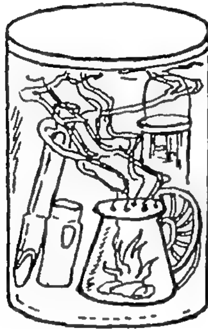
लकडियों से कीडे भगाने के लिए हमेशा malmite व्यवहार किया जाता है। आम व्यवहार के लिए कपूर (Camphor) तथा गाभ के फल (F A Persimon Juice), (एक प्रकार का फल, जिससे निकाला गया रस, जो दो-तीन वर्षो से बोतल मे बन्द हो) बहुत उपयोगी होता है। इस रस को जापान मे चित्रकारी के काम म लाते हैं। इससे रँगने पर कीडे नहीं लगते। इसी तरह, जापान मे भोजन के समय काम मे आनेवाले सामानों (छुरी, फॉर्क स्टिक, चौंक-स्टिक आदि) को कृमिहीन करने के लिए जापानी, बोरिक एसिड या सॉल्ट वाटर मे रखकर उबालते हैं। ये द्रव्य विपाक्त नही होते।

यह कहा गया है कि काटे जाने के बाद बाँस का ऊपरी भाग नीचे की ओर करके रखा जाना चाहिए ताकि उनका वह द्रव्य, जिसके कारण उनमे कीडे लगते हैं, प्राकृतिक रूप से नीचे चला जाय। बाँस को काटने के बाद उसमे Polysaccharide (चीनी-जैसा एक द्रव्य) हटाने के लिए उसकी शाखा तथा पत्र-समेत बाँस को उसी स्थान मे कम-से-कम एक सप्ताह तक छोड देना चाहिए। इससे उक्त द्रव्य बाँस से निकलकर शाखा तथा पत्तियों मे चला जाता है और बाँस मे कीडे लगने का भय नही रह जाता। यह पदार्थ अधिकतर बाँस की गाँठ मे रहता है जिससे बडे-बडे कीडे बाँस के मुख्य भाग मे लगते हैं।

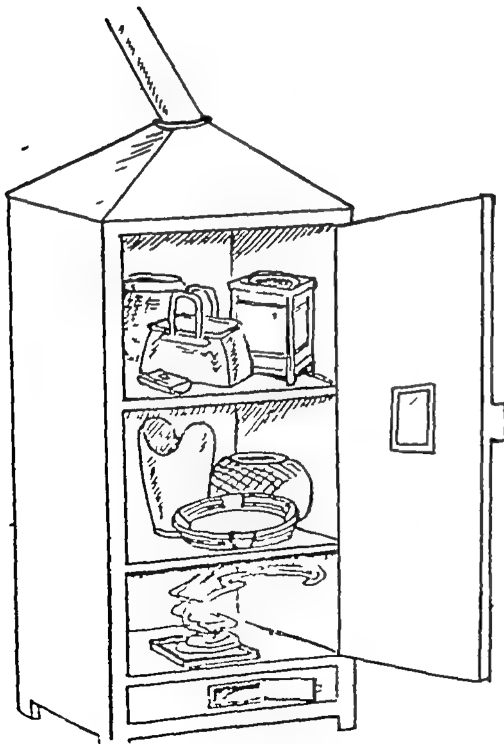
बाँस रखे गये हैं, तो उसमे पेंटोजन (बाँस का तेल) की मात्रा बहुत कम हो जाती है और जिसमे फफुँदी (मोल्ड) के कीडे भी कम हो जाते हैं। इस कारण हमें चाहिए कि पूर्वकथित रीति से बाँस से पेंटोजन को निकाल दें।

स्पोर से बचने की कुछ विधियाँ

१ फॉरमलिन (Formalin) तथा सल्फर(Sulphur) के गैस की गंध से स्पोर मर जाते हैं। स्पोर को कौन कहे, इसके तेज गैस के प्रयोग से मनुष्य तक भी मर जाता है। जहाज से भेजी जानेवाली चीजों में फॅफुंदी (मोल्ड) अधिक लगती हैं, क्यों कि समुद्र-जल की आर्द्रता का उन पर प्रभाव पड़ता है। इससे बचने के लिए एक बोतल मे उपर्युक्त गैस को रखकर उसको कागज से बन्द कर देना पड़ता है। उस कागज मे थोडा छेद रखना पड़ता है, ताकि उस होकर गैस धीरे-धीरे बाहर निकल सके। उसके बाद उस बोतल को उस बक्से मे रख देते हैं, जिसमें फॅफुंदी लगी चीजें रखी हैं और फिर बक्से को बन्द कर छोड देते हैं। इससे फॅफुंदी नष्ट हो जाती है। इसकी विधि चित्र ४ मे दिखाई गई है।



(चित्र ४)



(चित्र [illegible])

२ गंधक (Sulphur) का प्रयोग—इस कार्य के लिए एक पृथक् आलमारीनुमा कोठरी बनाई जाती है। यह कोठरी विशेष प्रकार की बनी होती है। उसके अन्दर बाँस की बनी सामग्री को रखकर बन्द कर देते हैं। बाँस के बने सामानों को रखकर नीचेवाली थाक के नीचे गंधक जला देते हैं। इसका धुआँ ऊपर तक जाता है। इससे सभी फफूँदी (मोल्ड) नष्ट हो जाती है। [illegible] निकलने [illegible] दरवाजे के नीचे एक [illegible] रहता है,

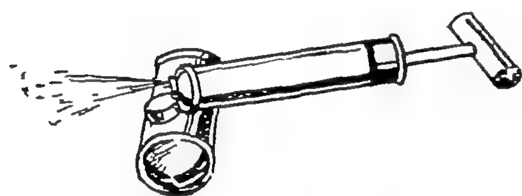
सेंटीग्रेड आर्द्रता मे रहने दीजिए। उसके बाद देखने से पता चलेगा कि जिस टुकडे मे उपर्युक्त द्रव्य नही लगाया गया है, उसमे फॅफुदी लग गई, लेकिन दूसरे मे नही लगी।

फॅफुदी (मोल्ड) से बाँस को सुरक्षित रखना

जैसा ऊपर कहा जा चुका है, बाँस मे मुख्यत स्परजिलस (Aspergillus) नामक फॅफुदी लगती है, लेकिन इसकी अपेक्षा रिजोपस पेनिसिलम (Rhizopus Penicilum) नामक फॅफुदी (माल्ड) कम हानि पहुॅचानेवाली है।

स्पोर एक प्रकार के कीटाणु हैं, यह जितनी अधिक मात्रा मे बढते हैं, उसीके अनुसार फॅफुदी (मोल्ड) की भी वृद्धि होती है। स्पोर को हम लोग देख नही सकते। ये कीडे इतने सूक्ष्म होते हैं कि हवा मे भी नही देखे जा सकते। अनुकूल वातावरण और वस्तु के पाने पर उस पर जम जाते हैं और अण्डा देना आरम्भ कर देते हैं।

(१) **विषाक्त वस्तुओं का प्रयोग**—पारदीय रसायन (Mercurial chemical) अनेक प्रकार के होते है, लेकिन द्विरदीय पारद (Mercuric chloride) इस काम के लिए प्रयोग किया जाता है। इस विलयन को पानी के साथ मिलाकर छिडकते हैं। विलयन बनाने की विधि निम्नलिखित है—



(चित्र ६)

(Mercuric chloride) ($HgCl_2$) ०१ ग्राम और जल १०० ग्राम दोनो को मिलाकर विलयन बनाते हैं और साधारणत. तैयार वस्तुओ पर छिडकते हैं। इसका छिडकाव उन्ही वस्तुओ पर करना चाहिए, जो भोज्य पदार्थ नही हैं, क्योंकि यह विषैला होता है। छिडकाव करने की पिचकारी चित्र ६ में दिखाई गई है।

(२) **अन्य आरगेनिक रासायनिक का प्रयोग**—इसकी दो विधियाँ हैं. एक शीत-प्रणाली और दूसरी उष्म-प्रणाली।

(क) **शीत-प्रणाली**—घुलनेवाला पी० सी० पी० (Soluble P C P) १ ग्राम और जल १०० ग्राम, दोनों को ठीक से मिलाकर उसमे बॉस की बनी वस्तुओ को २४ घटे के लिए छोड देना चाहिए। फिर, उन्हें निकालकर धूप में सूखने के लिए कम-से-कम तबतक छोड देना चाहिए, जबतक उनका पानी सूखकर केवल १५% रह न जाय। लेकिन, यह विधि सूखे हुए बाँस की वस्तुओं के लिए है।

(ख) **उष्म-प्रणाली**—यह केवल कच्चे बाँस की बनी वस्तुओ मे व्यवहार की जाती है। यह विधि बाँस से तेल-पदार्थ निकालने, सुखाने तथा फॅफुदी से बचाने के काम मे व्यवहृत होती है। घुलनेवाला (Soluble) P C P १ ग्राम, सोपलेस सोप (Soapless soap) ०८ ग्राम तथा जल १०० ग्राम, इन तीनों को मिलाकर और उनमे सामान रखकर २० मिनट तक उबाला जाता है। उसके बाद सामान को निकालकर सूखे वस्त्र से पोछ दिया जाता है। फिर, उन्हे कम-से-कम दो सप्ताह तक तबतक धूप मे

इसके फुहारे (Spray) द्वारा यदि बाँस को भिगो दिया जाय, तो लगे हुए कीड़े भी नष्ट हो जायेंगे। ऐसे फुहारे दिये गये बाँस की बनी वस्तुओं में कभी कीड़े नहीं लगेंगे।

Sodium Silicate Solution को पानी में मिलाकर कूँची से वस्तुओं पर पोतना चाहिए और उसे तैयार माल पर लगाना चाहिए।

कपूर का तेल (कैम्फर ऑयल) भी इस कार्य के लिए बहुत ही लाभप्रद होता है। बाँस के तैयार माल पर इसका भी प्रयोग करना चाहिए।

Petroleum के साथ Bordeaux Solution मिलाकर अगर सामान पर लगाया जाय, तो इससे भी कीड़े मर जाते हैं। Mixture of lime and copper Sulphate को Mercuric chloride के साथ मिलाकर सामान पर लगाने से भी कीड़ों से छुटकारा मिलता है।

(३) फफुदी और कीड़ों से बचाव के लिए निम्नलिखित तरीके भी बताये गये हैं—

(क) बाँस को सीमित अवधि में काटना।

(ख) बाँस के कच्चे सामान को सुरक्षित रखना और उसकी रक्षा का उपाय करना।

(ग) तेल को निकाल देना।

(घ) रासायनिक पदार्थों का प्रयोग।

(च) रँगना।

(छ) लेप देना।

(ज) अन्यान्य विधियाँ।

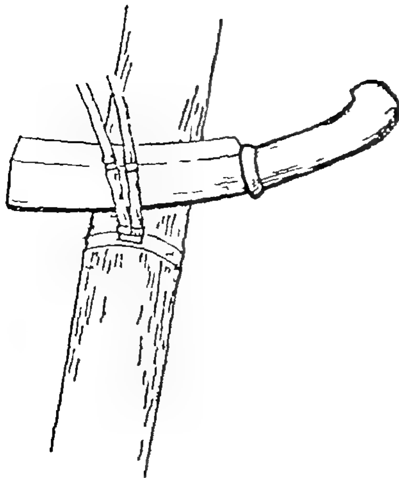
(क) बाँस को खास अवधि में काटने का ज्ञान किसानों में बहुत दिनों से है, जिसके अन्दर बाँस काटने से उसमें कीड़े नहीं लगते। यह प्रमाणित हो चुका है कि बाँस काटने के दो समय होते हैं—(१) अक्टूबर से नवम्बर तक या जनवरी से फरवरी तक (जाड़े) में और (२) जुलाई से अगस्त तक। कृषकों का कहना है कि प्रत्येक मास की प्रथम तिथि (प्रतिपदा कृष्णपक्ष) को बाँस काटना चाहिए।[1]

जापान में बाँस काटने और उसके सामान बनाने के बीच का समय कम से-कम ८ से ६ महीने तक का होता है। उदाहरणार्थ, अक्टूबर में कटे बाँस का तेल जून में निकाला जाता है और उसके साफ (Bleaching) करने का समय भी मई तथा जून में होता है।

बाँस को कीड़े से सुरक्षित रखने के लिए और भी अनेक प्रकार के रासायनिक पदार्थ व्यवहार किये जाते हैं।

---

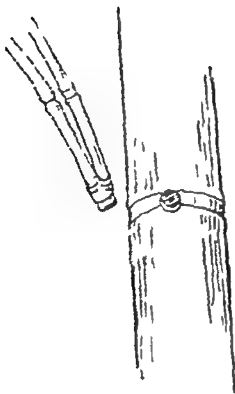
१ जापान के कृषि और वन-विभाग के एक रासायनिक वैज्ञानिक 'श्रीमिसुरा' का मत है कि किसान द्वारा निश्चित अवधि में काटे गये बाँसों तथा अन्य समय में काटे गये बाँसों में कोई खास अन्तर नहीं पाया जाता है। हाँ, निश्चित समय पर काटने का विचार अन्य प्रकार की लकड़ियों में प्रयोग किया जाता है।



(चित्र ८)

शाखाओं को काटना

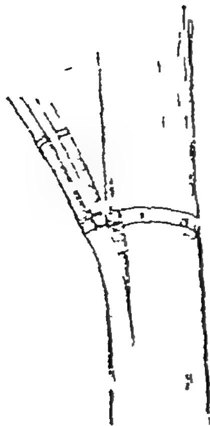
शाखाओं को काटते समय इस बात की सावधानी रखनी चाहिए कि बाँस की हरी त्वचा को चोट न पहुँचे और न उसमें कोई खुरच हो, क्योंकि खुरच लगे बाँस का मूल्य कम हो जाता है। शाखाओं को काटने का तरीका यह है कि प्रथम हल्का प्रहार जड़ की ओर से शाखा के आधार पर करना चाहिए (चित्र ७) और तब किनारे से, उसकी विपरीत दिशा की ओर से, प्रहार होना चाहिए (चित्र ८)। अक्सर इस काम के लिए दबिला (काँता) को ही व्यवहार में लाया जाय, तो सर्वोत्तम हो।



(चित्र ९)

इस ढंग से शाखा आसानी से हट जायगी (चित्र ९) और बाँस की त्वचा भी ज्यों-की-त्यों बनी रह जायगी। अगर उपर्युक्त ढंग से प्रथम प्रहार नहीं किया जाय, तो शाखा के साथ-साथ बाँस की त्वचा भी कट जायगी (चित्र १०) और बाँस का मूल्य घट जायगा।

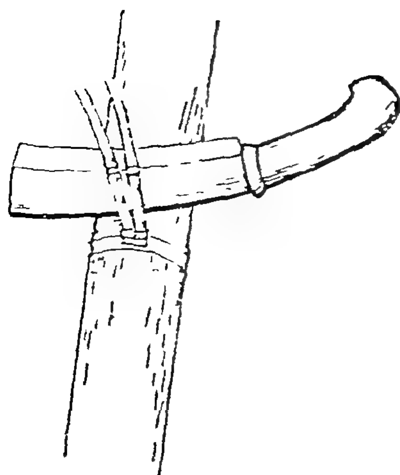
आरी से शाखा को काटने की विधि के लिए बाँस की जड़ से पहले हल्का कटान करना चाहिए और तब उसके बाद आरी की मूठ से विपरीत दिशा से प्रहार करना चाहिए। इस विधि के लिए चित्र-संख्या ११ और १२ ध्यान से द्रष्टव्य हैं।



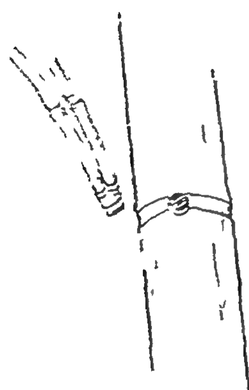
(चित्र १०)

कटे बाँस को सुरक्षित रखना

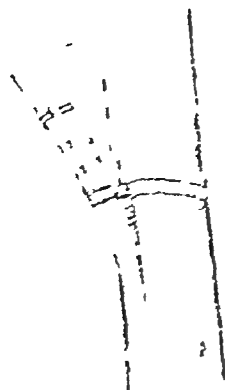
ऐसे सामानों से काम करना आसान है, जो दो मास पूर्व कटे और छायादार स्थान में रख दिये गये हों। इस प्रकार नहीं रखे गये बाँस का चीरना या उनसे कमाचियाँ बनाना कठिन होता है। ठीक मौसम में काटे गये बाँस [illegible]



(चित्र ८)



(चित्र ९)



(चित्र १०)

शाखाओं को काटना

शाखाओं को काटते समय इस बात की सावधानी रखनी चाहिए कि बाँस की हरी त्वचा को चोट न पहुँचे और न उसमें कोई खुरच हो क्योंकि खुरच लगे बाँस का मूल्य कम हो जाता है। शाखाओं को काटने का तरीका यह है कि प्रथम हल्का प्रहार जड़ की ओर से शाखा के आधार पर करना चाहिए (चित्र ७) और तब किनारे से, उसकी विपरीत दिशा की ओर से, प्रहार होना चाहिए (चित्र ८)। अक्सर इस काम के लिए दबिला (काँता) को ही व्यवहार में लाया जाय, तो सर्वोत्तम हो।

इस ढंग से शाखा आसानी से हट जायगी (चित्र ९) और बाँस की त्वचा भी ज्यों-की-त्यों बनी रह जायगी। अगर उपर्युक्त ढंग से प्रथम प्रहार नहीं किया जाय, तो शाखा के साथ-साथ बाँस की त्वचा भी कट जायगी (चित्र १०) और बाँस का मूल्य घट जायगा।

आरी से शाखा को काटने की विधि के लिए बाँस की जड़ में पहले हल्का कटान करना चाहिए और तब उसके बाद आरी की मूठ से विपरीत दिशा से प्रहार करना चाहिए। इस विधि के लिए चित्र-संख्या ११ और १२ ध्यान से द्रष्टव्य हैं।

कटे बाँस को सुरक्षित रखना

ठीक मसालों से काम करना आसान है, जब वे दो मास पूर्व काटे और छायादार स्थान में रख दिये गये हों। इस प्रकार नहीं रखे गये बाँस को चीरना या उनसे वस्तुएँ बनाना कठिन होता है। ठीक मौसम में काटे गये बाँस करीब २ फुट ऊँचे

होता है। पहाडी बाँसो का गट्ठर बारह, सोलह और पचीस की सख्या मे होता है। जिसे बरही, सोरही और पचीसी कहते हैं। इसकी जानकारी का तरीका रस्से की खास लम्बाई के अनुसार होता है। खास लम्बाई के रस्से का उल्लेख होता है, तो इससे समझा जाता है कि उसमें बाँसो की सख्या इतनी है। विभिन्न स्थानो के बाँस एक गट्ठर में विभिन्न सख्याओ मे आते हैं।

होता है। पहाडी वाँसों का गट्ठर बारह, सोलह और पचीस की संख्या में होता है। जिसे बरही, सोरही और पचीसी कहते हैं। इसकी जानकारी का तरीका रस्से की खास लम्बाई के अनुसार होता है। खास लम्बाई के रस्से का उल्लेख होता है, तो इससे समझा जाता है कि उसमें वाँसों की संख्या इतनी है। विभिन्न स्थानों के वॉस एक गट्ठर में विभिन्न संख्याओं मे आते हैं।

पॉलिश करना

जिनकी त्वचा उजली, बुकनीदार होती है अथवा जिनकी सतह गठी रहती है (जैसा कि चाभ), उन बॉसो मे पॉलिश करना जरूरी होता है।

(१) पानी मे बॉम को डुबो दिया जाता है और पुआल की बनी रस्मी लपेटकर, चिकना करनेवाली वालू से उसे चिकना किया जाता है और तब पानी से धो दिया जाता है। इसे रस्मीवाली पॉलिश कहते हैं।

(२) बाँस के ऊपर की पॉलिश महीन बालू अथवा चिकनी बालू से की जाती है।

(३) मुलायम त्वचावाले बॉस (हरोती या पहाडी बॉस) की पॉलिश करने के लिए बालू में उसके बराबर चोकर या भुस्मी मिलाई जाती है और इसी से बॉस को चिकना किया जाता है।

(४) किन्तु केवल धान की भुस्मी से चिकना करना सर्वोत्तम होता है और इससे पखे, कूँची आदि की मूट भी चिकनी की जाती हैं।

चिकना करने के और तरीके भी है, जिनसे लकडी की बनी वस्तुए चिकनी की जाती हैं।

(५) भिन्न-भिन्न प्रकार के बाँस की सतह भिन्न-भिन्न प्रकार की होती है। व्यवहार के अनुसार उन्हें तैयार करने की भी विधियाँ भिन्न है। उनमे से कुछ विधियाँ नीचे दी जा रही हैं—

(क) **धान की भुस्सी से**—साधारण बाँस अच्छी बालू या धान की भुस्मी मे (बालू और भुस्मी का अनुपात १ ५) पानी मिलाकर चिकना किया जाता है। अच्छी किस्म के बॉस को चिकना बनाने के लिए केवल भुस्मी का व्यवहार किया जाता है, क्योंकि बालू देने से उसकी सतह को क्षति पहुँच सकती है। रुखडी सतहवाले बाँस तथा हरोती और पहाडी को या ऐसे बॉस को, जिनकी सतह पर काले या उजले धब्बे रहते हैं, चिकना करना पडता है। इस प्रकार, चिकना किये गये बाँस को धूप में सुखा लेते है और उनमे से तेल निकाल लेते हैं। यह विधि ऐसे बॉसों के लिए नहीं है, जिनकी सतह सुन्दर और मुलायम होती है, जैसा कि चाभ या मकोर तथा कुछ अन्य बॉस। यह विधि केवल उन बाँसो के लिए है, जिनमे प्राकृतिक सुन्दरता का अभाव रहता है।

(ख) **पुआल की बनी डोरी से**—खास किस्म के बॉस को जिनकी सतह मे प्राकृतिक सुन्दरता है, सामान्यत केवल पुआल की डोरी से चिकना किया जाता है। इन बाँसो से अगर सब तेल निकाल लिया जाय, तो इनका रंग बदल जाता है और वे बेकार हो जाते हैं। अत तेल निकालते समय पूरी सावधानी बरती जाती है।

(ग) **बालू से**—पहाडी बाँस की सतह पर काले धब्बे होते हैं और उनमे अच्छी चमक भी नहीं होती। इसलिए उन्हें बालू से चिकना किया जाता है। [illegible] [illegible] के लिए [illegible] के काम में [illegible] [illegible] के [illegible] के काम में ला [illegible] हैं। [illegible] बालू से चिकना [illegible] बाँस के स्थान पर व्यवहार किया जाता है।

जब चीरे हुए बॉस को काटना हो, तब उसे बाहरी सतह की ओर से काटना चाहिए। छुरी के द्वारा सतह की ओर से थोडा काट देना चाहिए और तब उसे हाथ से तोड देना चाहिए।

(२) **काटने में सावधानी**—अभीष्ट लम्बाई के सामान काटते समय बॉस के उस स्थान को छोड देना चाहिए, जहॉ डालियॉ निकली रहती हैं। इस भाग को विभक्त करने मे कठिनाई होती है।

सामान की बुनाई के काम मे आनेवाली कमचियो के लिए बॉस के सबसे अच्छे भाग व्यवहार में लाये जाते हैं। चूँकि, नौसिखुए लोगो के लिए लम्बा सामान बनाना कठिन है, इसलिए उन्हें सबसे अच्छे बॉस को व्यवहार मे नही लाना चाहिए। आम तौर पर साधारण बुनाई की छोटी टोकरियो के लिए ६ फीट, मझोले के लिए १२ फीट तथा बडे आकारवाली के लिए १८ फीट लम्बाई होती है। अगर छोटी लम्बाईवाले पोर का बॉस हो, तो उससे लम्बे सामान नही बन सकते। इसलिए सामान के अनुसार उपयुक्त पोरवाले बॉस का व्यवहार करना चाहिए।

इसके बाद बुनाई करने के लिए कम लम्बाईवाले सामान बनाते वक्त गिरहवाले भाग का व्यवहार नही करें, इसके लिए भी सावधानी बरतनी चाहिए। दो गिरहो के बीच की दूरी देखकर ही उसके अनुसार बुनाई करने के लिए बॉस के सामान बनाने चाहिए।

खासकर अर्द्ध व्यासवाले पिंजडो या टोकरियो के बनाते समय सतर्कता बरतनी चाहिए। निर्मित वस्तुओ के छोर पर मोड दिया जाता है अथवा मुँह के किनारे पर खोल बनाये जाते हैं। यह भाग बनाना बहुत कठिन है और उन स्थानो पर गिरहवाले भाग व्यवहार मे नही लाये जाते हैं। इसलिए बनानेवाली वस्तुओ के आधार-भाग बनाते समय न केवल सामान की लम्बाई, बल्कि गिरहवाले भागो के लिए भी सतर्क रहना चाहिए। अगर यह सतर्कता नही बरती जाय, तो उससे बनी वस्तुओं की आकृति बहुत भद्दी होगी।

चूँकि गिरहो के बीच की दूरी अनिश्चित रहती है और अभीष्ट लम्बाई मिलना भी कठिन है, इसलिए लम्बे सामान का व्यवहार करना चाहिए। इस काम मे खर्च के ख्याल से मितव्ययिता तो नहीं होती किन्तु वस्तु के आकार तथा निर्माण की दृष्टि से यह सबसे अच्छा तरीका होता है।

(३) **गिरह काटने की विधि**—गिरह काटने का अर्थ गिरह के नीचे का उठा हुआ भाग काटना है। यह कार्य बॉस को चीरनेवाले काँते से किया जाता है।

(४) **चीरनेवाले काँते का व्यवहार**—बायें हाथ से बॉस को पकडिए [illegible] दाहिने हाथ से काँते को पकडना चाहिए। चित्र [illegible] में बताई गई विधि से [illegible]

जब चीरे हुए बाँस को काटना हो, तब उसे बाहरी सतह की ओर से काटना चाहिए। छुरी के द्वारा सतह की ओर से थोड़ा काट देना चाहिए और तब उसे हाथ से तोड़ देना चाहिए।

(२) **काटने में सावधानी**—अभीष्ट लम्बाई के सामान काटते समय बाँस के उस स्थान को छोड़ देना चाहिए, जहाँ डालियाँ निकली रहती हैं। इस भाग को विभक्त करने में कठिनाई होती है।

सामान की बुनाई के काम में आनेवाली कमचियों के लिए बाँस के सबसे अच्छे भाग व्यवहार में लाये जाते हैं। चूँकि, नौसिखुए लोगों के लिए लम्बा सामान बनाना कठिन है, इसलिए उन्हें सबसे अच्छे बाँस को व्यवहार में नहीं लाना चाहिए। आम तौर पर साधारण बुनाई की छोटी टोकरियों के लिए ६ फीट, मझोले के लिए १२ फीट तथा बड़े आकारवाली के लिए १८ फीट लम्बाई होती है। अगर छोटी लम्बाईवाले पोर का बाँस हो, तो उससे लम्बे सामान नहीं बन सकते। इसलिए सामान के अनुसार उपयुक्त पोरवाले बाँस का व्यवहार करना चाहिए।

इसके बाद बुनाई करने के लिए कम लम्बाईवाले सामान बनाते वक्त गिरहवाले भाग का व्यवहार नहीं करें, इसके लिए भी सावधानी बरतनी चाहिए। दो गिरहों के बीच की दूरी देखकर ही उसके अनुसार बुनाई करने के लिए बाँस के सामान बनाने चाहिए।

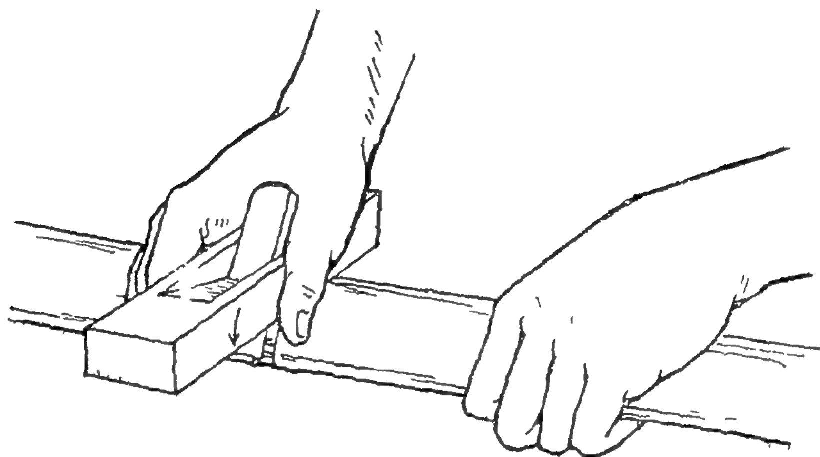
खासकर अर्द्ध व्यासवाले पिजड़ों या टोकरियों के बनाते समय सतर्कता बरतनी चाहिए। निर्मित वस्तुओं के छोर पर मोड़ दिया जाता है अथवा मुँह के किनारे पर खोल बनाये जाते हैं। यह भाग बनाना बहुत कठिन है और उन स्थानों पर गिरहवाले भाग व्यवहार में नहीं लाये जाते हैं। इसलिए बनानेवाली वस्तुओं के आधार-भाग बनाते समय न केवल सामान की लम्बाई, बल्कि गिरहवाले भागों के लिए भी सतर्क रहना चाहिए। अगर यह सतर्कता नहीं बरती जाय, तो उससे बनी वस्तुओं की आकृति बहुत भद्दी होगी।

चूँकि गिरहों के बीच की दूरी अनिश्चित रहती है और अभीष्ट लम्बाई मिलना भी कठिन है, इसलिए लम्बे सामान का व्यवहार करना चाहिए। इस काम से खर्च के ख्याल से मितव्ययिता तो नहीं होती किन्तु वस्तु के आकार तथा निर्माण की दृष्टि से यह सबसे अच्छा तरीका होता है।

(३) **गिरह काटने की विधि**—गिरह काटने का अर्थ गिरह के नीचे का उठा हुआ भाग काटना है। यह कार्य बाँस को चीरनेवाले कौने से किया जाता है।

(४) **चीरनेवाले कौने का व्यवहार**—बायें हाथ से बाँस को [illegible] हाथ से कौने को पकड़कर काटिए। चित्र [illegible] में बनाई गई दिशा से [illegible]

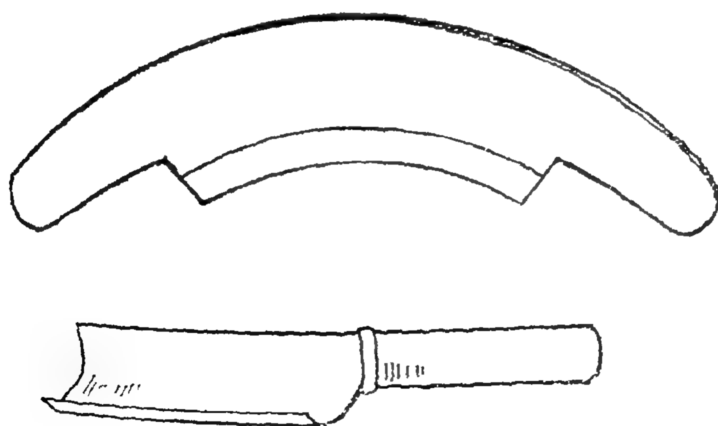
(ग) महीन बुनाई के सामान के लिए गिरह को पूर्ण रूप से हटा देना चाहिए। सस्ती वस्तुओं के लिए गिरह काटकर सामान तैयार किये जाते हैं। जब बाँस की कलात्मक वस्तुएँ बनानी होती हैं, तब गिरहों को रखना आवश्यक होता है। उससे बने सामान अधिक कलात्मक और सुन्दर प्रतीत होते हैं।



(चित्र १८)

(घ) कलात्मक वस्तुओं के सामानों को तैयार करते समय बाँस से त्वचा हटाकर निखार देना चाहिए। त्वचा लगे बाँस को न तो रँगना सम्भव है और न उचित ही, क्योंकि उससे चिकनापन रहता है।

(च) चित्र १७ में दिखाये गये औजारों से कमचियाँ बनाने के लिए बाँस से छिलके हटाये जाते हैं। इन औजारों का व्यवहार करते समय बाँस को किसी आधार पर रखकर चित्र १८ में प्रदर्शित ढंग से छीलना चाहिए। त्वचा छीलने के समय



(चित्र १७)

[illegible] पर से छीलनेवाले औजार को नीचे की ओर दबाकर ले जाना चाहिए [illegible] गाँठ [illegible] की तरह आसानी से समान रूप से हो जाय और बाँस पर [illegible]

बॉस से जलीय पदार्थ निकालने के वाद बाँस में एक प्रकार का पीला रग आ जाता है, जिसे दूर करने के लिए उसे निखारना पडता है। बाँस का किसी खास रग मे रगने के पहले बाँस के स्वाभाविक पीलापनवाले रग को हटा देना जरूरी होता है, अन्यथा रॅगने के वाद उस स्वाभाविक रग के कारण उसमें बाधा पडती है। उसकी भी झलक रंग मे आ जाती है। इसीलिए रॅगने के पहले बॉस को निखार लेना आवश्यक है।

प्रथम विधि—(क) Alkaline सॉल्युशन १ अश मे एक घण्टे तक बॉस को डुवो लेने के बाद उससे निकालकर निम्नलिखित विधि अपनानी चाहिए—

एसेटिक एसिड को पानी मे डालकर और बॉस के सामान को उसमे डुबोकर उसे आधा घण्टे तक उवालना चाहिए। उसके वाद उसे निकालकर पानी से धोकर सुखा लेना चाहिए।

सॉल्युशन की विधि—

एसेटिक एसिड (Acetic Acid) —५० ग्राम।

पानी—१००० ग्राम।

(ख) लकडी के वने वक्से मे तख्ते लगाकर उनपर बाँस के सामान को रख देना चाहिए। वे सामान पहले से ही पानी में पूर्णरूप से डुबाये हुए हो। एक दिन तक उन सामानो को वायु-अवरोधक (एयर-टाइट) वक्से मे रखना आवश्यक है। उसके वाद बक्से के पदे मे सल्फरस एनहाइड्राइड (Sulphurous Anhydride) को जलाना चाहिए। उसके वाद सामान को निकालकर और धोकर सुखा देना चाहिए।

(ग) चावल के धोवन में २ से ३ दिनो तक वाँस के सामान को डुवोकर रखने के वाद उन्हे धान की भुस्सी, पुआल के रस्से तथा पॉलिश करनेवाली वालू से चिकना करके धूप मे सुखा लेना चाहिए। इस तरह से सामान अपेक्षाकृत अधिक उजले हो जायेंगे। यह विधि प्राचीन काल से व्यवहार मे प्रचलित है।[1]

(घ) हाइड्रोजन परॉक्साइड ४ बूंद और पानी १०० ग्राम मिलाकर इसके घोल मे केमिकल वस्तु Na_2SIO_3 (सोडियम सिलिकेट) चार बूंद मिला दीजिए। इसके बाद इस सॉल्युशन मे बॉस को भिगोकर २०° सटीग्रेड तापमानवाले कमरे मे दो दिनो तक रख छोडिए। उसके वाद बॉस को निकालकर पानी से धोकर कपडे से पोंछिए और दो दिनो तक सूर्य की रोशनी मे सुखाइए।

(च) ब्लीचिंग पाउडर और मेगनेशियम सल्फाइड को ठडे पानी मे मिलाना चाहिए। इनका परिमाण इस तरह है—

ब्लीचिंग पाउडर—[illegible]०० ग्राम

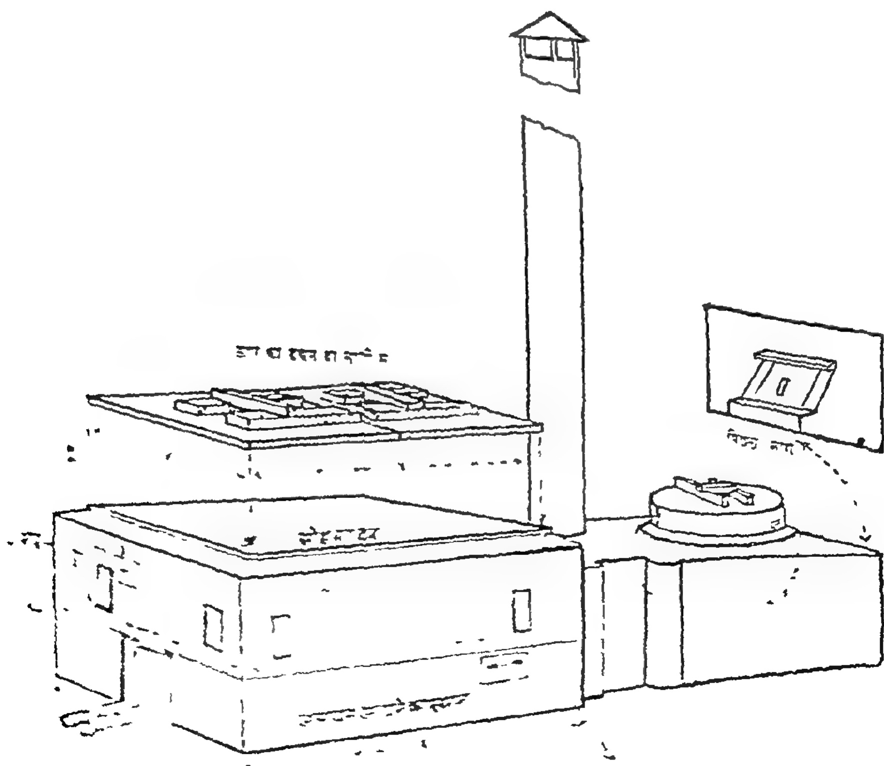
मैग्नेशियम सल्फाइड—[illegible] ग्राम

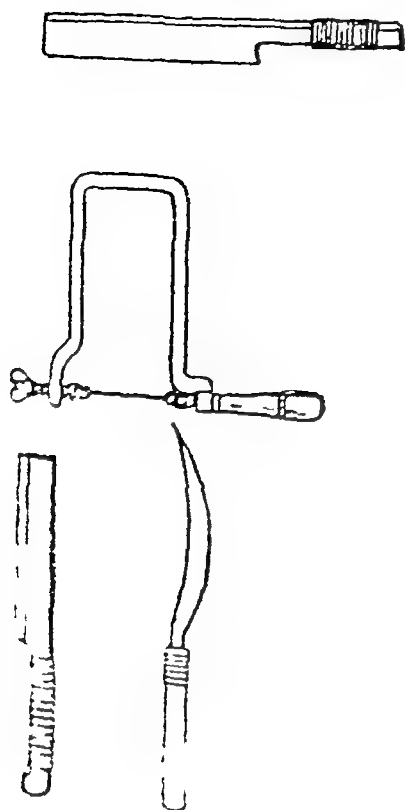
(१) सूखा तरीका (ड्राइ स्टाइल)—सामान तैयार करने के लिए कटे बाँस को लकड़ी की अथवा कोक की आग पर रखना चाहिए और बाँस से निकलनेवाले तेल को कपड़े से पोंछना चाहिए। इसी प्रयोग से टेढ़े बाँस सीधे भी हो जाते हैं। ऐसे सामानों को एक महीने के लिए धूप में फैला देना चाहिए, लेकिन उनमें रात का ओस नहीं लगे। उस हालत में बाँस का रंग पीलापन लिये सुन्दर हो जायगा। जनवरी, फरवरी तथा मार्च की धूप इस कार्य के लिए सबसे उपयुक्त होती है।

गरमी महीने की धूप में बाँसों को रखने से उनके फट जाने का भय रहता है। वर्षा में भींग जाने पर तो अच्छा होता है, लेकिन वर्षा-ऋतु में इस विधि से बचाना ही अच्छा है। विशेष कर चाभ, रोंपा, हरौती तथा पहाड़ी बाँसों के साथ यह प्रयोग किया जाता है।

बड़े पैमाने पर विधि का जो प्रयोग होता है उसे नीचे दिया जा रहा है—

लोहे के एक बक्से में तख्ते लगा लेते हैं। उसपर बाँस के सामान रख देते हैं। नीचे पेंदे में १२० से १३० डिग्री सें० के तापमान पर २० मिनट तक गरमी देते हैं। उसके बाद सामान को निकालकर उन्हें कपड़े से पोंछ देते हैं। इस विधि में पहले गाँठ का तेल निकाल लेना चाहिए। ऐसा नहीं करने पर कभी-कभी गाँठ जोर से फट जाती है।





'ड' वाला दाव सामान्य दाव के ढंग का, छोटा आकारवाला, होता है। छीलने के बाद फाड़ने के काम में अत्यन्त तीक्ष्ण धारवाले दाव की जरूरत नहीं होती। कुछ मोटी धारवाले दाव से भी काम लिया जा सकता है। कारण यह है कि फाड़ना और काटना—दोनों समान काम नहीं हैं। बाँस से ऊपरी रेशे को अलग करना चाहिए, काटना नहीं चाहिए। कारीगर के लिए ऐसा करना अधिक निरापद भी है। चित्र २२ में भी फाड़नेवाले औजार प्रदर्शित हैं।

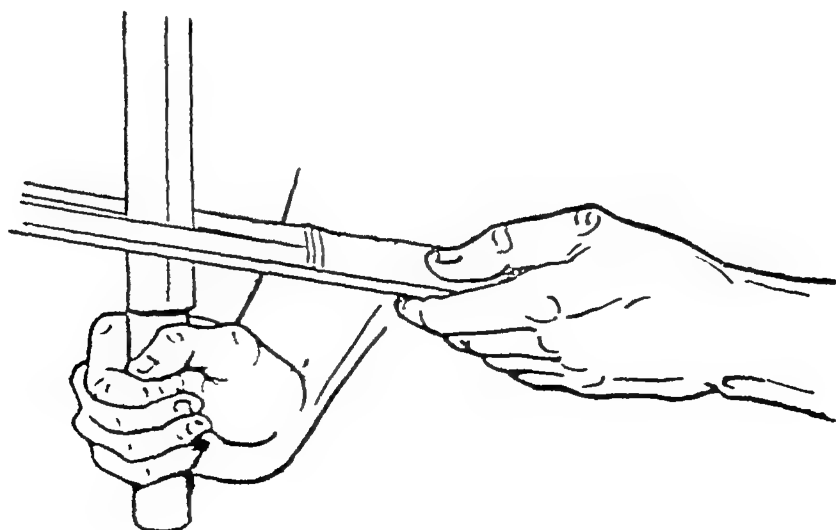
प्रकार बाँस का प्रथम विभाजन किया जाता है। चित्र २५ मे इस विधि को देखिए।

बडे बॉस को छोडकर अन्य बाँसो को फाड़ते समय दाव को बॉस के व्यास पर रखा जाता है और बॉस को दाव की धार की ओर घुसा-घुसाकर फाड़ा जाता है। फाडने का काम सीखनेवालो को चाहिए कि वे अपने घुटने पर दाव को रख ले और बाँस को खिसकाते चले। फाडने की प्रविधि सीखने और कटने-फटने से वचने के लिए यही अच्छा तरीका है।

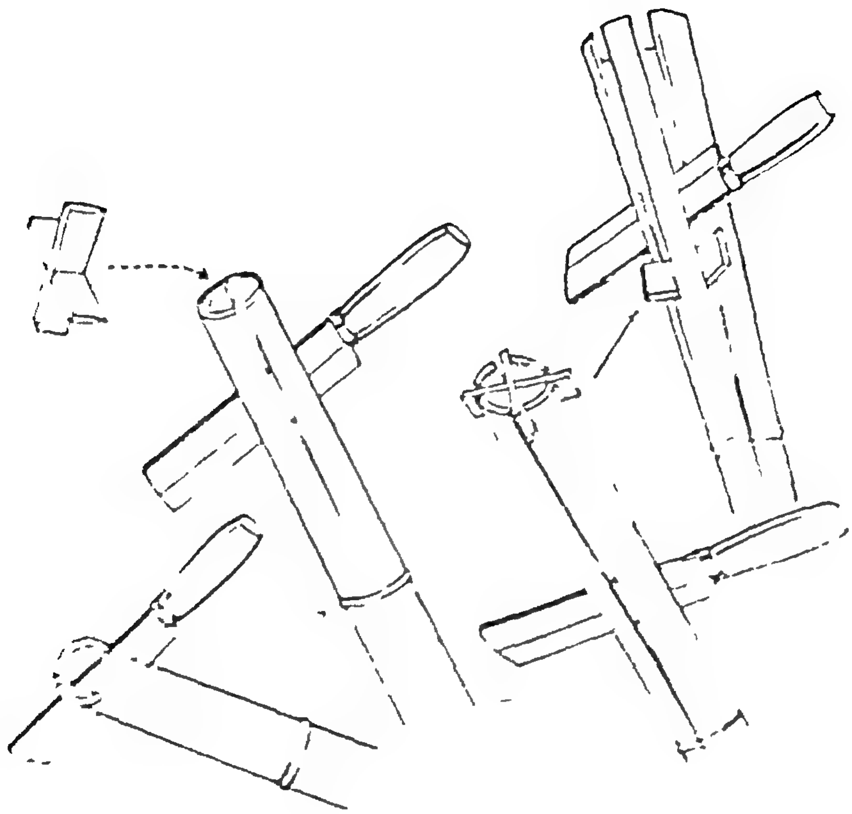
बाँस चार टुकडो में फाड लेने के बाद गिरह के नीचे के प्रमुख भाग को काटना चाहिए। फाडे हुए बॉस को और अधिक भागो में बाँटने के लिए फाडते समय उसका ऊपरी सतहवाला भाग ऊपर रखना चाहिए। उसका भीतरवाला भाग ऊपरवाले भाग से अधिक मुलायम होता है। इस कारण ऊपरी सतहवाले भाग को ऊपर रखकर फाडने से बाँस का बराबर भागो में विभाजन हो सकेगा अथवा उनकी चौडाई के भेद स्पष्टत' दिखाई पड सकेंगे।

बाँस को दो भागो में बाँटना आसान है। कारीगर का इस बात पर ध्यान रहता है कि बॅटे हुए भागो की चौडाई मे अन्तर नही हो, बल्कि वे सब एक ही चौडाई के हों। अगर चौडाई एक-सी नही हुई और आगे फाड़ना जारी है, तो पहले भाग की कोई चोडाई बराबर नही रह जायगी और उस जगह फाड़ना रुक जायगा। इस कारण जब बॅटे हुए भाग बराबर न हो, तब बाँस को अधिक चौंडे भाग की ओर झुका दीजिए और छुरी तथा मूठ को पकडे हुए इस तरह से घुमाइए कि जिससे मोटे भाग का हिस्सा धीरे-धीरे छोटे भाग के साथ मिलकर बराबर हो जाय।

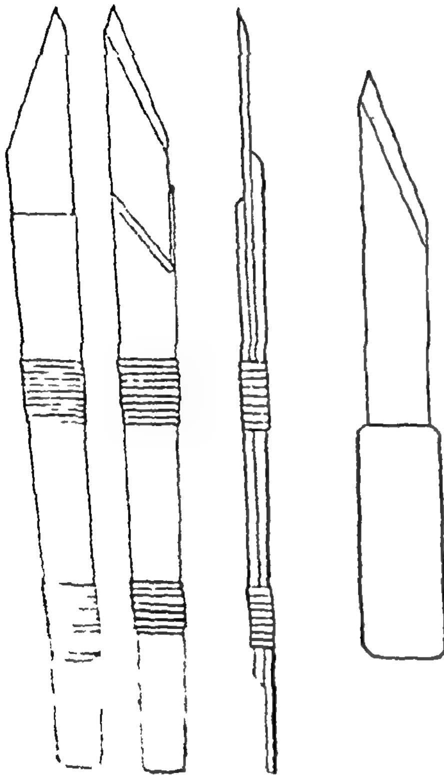
अगर बाँस को दो असमान भागो मे विभक्त किया जाय, तो जो भाग पतला होता है, वह आगे चलकर और अधिक पतला हो जाता है। यहाँ तक कि उस भाग की चौडाई सर्वथा खत्म हो जाती है और बाँस बराबर भागो मे नही बॅटता। इसलिए बाँस को फाडने के समय हमेशा यह खयाल रखना चाहिए कि बाँस को बराबर भाग मे फाडें।



चित्र २६



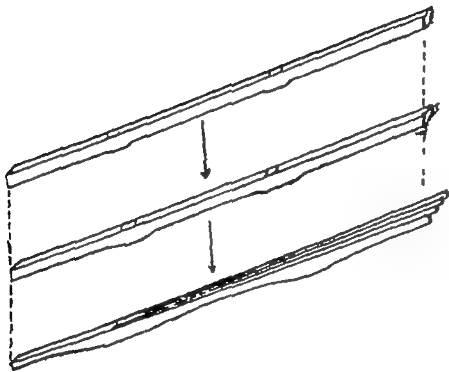
दोनों हाथ एक-दूसरे के इतने निकट रहते हैं कि उन्हें चलते हुए देखना किसी के लिए कठिन हो जाता है।

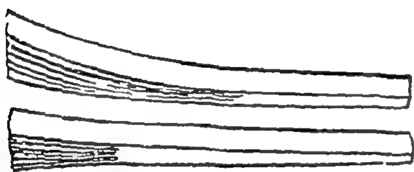


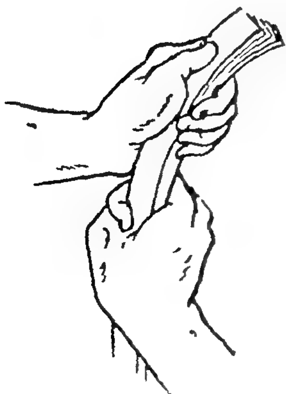
साधारण टोकरी तथा पिंजडे, छिले और फाडे गये सामान से बनाये जाते हैं, जिसे अर्द्धत्वचा (Semi skin) कहते हैं। अर्द्धत्वचावाले बाँस उसको कहते हैं, जिसकी ऊपरी त्वचा तथा नीचे का थोडा-सा भाग हटाया गया होता है। मितव्ययिता की दृष्टि से इच्छित वस्तु मे लगनेवाले सामान का दो-तिहाई भाग बाँस की भीतरी पेटी का रहता है और एक चोथाई भाग बाँस की ऊपरी त्वचा का रहता है। केवल भीतरी पेटी का बना समान कमजोर होने के साथ-साथ देखने में भी अच्छा नही होता है। इस कारण उच्च कोटि के सामानो तथा पिंजडो मे केवल बाँस की ऊपरी त्वचावाले भाग ही व्यवहृत होते हैं।

विभक्त भागों को अन्तिम रूप देना—'चाभ' बाँस के अन्तिम रूप मे फाडे गये सामान को ठीक आकार का तथा गोल बनाने के लिए चित्र ३४ मे दिखाये गये लकडी के चोखट वन को व्यवहार मे लाया जाता है।

एक वर्ष पुराने और फाड़कर रखे गये चाभ बाँस के सामान को, जो किनारे मढ़ने के काम में लाया जाता है, प्राय: दो दिनों तक पानी में छोड़ देना चाहिए। फिर, उसे तीन भागों में चीरना चाहिए। चित्र ४४ देखें। इस कार्य के लिए चाभ बहुत ही उत्तम बाँस होता है, लेकिन उसकी पेटी का भाग बहुत ही कमजोर होता है। यह बहुत ही मुलायम बाँस होता है, इसलिए चित्र ४३ में प्रदर्शित मुँहवाले तरीके से उसे फाड़ना चाहिए, चित्र ४२ में प्रदर्शित ढंग से नहीं। क्योंकि, वैसा करने से सामान टूट जाता है।


(चित्र ४६)


(चित्र ४७)



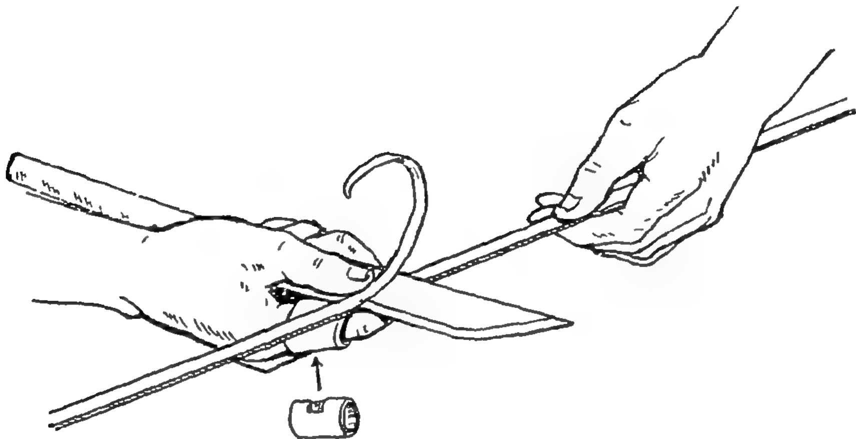
पाँचवीं विधि—यह बिना गाँठवाले बाँस को तेजी से चीरने का तरीका है। सर्वप्रथम एक छोर पर छुरी से प्रथम कटान कर दोनों हाथ से दोनों भागों को चित्र ४५ में प्रदर्शित तरीके से पकड़ लेते हैं। मुड़े हुए भाग के निकट से सामान तेजी से फटता जाता है। यदि सम भाग में कमचियाँ बनाना है, तो यह सुलभ और उत्तम तरीका है। इस काम के लिए जो छुरी होती है, उसकी धार की पीठ चौड़ी होती है।

छठी विधि—बाँस को उसके भीतरी किनारे से ऊपरी सतह तक फाड़ने और इस प्रकार सम्पूर्ण गोलाई को कई भाग में विभक्त करके फाड़ने को रेडियल या त्रिज्याकार विभक्तीकरण कहते हैं। चित्र ४६ देखिए। इस प्रकार से फाड़ी गई कमचियाँ जालीदार वस्तुओं के बनाने में व्यवहृत होती हैं। वस्तु बनाने का ऐसा सामान छीले गये बाँस को चीरकर बनाया जाता है। इसलिए, यह अन्य प्रकार से चीरे गये सामानों से भिन्न होता है। बाँस के पहले की मुटाई की ही चौड़ाई कमचियों की चौड़ाई हो जाती है।

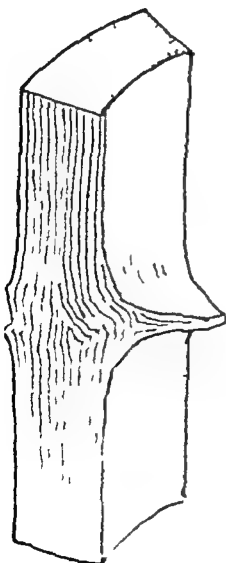
चित्र ४७ में प्रदर्शित [illegible]

[illegible]

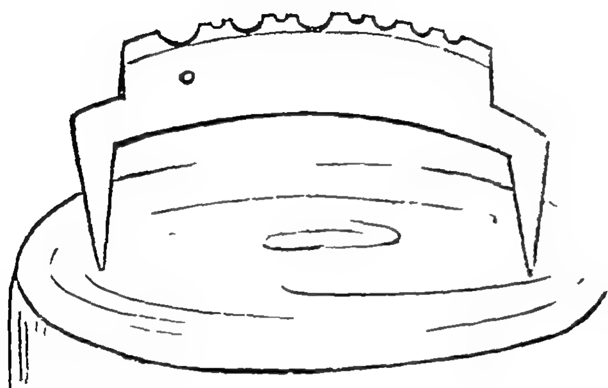
रूप मे बँटे होते हैं। ये रेशे सीधे नही, बल्कि टेढे होते हैं। बाँस के ऊपरी भाग के रेशे भीतर की ओर और निचले भाग के रेशे त्वचा की ओर गये होते हैं तथा बाँस की जड में अधिक रेशे होते हैं, किन्तु सिरे पर कम। इसलिए बाँस के सिरे की ओर से फाड़ना ज्यादा आसान होता है। लेकिन चाभ के समान मुलायम बाँस को सिरे की ओर से फाडकर अन्तिम रूप मे जड की ओर से फाडते हैं। यह बाँस की बनावट पर निर्भर करता है। अनुभवी कारीगर दोनो ओर से बाँस को फाडते हैं।



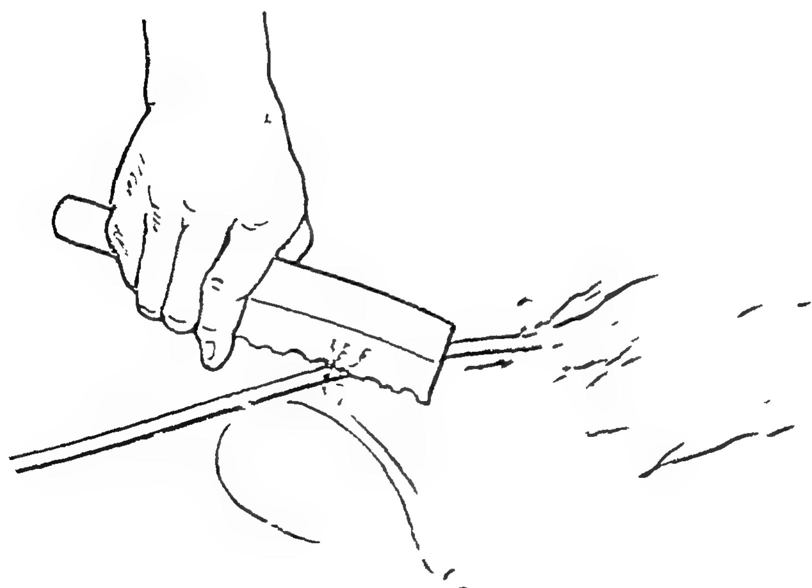
(चित्र ५३)



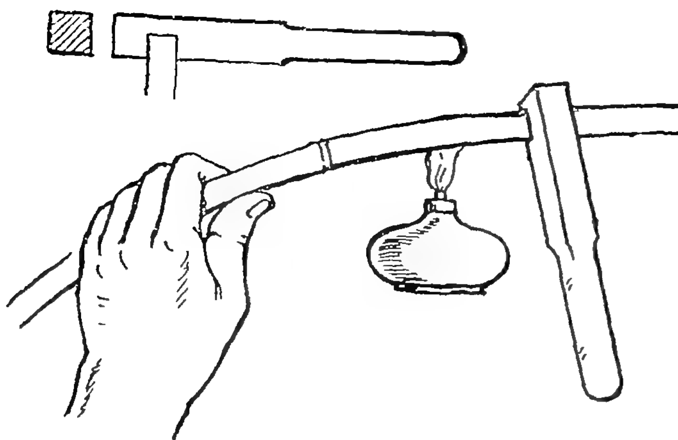
इसका दूसरा भी कारण है। चित्र ५४ मे प्रदर्शित ढग से गाँठवाले भागों मे रेशे की बनावट की जाँच कीजिए। नीचे भाग मे निकले रेशों के आगे बढने पर उनमे से कुछ शाखाएँ निकलती है, जिनमे से एक ऊपर जाने के बजाय नीचे की ओर चलती है और दूसरी ऊपर की ओर। अतः, जड की ओर से फाडने से सिरे पर बाँस टेढा हो जाता है। ऐसी अवस्था मे यह प्रतीत होता है कि सिरे की ओर से फाडना ज्यादा



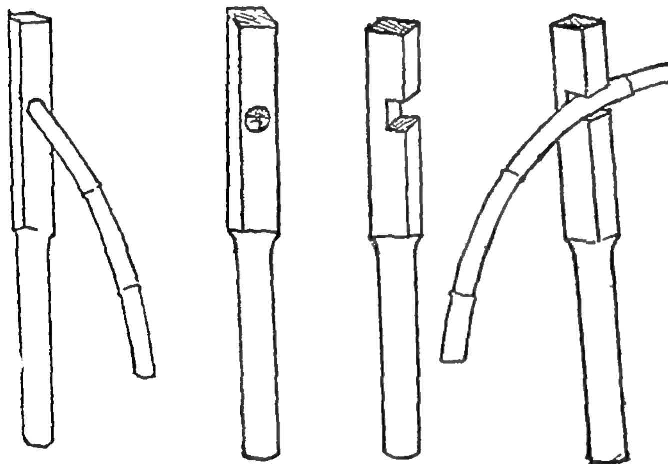
(চিত্র ५৭)



वाँस के भीतरी भाग को गरमी पहुँचाकर मोड़ा जाता है। उसे तवतक गरम करते रहना चाहिए, जवतक वाँस से निकलनेवाले तेल से वाँस की सतह भीग न जाय। उसके वाद वाँस को मोडना चाहिए और फिर तुरन्त उसे उसी हालत मे हाथ से पकडकर जल में डुवा देना चाहिए। यदि सामान पानी में नही रखा जाय, तो उसे भीगे कपडे से पोछकर ठडा कर लेना उत्तम होता है। अगर दोनों तरीके से ठडा नही किया जा सके, तो मुडे हुए रूप मे ही १० मिनट तक पकडकर रखना चाहिए। (चित्र ६४ देखिए)

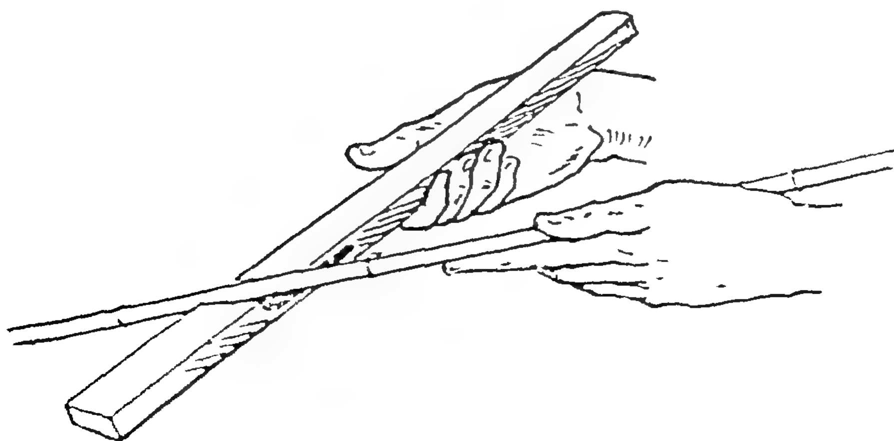


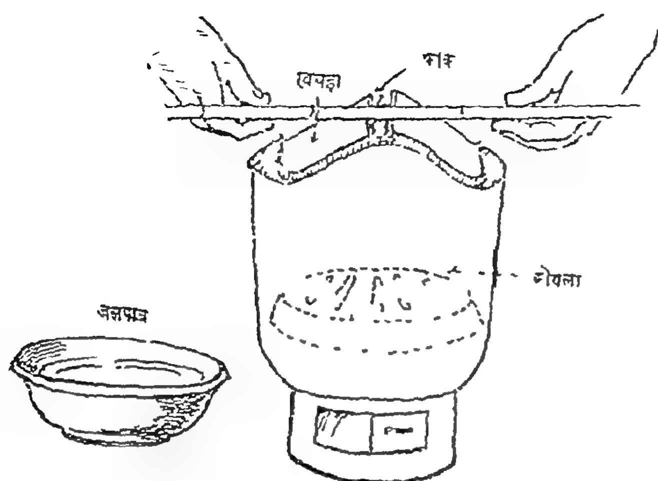
(चित्र ६५)



(चित्र ६¹)

वाँस के सामान को मोडते समय इस वात के लिए सतर्क रहना चाहिए कि उसे गाँठ पर से नही मोडे, वल्कि दो गाँठों के वीच भाग पर वह मोडा जाय।





(चित्र ७८)

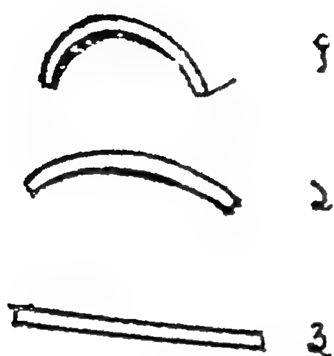
गरम किये जानेवाले भाग के, सीमित रखने के लिए (फायर ब्रिक) कोयला के चूल्हे के मुँहपर एक दूसरे के आमने-सामने ईंटे रख दी जाती हैं, जिससे चूल्हे का मुँह छोटा हो जाता है और बाँस की खास जगहपर ही आग की गरमी पहुँचती है तथा उसी भाग पर ही मोड बनाई जाती है। इसके लिए चित्र ७५ देखिए।

कलात्मक वस्तुओं के सामान को अल्कोहल लैंप या कडुआ तेल के लैंप (चित्र ६५) अथवा मोमबत्ती से गरम करते हैं। इससे फायदा यह होता है कि बाँस में धुएँ के कालापन का दाग नही पडता है।

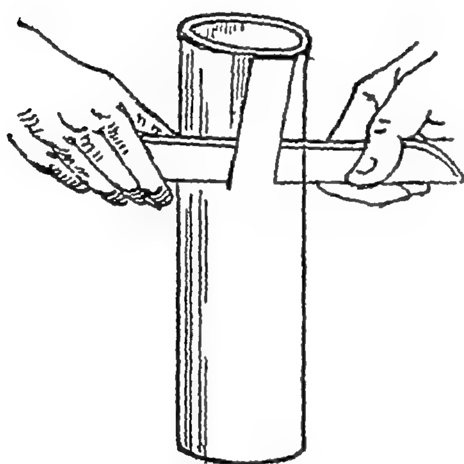
गरम करते समय इस बात के लिए सावधानी बरतनी पडती है कि अगर सामान को गोल करना हो, तो घुमाते रहना चाहिए। मोडने के योग्य तापमान २४० सेंटीग्रेड अच्छा होता है, पर लकडी का कोयला व्यवहार करने पर यह तापमान ४०० सेंटीग्रेड हो जाता है। ऐसी स्थिति में बाँस जल्दी-जल्दी घुमाना पडता है, जिससे बाँस में अधिक ताप न लगे।

कमचियों को मोडने की दूसरी विधि—कमचियों को गोलाकार फ्रेम के रूप में बनाने की एक दूसरी विधि भी है। इसके लिए भी एक प्रकार का चूल्हा होता है, जो चित्र ७६ में दिखाया गया है। इस विधि से उच्च कोटि की वस्तुओं के निर्माण के लिए गोलाकार फ्रेम तैयार किया जाता है। इस चूल्हे के बीचवाले भाग में लोहे के १० हिस्से होते हैं। चूल्हे के भीतर, भोजन पकानेवाले पत्थर-कोयले के चूल्हे की तरह ही लोहे की छड लगाई जाती है। इसमें उसी तरह आग भी सुलगाई जाती है। चूल्हे के ऊपरी मुँह पर बटखरे के आकार के, पाँच छोटे-बडे गोलाकार लोहे के बटखरे (फ्रेम) रख दिये जाते हैं। इसे चित्र ७७ में दिखाया गया है। ये फ्रेमवाले छोटे-बडे बटखरे चूल्हे के अन्दर की आग की आँच से गरम हो जाते हैं। इन तप्त बटखरों के सहारे कमचियों के गोलाकार फ्रेम अत्यन्त सुविधापूर्वक बनाये जा सकते हैं।

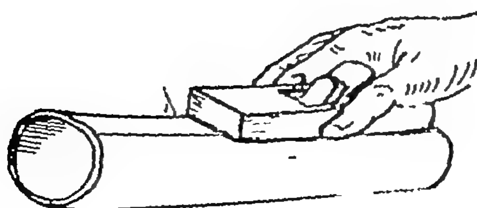
विधि—सर्वप्रथम कमचियों को आवश्यकतानुसार आकृति की बना लेने के बाद चूल्हे में आग रखकर उसे गरम करना पडता है। चूल्हे के पास ही एक



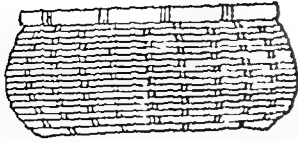
(चित्र ८२)



(चित्र ८३)



(चित्र ८४)



पिंजड़े और टोकरियों की बनावट—

१. पेंदा।

२. पेंदे से कानें तक का भाग।

३. पार्श्व-भाग।

४. मुँह।

इनमें निम्नलिखित प्रकार के सामान लगते हैं—

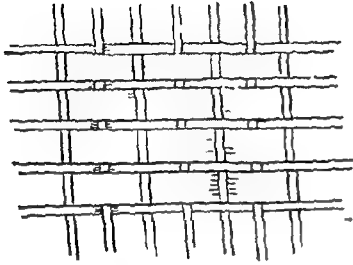
१. पेंदे के लिए सामान।

२. गोलाकार बनाने के लिए सामान।

३. किनारे के लिए सामान।

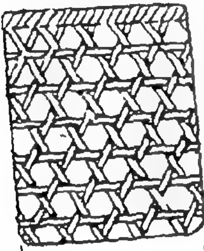
४. मुँह के लिए सामान।

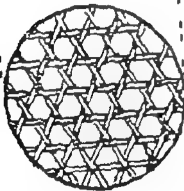
५. पेंदे से मुँह तक के लिए फ्रेम के सामान।



(चित्र ९०)

आगे के पन्नों में इन भागों की लम्बाई, चौड़ाई आदि पर विचार किया जायगा। सामान को तैयार करते समय यह खयाल रखना चाहिए कि उनसे बनाई जानेवाली वस्तुओं और उसके आकार में अनुकूलता रहे। लेकिन बाँस जिस तरह का हो, उसके अनुसार आकार में परिवर्तन भी होना चाहिए। बुनने की विधि को निम्नांकित श्रेणियों में बाँटा जा सकता है—





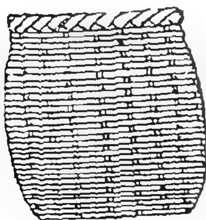
(चित्र ९१)

(१) पेंदा बनाने की विधि और उसकी बुनावट।

(२) गोलाकार बुनने की विधि और उसकी बुनावट।

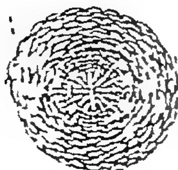
(३) पार्श्व भाग बुनने की विधि और उसकी बुनावट।

(४) मुँह बुनने की विधि और उसके छोर की बुनावट।

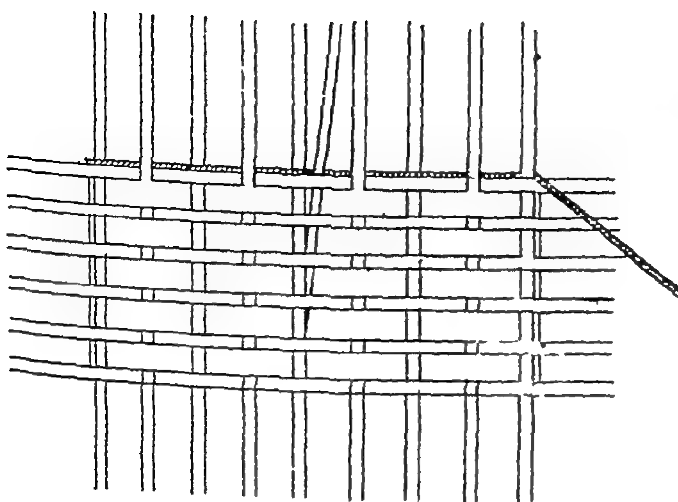


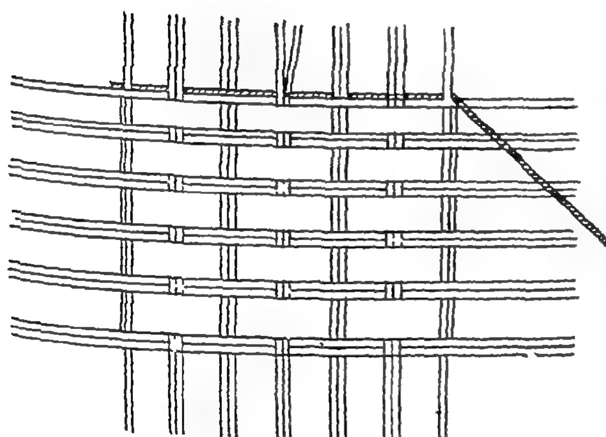
टोकरी तथा पिंजड़े की बुनावट को भी कई श्रेणियों में बाँट सकते हैं—

(१) पेंदे तथा अगल-बगल की बुनावट में कोई भेद नहीं है।



(चित्र ९२)





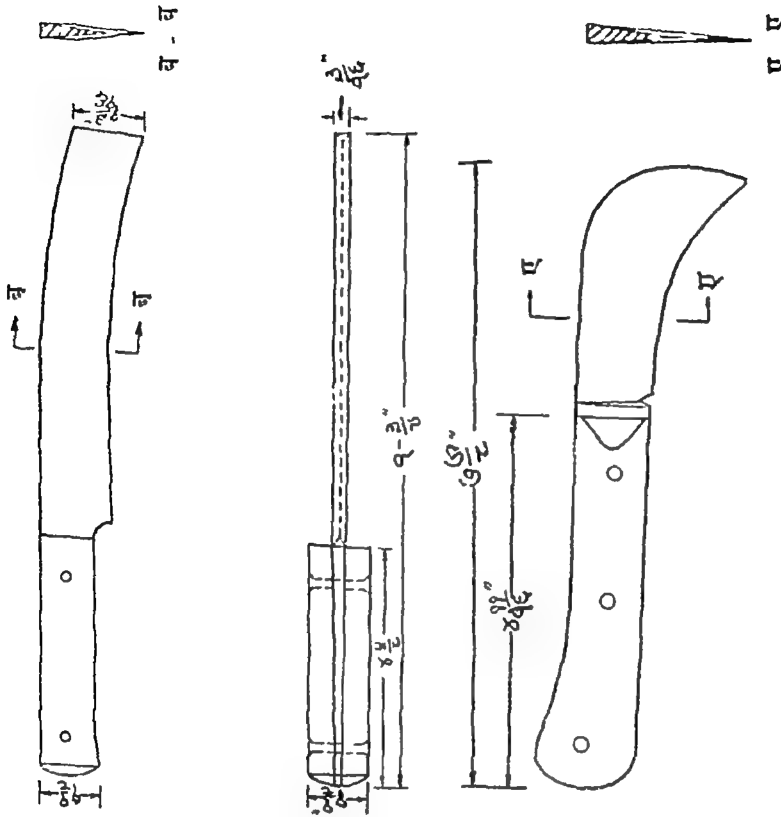
(चित्र ९५)

दूसरी विधि में जब फ्रेम बुनने के योग्य कमचियाँ एक दूसरे के समानान्तर हो, तो फ्रेम बुननेवाली एक कमची को दो भागो में बाँट देना पड़ता है। इससे फ्रेम बुनने की कमचियाँ विषम संख्या में हो जाती हैं। इसे चित्र ९५ के निचले भाग में देखा जा सकता है।

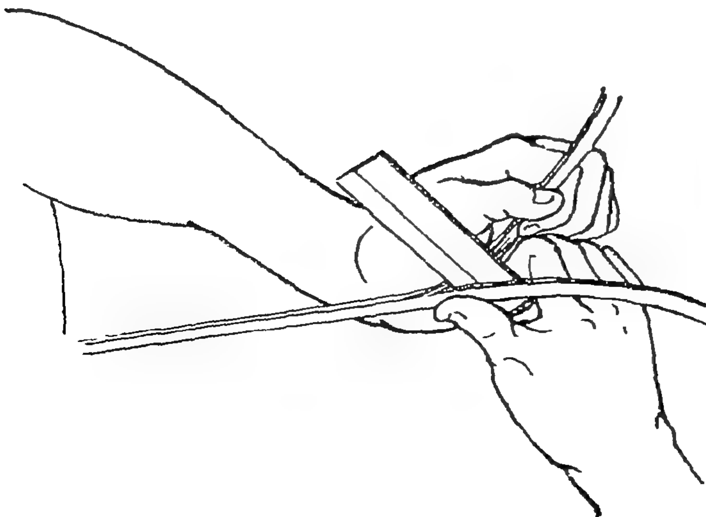
तीसरी विधि में अगर फ्रेम बुनने की सामग्री मजबूत हो, तो उसे दो भागो में बाँट देना अच्छा है। इससे फ्रेम बुनने की सामग्री विषम संख्या में हो जाती है।

चतुष्कोण पेंदा-बुनाई का एक उदाहरण दूसरे स्थान में बताया गया है। फ्रेम बनने की कमचियो के छोर को दोनो ओर बढ़ा देते हैं और तब बुनाई की कमचियाँ समानान्तर कर दी जाती हैं। उनके बाद बढ़े हुए फ्रेम के सामान को बुना जाता है।

वही छुरी व्यवहार में लाई जाती है, जो बाँस के फाड़ने में व्यवहृत होती है। अनुभवी कारीगर उस छुरी से छिले बाँस की सतह और अन्य सामान सुन्दर बनाते हैं।



(चित्र ४०)



(चित्र ४१)

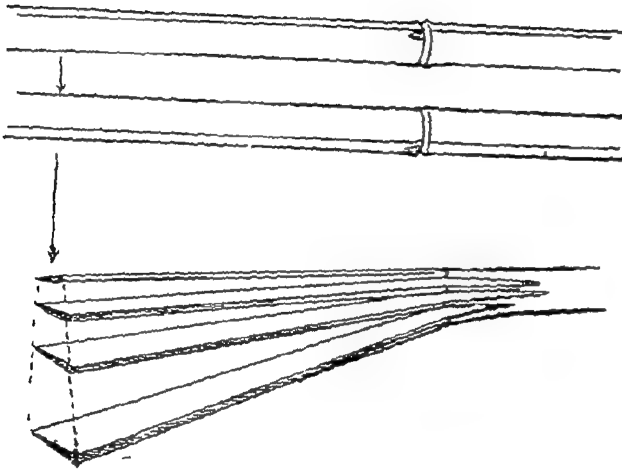
गिरह के पास फाड़ने में निम्नलिखित तरीका काम में लाना चाहिये। गाँठ को बाँये हाथ के अँगूठे और तर्जनी अँगुली से पकड़कर, इन अँगुलियों के बीच में रहनेवाले भाग में ही छुरी लगानी चाहिए। देखिए चित्र ३८। छुरी अँगुलियों और बाँस के बीच में छिप जाती है। इसके अलावा बाँये हाथ का अँगूठा, जो बाँस को पकड़े हुए है, दाहिने हाथ के अँगूठे को रोक देता है, जिससे छुरी अँगुलियों को घायल नहीं कर सकती।

दूसरी विधि—यह विधि गाँठोंवाले बाँस के लम्बे सामानों के लिए है। दाहिने पैर की अँगुलियों से

पकड़ लेता है। दूसरे भाग को छुरीवाले अपने दाहिने हाथ के अँगूठे से पकड़ लेता है और तलहथीवाले भाग पर दबाव डालकर छुरी को घुसेड़ता चलता है। इस ढंग से वस्तु के किनारे पर के मढ़नेवाले सामान भली भाँति तैयार हो जाते हैं।

इस विधि से गाँठ पर फाड़ने में बार-बार छुरी को खिसकाना और धक्का देना पड़ता है। इसे चित्र ४१ में देखिए।

चौथी विधि—किनारे पर के मढ़नेवाले बहुत पतले सामान तैयार करने की विधि ½ इंच को ४ से ६ भागों में बाँटनेवाली है। एक छिले भाग को दाँत से पकड़कर दूसरे भाग को छुरीवाले दाहिने हाथ से पकड़ते हैं और दाँत तथा हाथ से खींचकर बराबर मुटाई की कमची बनाते हैं। गाँठ की जगह आने पर केवल छुरी से फाड़कर फिर दाँत और हाथ के व्यवहार से ही फाड़ते जाते हैं। विधि चित्र ४२ में दिखाई गई है।



(चित्र ४२)

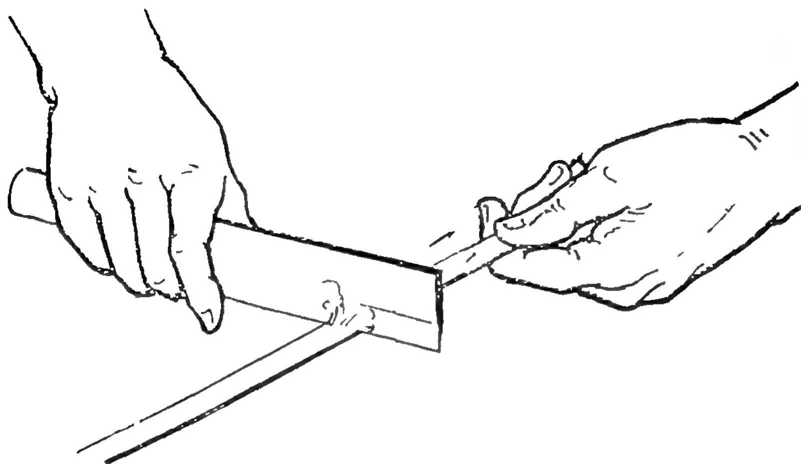
बाँया हाथ कमची बननेवाले भाग को पकड़े रहता है और चीरे हुए भागों को एक समान बनने में संतुलन रखते हुए पीछे की ओर उसे खिसकाया जाता है।



(चित्र ४३)

अगर दाँत से पकड़े हुए भाग की मुटाई कम हो रही हो, तो उसे ऊपर करके मोड़ना उत्तम होगा और अगर दूसरा भाग कम मोटा हो रहा हो, तो उसे नीचे कर देना चाहिए। यह विधि चित्र ४३ में प्रदर्शित है। हमलोग पहले ही जान चुके हैं कि मोटा हुआ भाग अवश्य पतला हो जाता है।

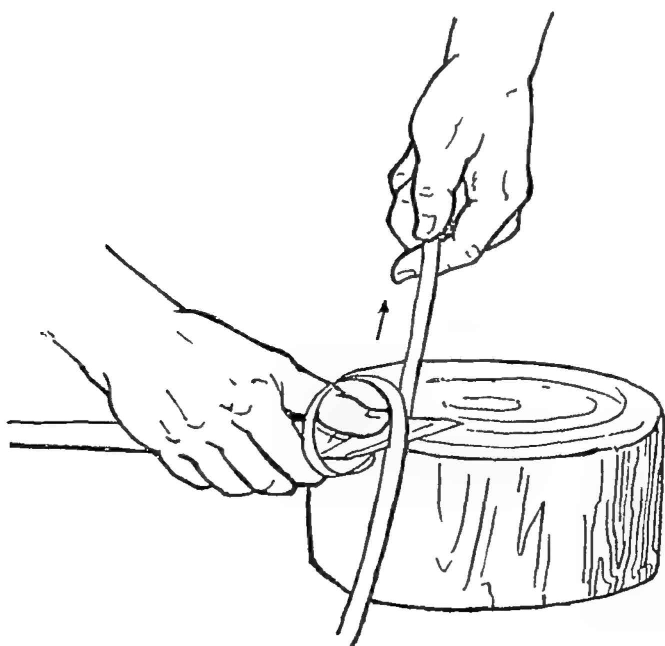
विवि से चीरे हुए सामान से वनाय जाते हैं। इसी का एक चित्र ४८ सख्यावाला भी है।



(चित्र ४९)

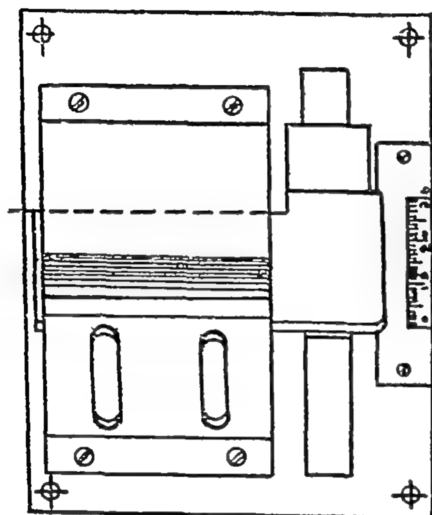
छिले हुए बाँस को तैयार करना— छिले हुए बाँस के बने सामान (कमचियाँ आदि) एक ही मुटाई के नही होते हैं। जिनकी ऊपरी सतह छील दी जाती है (चित्र ४९), उनके द्वारा बने सामान कमजोर और असुन्दर होते हैं। अच्छी वस्तुओ के बनानेवाले सामानो की मुटाई और सफाई एक ही समान होनी चाहिए, जिसकी विधि इस प्रकार है—

सामान्य विधि— यह है कि मोटे कपडे को जाँघ पर रखकर उस पर सामान को रखना चाहिए। उसके वाद छुरी की धार से सामान पर दवाव देकर खीचना चाहिए। तव उसकी सतह चौटी और सुन्दर हो जाती है। दूसरा तरीका है—लकडी के कुन्दे पर रखकर खींचा जाता है, जिसे

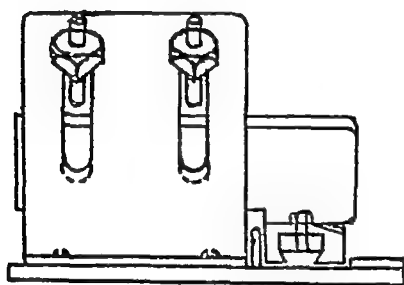


(चित्र ५०)

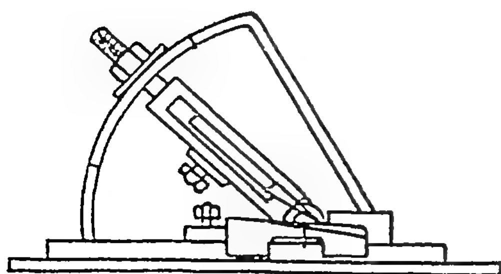
करने के लिए और एक चौडाई के लिए। दोनो के चित्र यहाँ दिये गये हैं। चित्र ५१ और ५२ देखना चाहिए। यदि ऐसे सामान को, चिकना करनेवाले तरीके के अनुसार ही व्यवहार करते हैं तो इससे यह थोडा वक्र हो जायगा।



(चित्र ५२ (क))



(चित्र ५२ (ख))



(चित्र ५२ (ग))

हाथ से खींचकर कमची बनाने का तरीका—यह विधि (चित्र ५२) केवल बनने वाले सामान तैयार करने के समय व्यवहार में लाई जाती है। यह विधि और इसके औजार बहुत उपयोगी हैं तथा यह विधि कमचियो की मुटाई बराबर रखने में सर्वोत्तम है। इसकी छुरी चित्र ५२ मे नीचे दिखाई गई है।

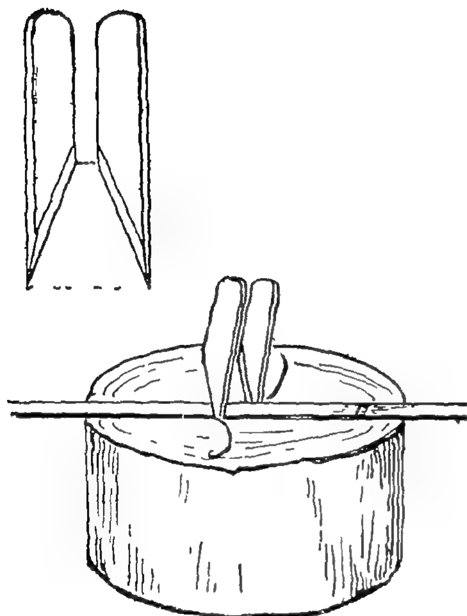
इस विधि के लिए जो सर्वोत्तम और अति आधुनिक उपयोगी यन्त्र तैयार किये गये हैं, वे चित्र ५२ (क), ५२ (ख) और ५२ (ग) मे दिखाये गये हैं। इन यन्त्रो के उपयोग से कमचियाँ निश्चित रूप से शुद्ध और स्वच्छ होगी ही।

फाडने और कमचियाँ बनाने के सिद्धान्त—बाँस का कोई भाग अधिक मोटा और कोई कम मोटा होने पर उनके टुकडो की चौडाई एक नही होगी, अर्थात् अधिक मोटे टुकडो के भाग अधिक मोटे और चौडे होगे तथा कम मोटे टुकडो के हिस्से पतले और सकीर्ण होगे। ऐसी स्थिति मे मोटे भाग को ही मोडना चाहिए। इससे उसकी मुटाई घट जायगी और उनके चीरे हुए भाग की चौडाई और मुटाई एक-सी होगी। बहुत छोटे टुकडे को चीरते समय केवल छुरी को ही अधिक मोटे और चौडे भाग की ओर घुमा देना चाहिए। देखिए चित्र ५३। ऐसी स्थिति मे मोडने की जरूरत नही है।

बाँस मे त्वचा, आर्गेनिक स्ट्रक्चर तथा रेशे होते हैं और बाँस को फाडने तथा कमचियाँ बनाने मे रेशे का सबसे महत्त्वपूर्ण स्थान है। बाँस के रेशे चित्र ५४ मे प्रदर्शित

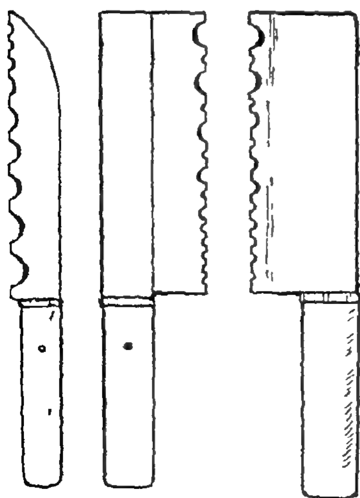
नही होती है, किन्तु कलात्मक अथवा उच्च कोटि की वस्तु बनाने के लिए खास आकार के बने-बनाये गोल सामान की जरूरत अवश्य होती हे।

इस काम को सीखनेवालो के लिए 'साइजिंग विड्थ' नामक हथियार का व्यवहार करना अधिक सुविधाजनक होता है। उक्त हथियार की बनावट चित्र ५५ मे दिखाई गई है। इस चित्र मे काटनेवाली धार दो खूटियों के बीच जकड दी जाती हैं और चौडाई निश्चित कर ली जाती है। अब अभीष्ट चोडाई से कुछ अधिक चौडे सामान को खुले स्थान मे रख देते हैं ओर बॉये हाथ मे रखे बाँस से उसको धक्का देते हैं और खीचते हैं।



(चित्र ५५)

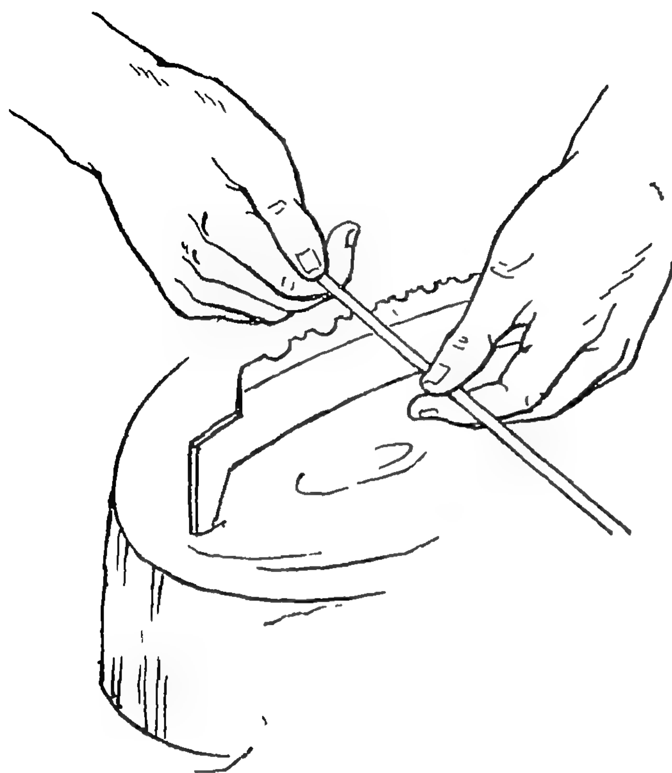
इस कार्य के लिए अनेक प्रकार के औजार होते हैं, लेकिन चित्र ५५ मे प्रदर्शित औजार ही सरल हैं, जो अधिकतर व्यवहार मे लाया जाता है। लकडी के बने घन पर दो छोटी छुरियॉ अभीष्ट दूरी पर गाड दी जाती हैं और बीचवाले खुले स्थान होकर सामान को खींचते हुए यह काम आसानी से कर लिया जाता है। इस औजार के काँटनेवाले कोण को बाँस के कडापन के अनुसार सतुलित कर लेना होता है और बहुत तेज छुरियाँ व्यवहृत कर सामान की सतह सुन्दर बनाई जा सकती है। छुरियो की आकृति चित्र ५६ मे देखिए। लेकिन छुरियो की धार किस तरह रखी जाय, यह अनुभवो से ही सीखा जा सकता है।



(चित्र ५६)

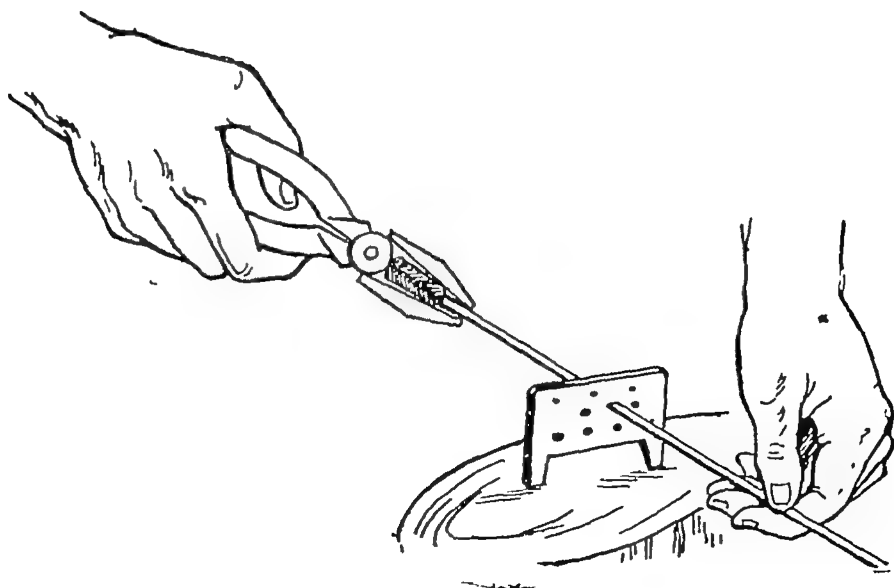
सामान की सतह बराबर करना तथा उसे गोल बनाना

वस्तुओ को बनानेवाले सामानो के खास आकार के बना लेने के बाद



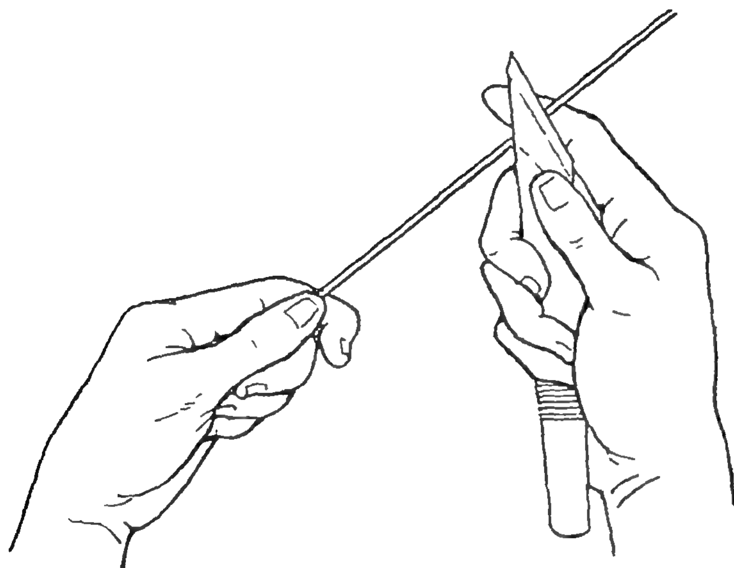
(चित्र ५९)

यह औजार इस्पात के चदरे का बना होता है, जिसमें उचित व्यास के छिद्र बने होते हैं। इस औजार से काम लेने के लिए छेद से थोड़ा अधिक व्यास का सामान छेद होकर खीचते हैं। उसके बाद उससे अधिक छोटे छेद होकर सामान को खीचते हैं, जिससे पहले से भी अधिक गोल और स्वच्छ सुन्दर सामान बन जाता है। सैंड पेपर से चिकना कर देने पर वह और अधिक अच्छा हो जाता है। बाँस से बननेवाले अच्छे पर्दे के सामान इसी तरीके से बनाये जाते हैं। इसी औजार से ⅛ इंच से कम चौडेवाले सामान को गोल किया जाता है।



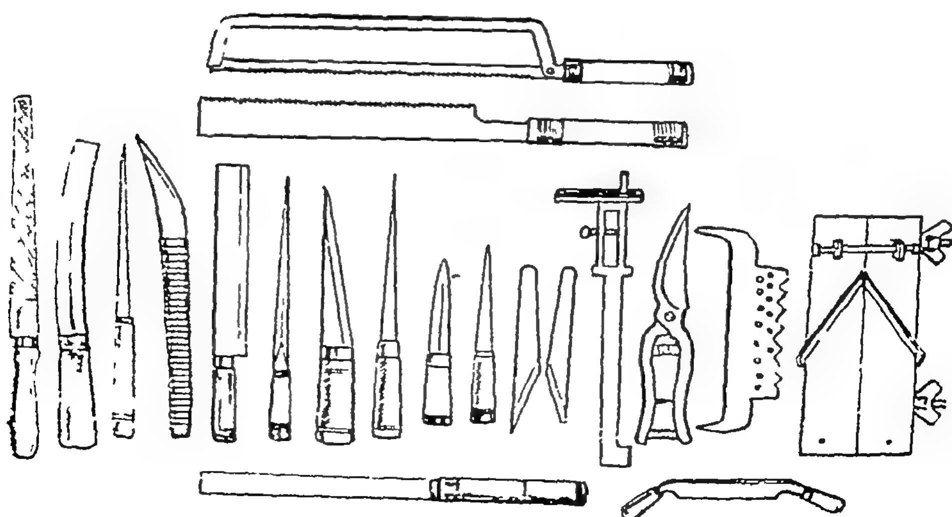
(चित्र ६०)

दाहिने हाथ की तर्जनी अँगुली को छुरी पर फैलाकर और अँगुलियों से तथा छुरी से सामान को पकड़कर कारीगर हाथ को बढ़ाता जाता है और सतहदार सामान तैयार होता जाता है। इस पद्धति से बिना टूटे ही सामान की सतह बराबर हो जाती है। बाँस से बननेवाले शिल्पों के लिए जितने प्रकार के औजार काम में आते हैं, उनके नमूने एक साथ चित्र ६४ में दिखाये गये हैं।



(चित्र ६३)

सामान को मोड़ना या सीधा करना–बाँस बहुत लचीला होता है, इसलिए इसे मोडना बहुत आसान है, लेकिन टेढ़ापन को बिलकुल उसी तरह निश्चित रखने के लिए निम्नलिखित विधि काम में लाई जाती है।

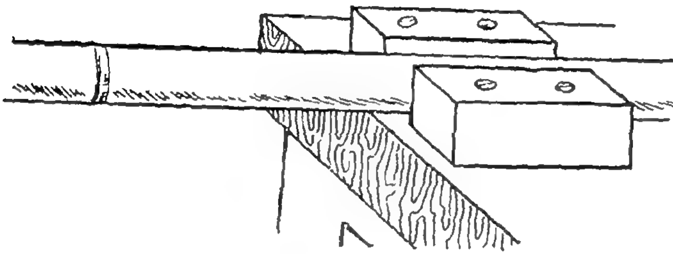


(चित्र ६४)

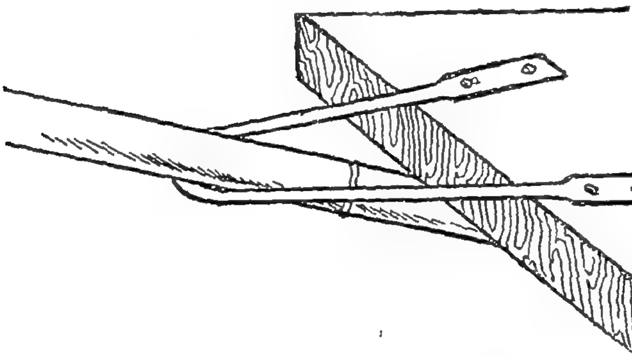
नये बाँस को, जो बहुत पहले नहीं काटा गया है, मोडना बहुत सरल है, लेकिन पीछे चलकर वह पूर्ववत् सीधा हो जाता है। इसलिए अच्छी तरह सूखे हुए बाँस को मोडना चाहिए, जो पीछे चलकर भी नहीं बदलता।

टेढे बाँस को भी सीधा करने के लिए मोडा जाता है, जिसका तरीका पहले बतलाया जा चुका है।

गोलाकार पतले बाँस को मोडना—विलो[1] के समान मुलायम और पतले बाँस को लकडी के बने मोडनेवाले औजार के उस हिस्से में, घुसा देना चाहिए, जहाँ बाँस को घुसाने का स्थान बना है। फिर, उस भाग को तबतक गरम करना चाहिए, जबतक उसमें से तेल न निकल आये। जब तेल पसीजने लगे, तब उसे मोडकर ठंडे जल में रख देना चाहिए। यह औजार और मोडने का तरीका—दोनों चित्र ६५ और ६६ में दिखाये गये हैं।

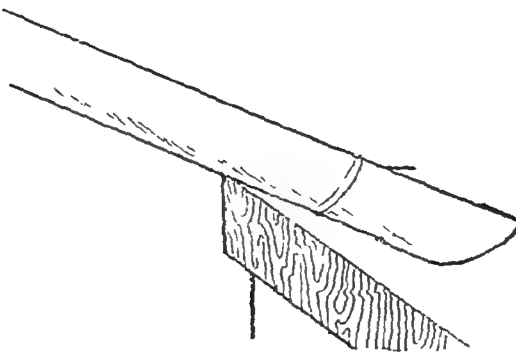


(चित्र ६८)



(चित्र ६९)

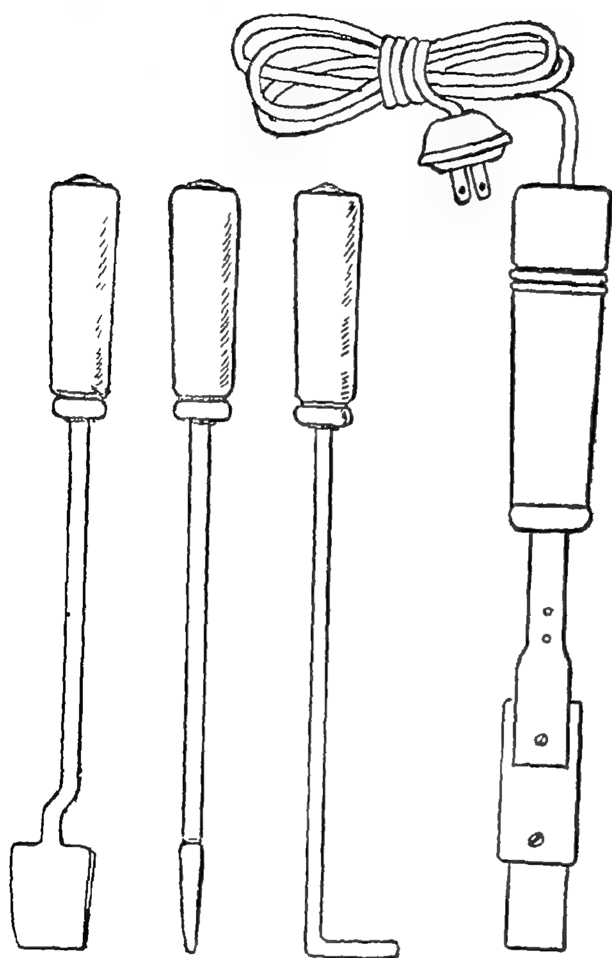
बडे सामान को मोड़ना—मोडनेवाले भाग के ऊपर तेल लेपकर, तेल निकल आने तक, उसे गरम करते रहिए। फिर, उसे मोडनेवाले औजार, चित्र ६७, में लगाकर इच्छानुसार मोड दीजिए। लेप करनेवाला तेल प्राय रेंडी का होता है।



(चित्र ७०)

[1] बेत की जाति की वनस्पति है। यह प्राय समस्त भारत में पाया जाता है, किन्तु कश्मीर में बडे पैमाने पर मिलता है। —ले०

बड़े गोल बाँस को तो केवल ताकत लगाकर भी सीधा किया जा सकता है। इसका एक यह भी तरीका होता है कि गोबर का लेप देकर फूस की आग पर गरम करके सीधा करते हैं। भारत में सर्वत्र यह पद्धति प्रचलित है। इसके अतिरिक्त आसानी से सीधा करने की विधि निम्नलिखित है—



(चित्र ७१)

(क) एक विधि चित्र ६७ मे प्रदर्शित है। मोडने के काम के लिए कडी लकडी का बना औजार काम मे लाया जाता है। बाँस को छिद्रवाले भाग पर पकडकर इस औजार के जरिये मोडना या सीधा करना चाहिए।

(ख) चित्र ८६ में दिखाये गये ढग से काम करनेवाली बेंच पर लकडी की दो मोटी कीलो को ठोक दिया जाता है। इसमें बाँस को डालकर और दबाकर सीधा किया जा सकता है अथवा उसे मोडा जा सकता है। दो सटे हरे पेडो या दो सटी हरी डालो में भी फँसाकर तथा रगड-रगडकर बाँस को सीधा किया जाता है या मोडा जाता है।

(ग) कही-कही इस काम के लिए ऐसा औजार होता है, जो ३/४ इंच लोहे का बना होता है और व्यवहार मे सुविधाजनक होता है। यह औजार चित्र ६९ मे प्रदर्शित है।

(घ) चित्र ६८ मे दिखाई गई काम करने की विधि, जिसमे उचित आकार के सामान बन सकते हैं, ऊपर की विधि से अधिक अच्छी होती है, क्योंकि उससे बाँस की त्वचा बरबाद नहीं होती। इस विधि मे सीधा किया गया बाँस चित्र ७० मे प्रदर्शित है।

फाडे हुए बाँस को मोडना—टोकरी या पिंजडे के फ्रेम बनाने के लिए मोटे फाडे हुए बाँस को मोडना अधिक सरल है। जिस भाग को मोडना है, उसके भीतरी भाग को गोल बटाली या रुखानी से काट लेना चाहिए। ऐसी बटाली चित्र ७१ मे

कभी इस काम के लिए आयताकार लोहे अथवा ताँबे के तार से भी काम लिया जाता है। व्यवहार करने के लिए, गरम किये गये दो लोहे रखना उत्तम होता है, जो एक के बाद दूसरा गरम किया जाता है।

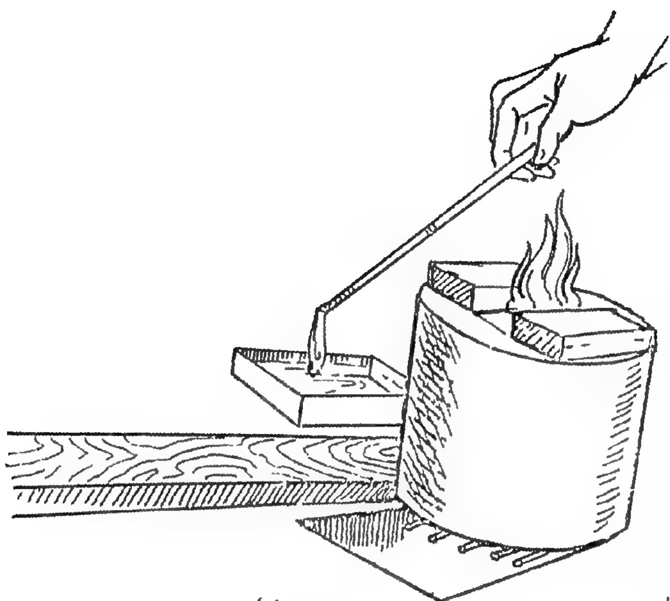
लोहे के द्वारा मोडने मे, जिस भाग को मोडना है, उस भाग को गरम लोहे पर रख देते हैं। लोहे पर बाँस रखते समय उसकी गरमी यदि ठीक रही, तो बाँस का रग भूरा हो जाता है। ऐसे गरम लोहे पर कुछ क्षणो तक सामान को रखकर, जब वह नरम हो जाय और उसका रग भूरा हो जाय, तब सामान को मोड देना चाहिए। विधि चित्र ७३ के निचले भाग मे प्रदर्शित है। लोहा बहुत गरम होने पर सामान जल जायगा और बहुत ठडा होने से कोई लाभ नही होगा। इसलिए, लोहे की गरमी उपयुक्त होनी चाहिए।

इस काम के लिए लोहा लकडी के कोयले से गरम किया जाता है, फिर भी लोहे की गरमी एक-सी नही रहती है। लेकिन, बिजली के द्वारा गरम किये यन्त्र में यह दोष नही होता है, क्योकि इसमे इच्छानुसार गरमी पहुँचाई जा सकती है। यन्त्र को गरम करने के लिए विद्युत्-शक्ति ४० डब्ल्यू से ६० डब्ल्यू तक होनी चाहिए। यह यन्त्र चित्र ७२ के दाहिने भाग में दिखाया गया है। किन्तु, इस बात की सावधानी रखनी चाहिए कि मोड टूट न जाय, क्योकि गरम करके मोडने से लचीलापन खत्म हो जाता है।

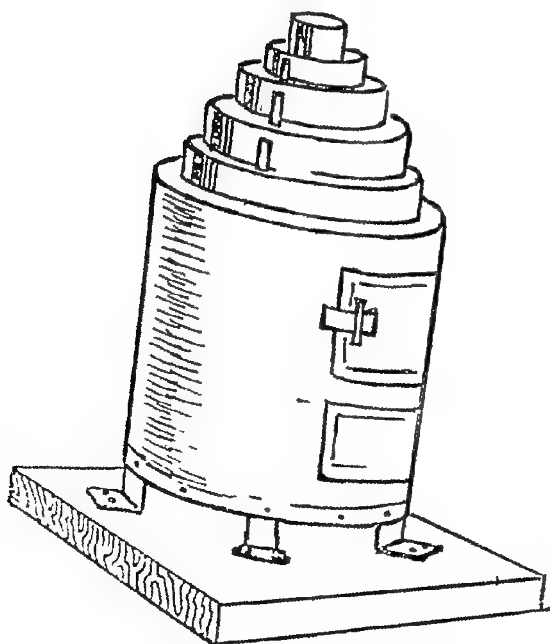
लोहे की गरम छड का व्यवहार—एक ही आकार के बहुत-से सामान को मोडते समय गरम लोहे की छडो को व्यवहार करना उत्तम होता है। यह लोहे की छड $\frac{1}{2}$ इच से $\frac{3}{4}$ इच तक की बनी होती है। चित्र ७४ मे प्रदर्शित ढग से काम करनेवाली बेंच मे वह जकड दी जाती है और उस गरम छड को घिसका-घिसकाकर बाँस को मोडा जाता है। छड की गरमी भी आवश्यकतानुसार ही रखनी पडती है। सामान मोडनेवाला बाँस का रेक बनाने के लिए $\frac{3}{4}$ इच लोहे की छड व्यवहार में लाई जाती है। उसका व्यास कार्य के अनुसार कम या अधिक बनाया जाता है। बाँस में जितना ही अधिक जलीय पदार्थ होता है, उतना ही अधिक समय उसे गरम करने मे लगता है। मोडने के पहले सामान को सुखा देने से लाभ होता है।

तेज कोण बनाने की विधि—बाँस को मोडते समय भीतरी भाग का किनारा कुछ-कुछ अंगरेजी अक्षर W के आकार का हो जाता है, जिसकी आकृति चित्र ७४ मे दाहिनी ओर दिखाई गई है।

तेज कोण बनाने के लिए मोडने और फिर गरम करने की क्रिया कई बार दुहरानी पडती है। अगर तेज कोण को एक ही बार मोड दिया जाय, तो वह या तो टूट जायगा अथवा उसमे दरार हो जायगी। इस कार्य के लिए लकडी का कोयला, ब्लाउन गन, टार्च लैंप, अल्कोहल लैंप, मोमबत्ती आदि व्यवहार मे आते हैं।



(चित्र ७६)

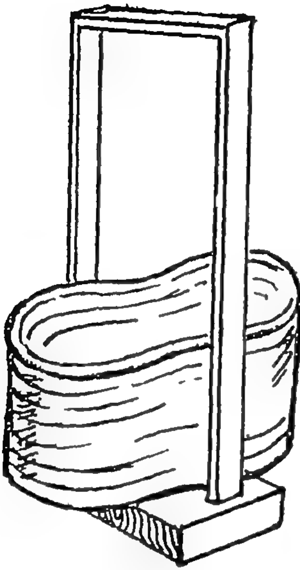


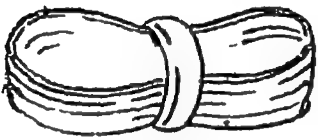
(चित्र ७७)

पात्र मे पानी रख लिया जाता है। जव गरम होते-होते चूल्हे के ऊपर के रखे वटखरे गरम हो जायँ, तव कमचियों को वटखरे में फँसाकर, दोनो हाथो से कमचियो के दोनो छोर पकडकर, धीरे-धीरे अपनी ओर खीचना चाहिए। यह प्रक्रिया चित्र ७८ में दिखलाई गई है। जब कमचियाँ वहुत गरम हो जायँ और जलने की अवस्था तक पहुँच जायँ, तब उसी अवस्था में पकड़े हुए जल-पात्र मे डुवो देना चाहिए और उसके वाद भी थोडी देर पकडे रहना चाहिए। यह विधि भी उसी चित्र ७८ मे ही दीख रही है। यदि वैसी अवस्था मे पकडकर कमची नही रखी जायगी, तो वह सीधी

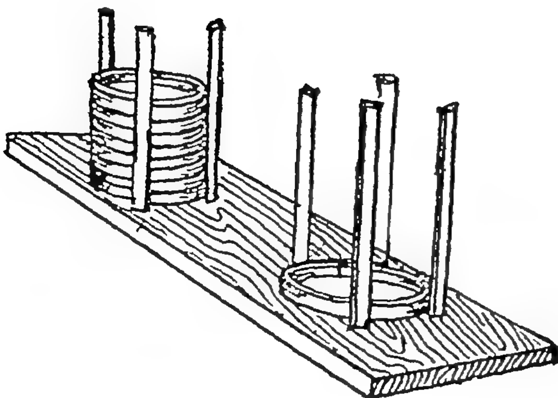
चित्र ८२ भी ऐसी ही विभिन्न कमचियो का है।

बाँस को तख्ते की तरह सीधा करने की विधि—गोल बाँस को ठीक बीच से विभक्त कर लेते हैं। विभक्त करने के पहले ही आवश्यकतानुसार मोटाई रखकर, चित्र ८३ में दिखाई जगह के पास से बाँस का छिलका हटा देते हैं। छिलका हटाने के लिए 'काँता' व्यवहृत होता है। छिलका हटाने के पश्चात् उसे रदे से रँदकर चिकना कर लेना पडता है। चिकना करने की विधि चित्र ८४ में दिखाई गई है। बाँस को दो भागो में विभक्त करने का तरीका और स्थान दोनो चित्र ८५ में दिखाये गये हैं। सीधा करने के काम में बाँस का, दो गाँठो के बीचवाला, भाग ही काम में लाया जाता है। जिस तरफ से छिलका निकाला गया है, उसी भाग की तरफ से सेंककर अथवा गरम लोहे की छड से दबाकर सीधा करते हैं। सीधा करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि बाँस को एकबारगी ज्यादा गरम नहीं करें या न एकबारगी सीधा ही करें। सीधा करने के लिए आहिस्ता-





(चित्र ८०)



(चित्र ८१)

मनोनुकूल सीधा करने की क्रम-विधि

(१) बॉस को काट लेने के बाद और उससे छिलका हटा लेने के पहले उसे बारह घंटे तक पानी में डालकर रखना चाहिए।

(२) नीचे से ऊपर तक, समभाव में, बाँस से छिलका हटाना चाहिए।

(३) बाद में रदे से उसे अच्छी तरह रँदकर चिकना कर लेना उचित होता है।

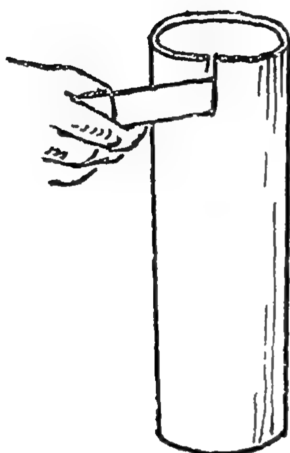
(४) रँदाई करते समय मुटाई बराबर रहे, इसका ध्यान रखना पडता है।

(५) अच्छी रँदाई हो जाने के बाद उसे एक ओर से फाडना चाहिए।

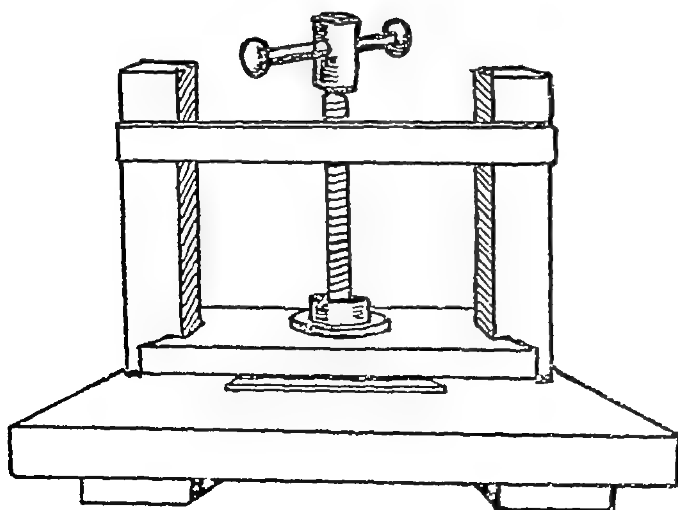
(६) इसे आग पर गरम करते समय समभाव में धीरे-धीरे झुकाना पडता है।

(७) तत्पश्चात् धीरे-धीरे मनोनुकूल आकृति मे सीधा करने का प्रयास जारी करना पडता है। एकाएक कभी नही मोडना चाहिए।

(८) पुनः पानी से बाँस को पोछकर पूर्व की स्थिति में ही उसे कुछ देर पकडे रखना पडता है, नहीं तो बाँस अपनी पूर्वावस्था में आ जाता है।



(चित्र ८५)



(चित्र ८६)

से बने अलकली सॉल्युसन मे घुलाकर लेप बना लेते हैं, जो साटने के काम मे वज्रलेप का काम देता है।

(३) मैदे को पहले खूब कड़ा सानकर अच्छी तरह गूँध लेते हैं। फिर, गूँधे हुए मैदे को पानी में डालकर उसपर हाथ फेरते हैं। हाथ फेरते फेरते गूँधे मैदे का जब उतना भाग रह जाय, जो हाथ फेरने पर भी उसमे से द्रव पदार्थ नही निकले, तब उसे पानी से बाहर निकाल लेते हैं। बाद, उसमे चूना और मधु मिलाकर तथा खूब फेंटकर लेई बना लेते हैं। यह लेई भी साटने के काम में दृढ होती है।

(४) युरिया (Urea) और मेलामिन (Melamine) इन दोनो को मिलाकर लेई बनाते हैं, जो जोडने या साटने के काम में आती है। उसे युरिया पेस्ट कहते हैं, जो पानी आदि पदार्थों के लगने पर भी नही छूटता है। यह लेई प्लास्टिक लेई की तरह मजबूत और टिकाऊ होती है।

(५) बोंद (Bond) को पानी मे मिलाकर औट देते हैं और लेई बना लेते हैं। यह युरिया पेस्ट के सदृश ही टिकाऊ होता है। बोंद सबमें उत्कृष्ट होता है। बोंद एक प्रकार का चूर्ण है, जो बाजार में मिलता है।

(६) अक्रिल भिनियल (Acryl Vinyl) बहुत हल्का होता है और जिसके लगाने पर भी चीजो का आन्तरिक रूप नजर आता (Transperent) है। इसका अधिक व्यवहार उसी कार्य में किया जाता है, जिसमे कलापूर्ण और बारीक काम किये गये सामानों को जोडना होता है। इससे कला की रेखाओ तथा रगो में खराबी नहीं आ पाती।

(७) ब्लड पेस्ट (Blood paste) मे अलकली सॉल्युसन मिलाकर जो लेप तैयार किया जाता है, वह भी साटने और जोड़ने के काम में अच्छा होता है।

(८) युरिया रेजिन (Urea reasien) ७०% और अरारोट (Starch) ५०% से ३०% तक—दोनो को मिलाना चाहिए। इसमे गूँथने का काम करना पडता है। इसकी अच्छी तरह गुँधाई होनी चाहिए। इसकी विधि इस प्रकार है—

(क) सर्वप्रथम अरारोट का १०% पानी मे डालकर औटते हैं। जब यह गाढा हो जाता है, तब उसमे युरिया रेजिन मिलाकर गूँथते हैं। इस प्रकार की बनी लेई जोडने या साटने के काम मे अच्छी होती है।

(ख) केवल युरिया रेजिन मे पकडने की ताकत नहीं है, इसलिए युरिया रेजिन मे एसिड (Hydrochloric) किंवा Ammonium phosphate NH 4 Po 3 ५%, मिलाकर गरम करना चाहिए। इसमे गरमी ८० सेंटिग्रेड तक आनी चाहिए। इस तरीके से बनाई गई लेई मे चिमटापन अच्छा आ जाता है और तब यह साटने के काम मे लाई जाती है।

बॉस पर कागज चिपकाने की लेई

लेई वनाने के लिए, गेहूँ के आटे या मैदे मे थोड़ा नमक मिलाकर पानी में डालकर फेंट देते हैं। बाद में मोटे कपडे या टाट के टुकडे मे रखकर उसे तख्ते पर घिसते हैं। घिसते रहने से उससे जो तरल पदार्थ निकलता है, उसे लेकर धूप में अच्छी तरह सुखा लेते हैं। सूखी बुकनी को पानी मे मिलाकर तथा पकाकर लेई तैयार कर लेते हैं। कागज साटने में इस लेई का उपयोग होता है। पर, इससे भी वढिया तरीका यह है कि उक्त रूप से वनी लेई को मिट्टी के बरतन मे रख और उसका मुँह बन्द कर जमीन के अन्दर गाडकर मिट्टी से ही ढक दें। दो वर्ष बाद उस लेई को जमीन से निकालें। अब आप देखेंगे कि उसमे कीडे पड गये हैं। बाद, कीडो को हटा देने पर उसके नीचे सफेद अश मिलेगा। यह सफेद लेईवाला अश साटने के काम में अत्यन्त उपयोगी होता है।

बाहर भेजते समय बॉस के सामानो को फँफूदी (Mould) से बचाना

वर्षा ऋतु में, बाँस में फॅफूदी लग जाती है। इससे बाँस का बहुत नुकसान होता है। बॉस जब शीतोष्ण कटिवन्ध-प्रदेश में भेजा जाता है, तब रास्ते में भी उसमें फॅफूदी लग जाती है। बाँस की इस बीमारी के कारण उसके व्यापार मे बहुत बडा धक्का पहुँचता है। इसलिए, व्यापारियो को बाँस के इस रोग से बचने का तरीका जानना आवश्यक हो जाता है।

बाँस को रँगकर—चूँकि, बॉस के सामान में जल को ग्रहण करने का गुण है, इसलिए उसपर जल के प्रभाव से कई तरह की फॅफूदियाँ निकल आती हैं। इसलिए अगर उन सामानो पर ऐसे पदार्थ का लेप लगा दें, जहाँ से होकर सामानो के भीतर पानी प्रवेश करने का भय है, तो पानी का उसपर कोई असर नही पड सकता है। ऐसा लेप तैयार सामान पर लगाना चाहिए, बिलकुल कच्चे माल पर नही।

बाँस की सतह पर शायद ही कभी फॅफूदी लगती है, इसलिए अधिकतर भीतरी भाग को ही रँगा जाता है।

सूखा रखकर—बाँस और उससे वनाये गये सामान में लगनेवाली अनेक प्रकार की फॅफूदियो का कारण हवा की आर्द्रता है। उदाहरण के लिए, १०० प्रतिशत आर्द्रता मे उन्हे रहने से ३ दिनों के पश्चात् उनमे फॅफूदी लगती है। उससे अधिक समय व्यतीत होने पर और अधिक मात्रा मे फॅफूदी लगती है। इसके विपरीत ८० प्रतिशत से कम आर्द्र हवा मे रखने मे बाँस के सामानों मे ४० से भी अधिक दिनों तक मे भी फॅफूदी नहीं लगती। ८० प्रतिशत आर्द्रता तक शायद ही कभी फॅफूदी लगती है।

ऊपर के परीक्षणों से विदित होता है कि फँफूदी से वचाने के लिए बाँस या उससे बने सामान को सूखे रखते अथवा सूखे कमरे मे रखते हैं। उसके बाद बक्स तथा कमरे को चारों ओर से ऐसा बन्द कर देते हैं कि बाहरी हवा उसमे प्रवेश नहीं कर सके। साथ ही

तृतीय भाग

बॉस की वस्तुओं की बुनाई

पूर्व मे बाँस के जिन कार्यों के सम्बन्ध में बताया गया है, उनमे बाँस उपजाना, बाँसो को सुरक्षित रखना और बाँसो के सामान तैयार करने से पूर्व उसकी मूलभूत विधियो का ज्ञान प्राप्त करना आदि विषयो पर प्रकाश डाला गया है। इस भाग मे यथावर्णित सामानो से बननेवाली वस्तुओं के सम्बन्ध मे कहा जायगा।

बाँस की बनी वस्तुएँ चूँकि अधिक सस्ती होती हैं, इस कारण उनका आकार और रग केवल व्यावहारिक ही नही हो, बल्कि कलात्मक भी हों, इस बात पर भी कारीगर को पूरा ध्यान देना चाहिए।

बाँस से बननेवाली वस्तुओ को निम्नलिखित श्रेणियो में बाँटा जा सकता है—(१) व्यवहार में आनेवाली वस्तुएँ, (२) कलात्मक वस्तुएे और (३) खिलौने।

उपर्युक्त वस्तुएँ तीन प्रकार के बाँसो से बनती हैं—

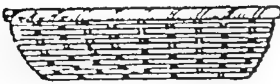
१ पूरे-के-पूरे गोल बॉस की बनी।

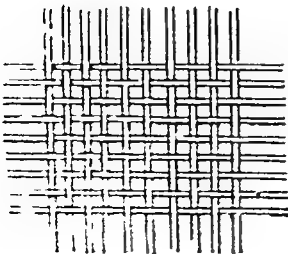
२ सूखे चीरे हुए बॉस की बनी।

३ चीरे तथा कमचियो से बनी।

लेकिन, बॉस की वस्तुओ में, पिंजडे, सूप, डगरे, टोकरियाँ आदि सबसे अधिक बनते हैं। हमारे देश मे गृहस्थ का एक भी ऐसा घर नही है, जहॉ बॉस की बनी इस तरह की वस्तुएं व्यवहार मे न आती हो।

बाँस की अनेक प्रकार की टोकरियाँ तथा पिंजड़े होते हैं। उनकी बनावट में भी बहुत-से भाग एक तरह के होते हैं। चित्र ८९ और ९० में प्रदर्शित विभिन्न प्रकार से बुने सामानो के एक ही प्रकार से बने दिखते हैं।





(चित्र ८९)

(२) पदे तथा किनारे की एक ओर की बुनावट के लिए एक ही तरीका है।

(३) पेंदे तथा किनारे की दूसरी ओर की बुनावट के लिए भिन्न तरीका है।

सामान की बनावट का तरीका देखकर ही बॉस, सामान, बुनावट आदि के ढगो को समझ लेने पर तुरत वस्तुऍ बनाई जा सकती हैं।

पेंदे की बुनाई—पेंदे की बुनाई के विभिन्न तरीके चित्र ६१ और ६२ मे प्रदर्शित किये गये हैं। इनमें पिंजड़ा बुनाई, चौखुटा बुनाई, चौखुटा पेंदा बुनाई, मधुमक्खी के छत्ते की तरह (षट्कोण) बुनाई, फूल की पखुडियो के सदृश बुनाई आदि कई प्रकार की बुनाइयाॅ हैं। आगे चलकर यह समझ में आयगा कि ये बुनाइयाॅ कितनी महत्त्वपूर्ण हैं, क्योकि इन्ही के कारण वस्तुओ के नाम चौखुटा पेंदा पिंजडा, मधुमक्खी पिंजडा, फूल पेंदा पिंजड़ा आदि रखे जाते हैं। आगे के पृष्ठो में इन बुनाइयो की विधियाँ बताई गई हैं। इन्ही विधियो द्वारा बाँस की सूक्ष्म-से-सूक्ष्म और कलात्मक वस्तुऍ तैयार की जाती हैं।

पेंदे की बुनाई की अन्य विधियाँ भी बताई गई हैं। उनके नाम फाँसदार मधुकोष (Insert honey comb), जूट पत्ता (Flex leaf), जालीदार (Net work) आदि हैं। लेकिन ये विधियाँ समतल वस्तुओ की बुनाई के लिए हैं। हमारे यहाँ इस तरह के नामकरणो की अभी कमी है।

गोलाकार बनाना—इस कार्य में पेंदे से पार्श्व तक की बुनाई होती है। यह बुनाई नौसिखुओ के लिए कठिन होती है। फ्रेमवाले सामान को टेढा करना पडता है, साथ ही उसे बुनना भी होता है। इसलिए ठीक से गोलाकार बनाने के लिए अनुभव प्राप्त करना पडता है।

गोलाकार बनाने की प्रविधि अगले अध्याय मे बताई जायगी। इतना जान लेना आवश्यक है कि बुनने के पहले ही कमचियो को मोड दे। और, ऐसा मोड़ना चाहिए, जिससे कही पर टूटे नहीं। सामान मोड़ने के कुछ तरीके नीचे दिये जाते हैं—

(क) कमचियो को अँगूठे और तर्जनी के बीच से मोडना चाहिए। पार्श्व की बुनाई मे फ्रेम की कमचियो को, जिसे गोलाकार बुनना है, इसी प्रकार मोडते हैं। कमचियो को भिगो लेने से मोडाई और बुनाई अधिक आसान हो जाती हैं।

(ख) पेंदे की बुनाई पूरी करके उसे धरती पर रख देना चाहिए। जिस भाग को टेढा करना है, उस पर पैर का अँगूठा रख देना चाहिए और हाथ से फ्रेम की कमचियों को मोडना चाहिए। साथ ही उसी समय मोड को, दूसरी ओर, दूसरे हाथ से, दबाव देना चाहिए।

(ग) यह विधि चौखुटा बुनाई के काम मे आती है। पेंदे की बुनाई खत्म हो जाने पर, उस सामान के बराबर का ही एक काठ का तख्ता रख देना चाहिए और पैर से उस तख्ते पर दबाव डालते हुए फ्रेम को मोड़ना चाहिए।

(घ) गोलाकार बुनाई में खास प्रकार की कमचियों की जरूरत पड़ती है। इन कमचियों को मजबूत होना चाहिए। फ्रेमवाली कमचियों को मोड़ देते हैं और

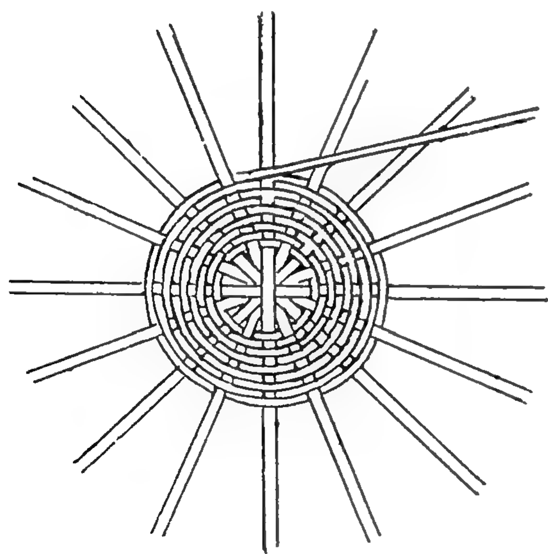
बुनना जारी रखना चाहिए। लेकिन, जिस स्थान पर दोनो मिलाई जायँ, उस स्थान पर जाल के रूप में बनाकर फँसा दी जाती हैं, अन्यथा जोड पर से पिंजडा ढीला हो जाता है। इसके लिए चित्र ९३ देखिए।

(१) **पिंजडे की बुनाई के लिए अतिरिक्त जोड**—फ्रेम की बुनाई के लिए कमचियाँ विषम सख्या में हो या सम सख्या में, अन्त मे वे सम सख्या की हो ही जाती हैं, क्योंकि गोलाई की बुनाई करने पर फ्रेम में सामान दुगुने हो जाते हैं।

फ्रेम की कमचियाँ सम सख्या में रहने पर पिंजडे की बुनाई सभव नही होती, क्योकि इस बुनाई में बुनने की कमची को फ्रेम की एक कमची के आगे और दूसरी के पीछे लगाना पडता है। इसलिए जब फ्रेम की कमचियाँ सम सख्या में रहती हैं, तब बुनाई की कमचियाँ सर्वदा फ्रेम की कमचियो की एक ही ओर पडेगी और पिंजडा नही बुना जा सकता है।

चित्र ९४ मे बुनाई के लिए दो प्रकार की कमचियाँ एक ही साथ दिखाई गई हैं। बुनाई की इस विधि को सादा बुनाई कहते हैं।

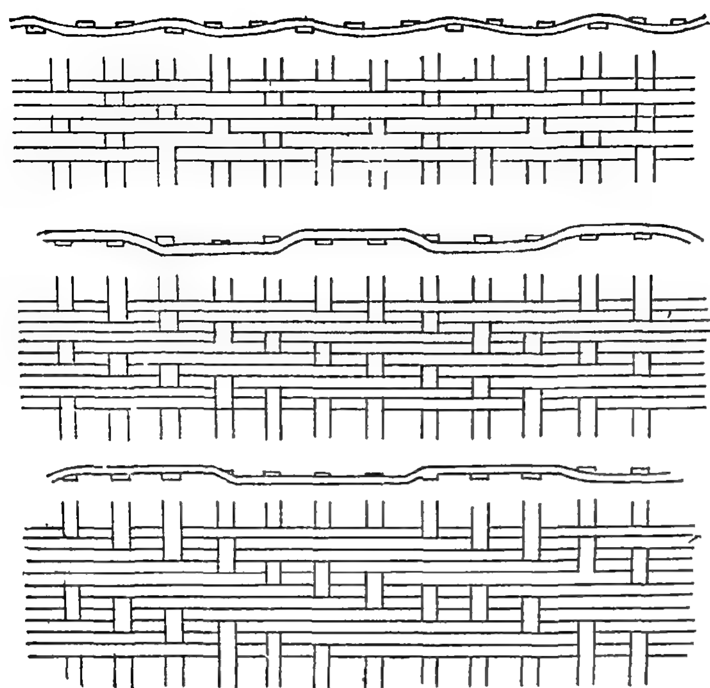
अगर बुनाई की कमची एक ही हो, तो बुनाई की विधि बहुत आसान हो जाती है नीचे कुछ विधियाँ दी जाती हैं—



(चित्र ९४)

एक बार बुन लेने के बाद फिर वही पर पहुँचना पडता है, जहाँ से बुनना शुरू किया गया था। दूसरी बार की बुनाई मे फ्रेम-बुनाई का काम दो-दो कमचियो को एक साथ लेकर, शुरू करते हैं और दोनो बुने हुए भाग बुनावट द्वारा पृथक् कर दिये जाते हैं। लेकिन, यह बुनावट देखने मे अच्छी नहीं होती, सलिए ऐसे भागों को इस तरह से बुनते हैं, जो दिखाई नही पडते, जैसे पेंदा। इसे भी चित्र ९४ मे अच्छी तरह देखा जा सकता है।

(२) **फ्रेम बनाने की कमचियों को विषम सख्या का बनाना**—प्रथम विधि मे चतुष्कोण [illegible] सादा बुनाई के पद मे, जैसी विधि चित्र ९५ के ऊपरी भाग में दिखाई [illegible], [illegible] फ्रेम बुनने की एक कमची बुनाई देते हैं और फ्रेम बुननेवाली कमची को [illegible] लेते हैं। उसके बाद एक ही बुनाई के सामान मे वस्तु बुन जाती है।



(चित्र ९६)

कलात्मक वस्तुओं की पार्श्व-बुनाई—इस तरह की कलात्मक वस्तुओं के पार्श्व की बुनाई भी कई प्रकार से की जाती है। बहुतायत रूप में व्यवहृत होनेवाली विधियाँ ये हैं—

(१) **एक और दो बुनाई**—इस बुनाई के लिए नियमत अधिक चौड़ी कमचियाँ व्यवहृत होती हैं। इसे चित्र ९६ में प्रदर्शित किया गया है। बुनाई की कमचियों को एक फ्रेमवाली कमची के अन्दर और दूसरी दो को बाहर बुनते हैं। इसलिए इसका नाम एक और दो बुनाई है।

इसी के समान दो और तीन बुनाई, चित्र ९६ के ऊपरी भाग में तथा तीन और चार बुनाई उसी चित्र के निचले भाग में प्रदर्शित है। कभी-कभी इन दोनों को मिलाकर एक तीसरी ही विधि व्यवहृत होती है।

(२) **उलटी बुनाई**—एक और दो बुनाई के विपरीत बुनाई को उल्टी बुनाई कहते हैं।

(३) **धारावाहिक बुनाई**—चित्र ९६ में प्रदर्शित रीति से बुनी गई वस्तुएँ जल की धारा की जैसी मालूम पड़ती हैं, मानो प्रवाहित हो रही हैं, इसलिए इसका नाम धारावाहिक बुनाई रखा गया है।

(४) **रस्सानुमा बुनाई**—बुनाई की यह विधि फूलदान बनाने में व्यवहृत होती है। यह तीन बुनाईवाली कमचियों से बुनी जाती है। यह विधि चित्र ९७ के ऊपरी भाग में प्रदर्शित की गई है। तीन बुनाई की कमचियों में सबसे बाईं तरफवाली कमची दो फ्रेम बुनाई की कमचियों तथा दो बुनाई की कमचियों के ऊपर होकर जाती है और तब फिर [illegible] कमची के पीछे होकर वक्र रूप में आती है। इसे चित्र ९७ के ऊपरी (क) भाग में देखना चाहिए।

(५) **चार बुनाई या चार रस्सानुमा बुनाई**—यह विधि रस्सा-बुनाई के सदृश [illegible]। [illegible] कि इसमें बुनाईवाली चार कमचियाँ लगती हैं।

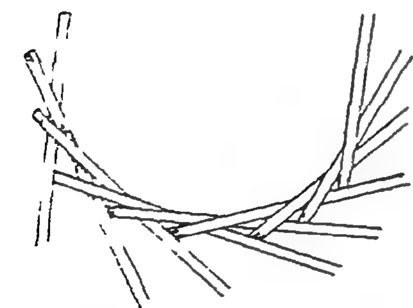
सामानों को उठानेवाली या माल ढोनेवाली वस्तुओं के बनाने के काम में लाई जाती है।

छठी विधि घुमाव द्वारा पूर्ण किया करने के काम में व्यवहृत होती है। बुनाई की एक कमची या फ्रेम की कमची किनारे पर के बाँस के ऊपर होकर मोड़ दी जाती है। इसे चित्र १२६ में देखिए।

सातवीं विधि चित्र १२७ में प्रदर्शित है, जो लोहे के तार-सहित व्यवहृत होती है। फ्रेमवाली कमचियों को एक दूसरे पर आर-पार (क्रॉस) करके 'चार बुनाई' के ढंग से टोकरी बुनते हैं और उसका किनारा घुमाकर तथा काटकर पूरा करते हैं। लोहे के तार को उसी प्रकार लगा देने से टोकरी और ज्यादा मजबूत हो जाती है।

आठवीं विधि के द्वारा बुनाई के समान ही फ्रेमवाली कमचियों को आर-पार (क्रॉस) करके जालीदार टोकरी बनाई जाती है। केवल ऊपरी भाग काट देने से वह ढीला न हो जाय, इसलिए अच्छी तरह मजबूत फ्रेमवाली कमचियों को उसमें तानकर जकड़ देते हैं। इसे चित्र १२७ के निचले भाग में भली भाँति दिखाया गया है।

ऊपर से कमचियों को लगाने का जो तरीका दिया गया है, वह तो उदाहरण मात्र है। सामान लगाने की किसी विधि में पहले इस बात पर विचार करना चाहिए कि काम कैसा है?





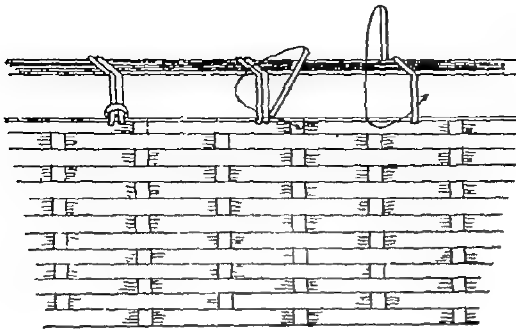


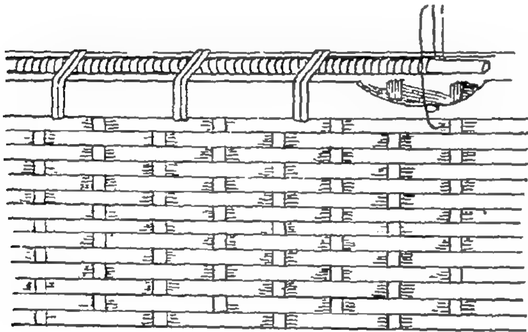
(चित्र १२८)

(१) रावसटर लगाना—फ्रेम की कमचियों से अतिरिक्त कमचियाँ भी लगाई जाती हैं और इसके साथ ही इस विधि से किनारे का काम पूरा किया जाता है। इसको 'संयुक्त किनारा' भी कहते हैं। यह विधि छोटी-छोटी टोकरियों के लिए ठीक होती है।

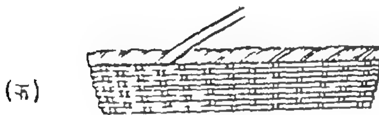
इसे पूरा करने की विधि यह है कि फ्रेम की सभी कमचियों को दो भागों में चीर लेना चाहिए और उन्हें काटकर करीब चार इंच का बना लेना चाहिए। तब किनारे का घेरा लगभग ५ ८ व्यास का बनाना चाहिए, जो टोकरी के व्यास से ½ इंच कम हो। घेरावाले बाँस को एक स्थान पर तार या डोरी से बाँध देना चाहिए।

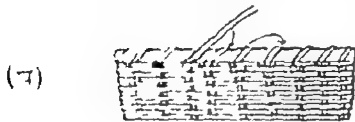
(२) छिपाकर बाँस लगाना—चित्र १२८ में प्रदर्शित ढंग से किनारे को पूरा करने के लिए फ्रेमवाली कमचियों का व्यवहार होता है। यह विधि रद्दी कागज रखने या फूल रखने की टोकरी बनाने के





(चित्र १२३)

(क) 

(ख) 

(ग) 

और उनके बीच में बाँस रखकर लोहे के तार से बाँध देते हैं।

इस विधि से बनी वस्तुएँ मजबूत होती हे और यह विधि बहुत प्रचलित है। टोकरियों की बुनाई के अनुसार पूरा करने की विधि भी बदलती है। कुछ उदाहरण नीचे दिये जाते हैं—

(क) **तार के व्यवहार करने पर**—चित्र ११६ में प्रदर्शित ढग के अनुसार तार से बाँधना चाहिए। तार इतना लम्बा होना चाहिए, जिससे वह आसानी से बँध जाय। इस बात के लिए सतर्क रहना पडता है कि बँधे हुए तार को उसके बन्धन के निकट से काटकर किनारे के भीतर इस तरह से मोडे, जिससे कही खुरच न लगे।

लगातार घुमाव के लिए निम्न-लिखित विधि काम मे आती है।

(ख) **बेंत के व्यवहार करने पर**—उपर्युक्त विधि मे बाँधने का जो तरीका बताया गया है, वह बेंत के लिए ठीक नहीं है, क्योंकि इससे बन्धन के ढीला हो जाने का भय रहता है। छोटी-छोटी वर्गाकार टोकरियों के लिए चित्र १२० 'ख' मे दिखाइ गइ विधि को काम मे लाना

चित्र १२४ के 'ग' तथा 'घ' में प्रदर्शित विधियो में फ्रेमवाली कमचियो के बीच समानान्तर ढग से मढने का काम बताया गया है।

मढनेवाले सामान के छोर को लगाने की कई प्रविधियाँ हैं, लेकिन वे सब वस्तुएँ जिस ढग की हैं, उसके अनुसार ही ये विधियाँ काम में लाई जाती हैं। कुछ विधियाँ नीचे दी जा रही हैं—

चित्र १२५ में दिखाया गया है कि मढनेवाली कमचियाँ ढीली न हो जायँ, इस लिए उसे बुनाईवाली कमचियो के साथ दो या तीन बार घुमाकर जकड़ देते हैं या फ्रेमवाली कमचियो तक मढ देते हैं अथवा फ्रेमवाली कमचियो के साथ ही जकड देते हैं।

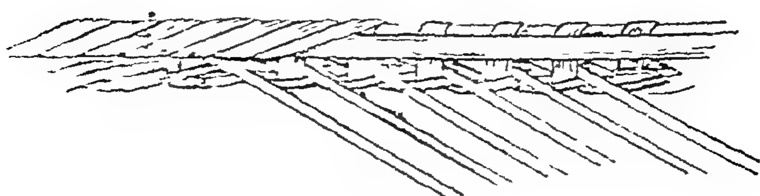
इस बात की भी सावधानी रखनी पडती है कि घुमाव की नई कमचियो को जोडते समय जोड का भाग ढीला न हो जाय। आरम्भ में घुमाववाली कमचियों को लगाते समय देख लिया जाता है कि जिस तरह वे मजबूती से लग जाती हैं, उसी तरह वह समाप्त होने पर भी मजबूती के साथ लगी रहें।

चित्र १२६ में दिखाया गया है कि एक बार के घुमाव के बाद घुमाव की कमचियो को फ्रेमवाली कमचियो के साथ लगा दिया गया है। कमचियाँ यदि मुलायम होगी, तो वस्तु का छोर ठीक से जकड जाता है।

चित्र १२६ के निचले भाग में घुमाव की कमचियो को छोर पर लगाने की कठिन विधि दिखाई गई है। घुमाव की कमचियों के छोर को किनारे के नीचे से घुमाते हैं, तब फ्रेमवाली कमचियो के बीच के एक खाली स्थान से उसे निकालकर फिर दूसरे रिक्त स्थान होकर डालते और निकालते हैं।

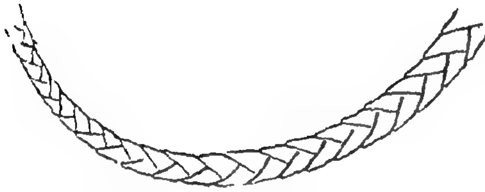
किनारे को मजबूत बनाने के लिए कभी-कभी दुहरी मढाई करनी पडती है। चित्र १२७ के ऊपरी भाग मे यह दिखाया गया है। इसकी विधि यह है कि भीतर से बाहर तीन घुमाववाला किनारा लगाने का साधारण तरीका अपनाकर फिर दो बार ऊपरी घुमाव देना पडता है। ये घुमाव निचले घुमाव होते हैं और पहले घुमाव की विपरीत दिशा मे होते हैं। ऊपरी घुमाव मे त्वचा-युक्त कमचियाँ लगाई जाती हैं।

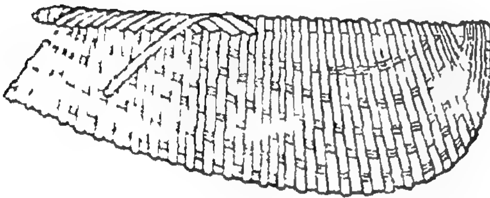
किनारा मजबूत बनाने के लिए चित्र १२७ का निचला भाग देखना चाहिए। निचले घुमाव के बाद ऊपरी घुमाव बनाने के लिए दूसरी कमची की जरूरत पडती है। इस विधि को 'दुहरा किनारा पूर्ण-क्रिया पद्धति' कहते हैं।

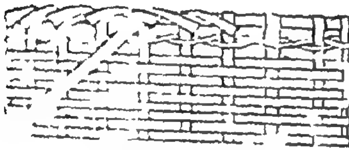


(चित्र १२८)

कमचियों और फ्रेमवाली कमचियों के बीच में समानान्तर रूप से घुमाकर लगाना चाहिए। उसके बाद घुमाववाली कमचियों को, बाँयें हाथवाले छोर को घुमाकर, फ्रेमवाली कमचियों के बीच के खाली स्थान के भीतर डालते हैं। यहाँ घुमाववाली कमचियों का दाहिना छोर होता है।







(चित्र १३०)

इसके बाद ऊपरी मुँहवाले हिस्से पर एक बार लपेटकर घुमाव का काम करना पड़ता है और इस प्रकार किनारे का काम पूरा किया जाता है। किन्तु, घुमाववाली कमचियों के छोर को इस विधि से लाना जरा कठिन है।

(ख) एक ही सामान से मढ़ना—यह विधि बहुत-कुछ उपर्युक्त प्रथम विधि के सदृश ही है। प्रत्येक ६ से ६ फ्रेमवाली कमचियों के साथ मढ़नेवाली कमची मढ़ी जाती है और फ्रेमवाली कमची को ऊपरवाली कमची से विभक्त नहीं करना पड़ता है।

जब फ्रेमवाली कमचियों की संख्या उन रिक्त स्थानों की संख्या में विभक्त की जाती है, जिस होकर

जाती है। बनी वस्तु का कई बार उबालने और साफ करने से उसका रग और सुन्दर होकर निखर उठता है।

जो वस्तु साफ की गई सामग्री की बनी नही होती, उसे हल्के 'विस्मार्क ब्राउन' रग से रँग देते हैं।

(ख) रँगाई—धुँआ देकर भी बाँस के सामानो में रग किया जाता है। इसे चित्र १३३ मे दिखाया गया है। टीन के एक खोखले डिब्बे में बाँस के टुकडो को लोहे की कडियो से लटका दिया जाता है। नीचे लोहे का एक चदरा बिछाकर कोयला जला देते हैं। कायले का धुँआ टीन के डिब्बे में लटके बाँस के सामानो मे लगता है और उससे सामान में रग आ जाता है।

धुँआ लगाकर बाँस में जो रग लाया जाता है, उसे प्राकृतिक रंग कहते हैं। रसोई-घर के धुएँ मे एक लम्बे अरसे तक (१ से लेकर १० वर्ष तक) बाँस को रखकर कुछ लोग रगीन बनाते हैं।

गृहस्थो के घर के छज्जे विशेषत बाँस के बने होते हैं, जिनमें रसोई-घर के छज्जे के बाँस धुएँ लगने के कारण रगीन हो जाते हैं। ये बाँस जितने पुराने होगे, उनमें उतना ही अच्छा ओर स्थायी रग चढता है। भारत में लाठी, मोटा और छडी में सुन्दर रग लाने तथा उसे मजबूत बनाने के लिए छप्पर मे उस जगह खोसते हैं, जहाँ नीचे में दूध औटा जाता है। गरम दूध के वाष्प और धुएँ से जैसा सुन्दर रग और टिकाऊपन बाँस में आते हैं, वैसा अन्य धुएँ से नही। ऐसे बाँसो की कमचियो के द्वारा बनाई गई वस्तुएँ अत्यन्त सुन्दर और टिकाऊ होती हैं। जापान मे ऐसे बाँसो से बहुमूल्य वस्तुएँ तैयार की जाती हैं। खेद है कि हमारे यहाँ के लोग इसका उचित व्यवहार नही जानत हैं।

धुएं के रंग के सदृश रंगने की प्रणाली

प्रथम विधि—बिस्मार्क को ५ गैलन जल में घोल लीजिए। इस घुलन के पतलापन की जाँच, बाँस के टुकड़े को उसमें करीब १० सेकेण्ड तक डालकर, की जाती है। रंग का उचित पतलापन या गाढ़ापन तब माना जाता है, जब बाँस का टुकड़ा सूख जाने पर काला हो जाय। टुकड़े का रंग अगर पीला आया, तो उसमें बिस्मार्क ब्राउन मिला देना चाहिए। इसे २० से ३० मिनट तक उबालना चाहिए।

प्रथम घुलन में रंग लेने के बाद वस्तु को पूर्णरूप से सुखा लेना चाहिए। नहीं सुखाने से उसका लाल रंग फीका हो जायगा और उसे पोंछ देने पर तो लाली बिलकुल नहीं रह जायगी।

द्वितीय विधि—मिथेल वायलेट ८० ग्राम, मालकाइट ग्रीन ४० ग्राम और जल ५ गैलन—इन दोनों को मिलाकर प्रथम विधि में दी गई विधि से घुलन के गाढ़ापन की जाँच करते हैं। बाँस के जिस टुकड़े की परीक्षा करते हैं, वह काला हो जाता है। लगभग दो मिनट में यह रंग जाता है।

सुखाना—धूप मे तथा गरमी पहुँचा कर सुखाना चाहिए। ये दोनो विधियाँ ठीक हैं। किन्तु, एसिड से निकालकर और पोछकर तुरत सुखाना चाहिए।

रगना—मौलिक रग से रँगा जाता है। उदाहरण के लिए नीचे की बातो पर ध्यान देना चाहिए —

(क) जल मे रग को घोलकर, छिडकाव करनेवाले यत्र से उसे सामग्री पर छिडकते है। थोडी देर के लिए सामग्री को यो ही छोड देते हैं, फिर जल से धो देते हैं।

(ख) सामग्री को रग के घोल मे डुबो देते हैं। जिस समय आटा या पेस्ट इधर-उधर लगा रहे, तभी उनको तुरत रग देना चाहिए। उसके बाद सामान को जल से धो देते हैं।

(ग) बाँस पर किसी कूची या कलम के द्वारा या रबड की डिजइननुमा मुहर के द्वारा रग से इच्छित डिजाइन बना लेते हैं और कुछ देर के लिए छोड देते हैं। उसके बाद अगर उसे गरम करना जरूरी है, तो गरम करके कुछ देर के बाद ठडा हो जाने पर धो देते

नाइट्रिक एसिड या सल्फ्युरिक एसिड से रँगने की विधि—नाइट्रिक एसिड के अलावा सल्फ्युरिक एसिड भी बाँस रँगने के काम में आता है। नाइट्रिक एसिड बाँस को भूरा या पीला कर देता है और सल्फ्युरिक एसिड उसे काला बना देता है। इस विधि को ऑरगेनिक विधि कहते हैं।

लेप या पिगमेंट से रँगाई—लेप या पिगमेंट से बाँस की सतह का रंग नहीं बदलता, बल्कि उस रंग से बाँस की त्वचा को केवल ढक दिया जाता है। अगर बाँस की त्वचा की रंगत ठीक है, तो उसपर पेंट या पिगमेंट व्यवहार करना कठिन है, क्योंकि बाँस की त्वचा ऐसी रहती है कि उसपर ठीक से ये दोनों चीजें नहीं लगाई जा सकतीं। इसलिए, त्वचा को निकाल देना पड़ता है अथवा सैंड पेपर से उसे खुरदरा बना देना पड़ता है।

चीना मिट्टी की रँगाई—चीना मिट्टी के साथ सल्फ्युरिक एसिड मिलाकर उसका लेप देकर गरम करना चाहिए। इससे रंग भूरा हो जाता है। अगर लेप गाढ़ा हुआ, तो रंग गाढ़ा काला होगा और पतला हुआ, तो रंग बिलकुल दूसरी किस्म का हो जायगा। नाइट्रिक एसिड और चीना मिट्टी मिलाकर लेप देकर गरम करने पर काला रंग आता है। बाँस का रंग अगर प्राकृतिक या उजला रखना चाहते हैं, तो सामुद्रिक घास (सेवार) को भिंगोकर बाँस पर रखकर गरम करना चाहिए। इससे बाँस का वह भाग, जो घास से ढँका रहेगा, उजला हो जायगा और शेष भाग का रंग स्वाभाविक ही रह जायगा।

बाँस का रंग उजला बनाने की एक सबसे सरल विधि—गंधक का प्रयोग करके सर्वप्रथम बाँस के छोटे-छोटे टुकड़ों को लकड़ी पर सिलसिले से रखते हैं। उसके बाद उसके नीचे किसी बरतन में गंधक रखकर जलाया जाता है। उस जलते हुए गंधक के धुएँ से वे टुकड़े उजले हो जाते हैं। ५० से ६० ग्राम गंधक एक बोझ बाँस को रँगने में लगता है।

दूसरी विधि—हाइड्रोजन पारॉक्साइड के घुलन में साफ करने की शक्ति है। हाइड्रोजन ऑक्साइड ५ से ८ प्रतिशत होना चाहिए। चौबीस घंटे तक घोल में सामान को डुबोकर रखना चाहिए।

तीसरी विधि—ब्लीचिंग पाउडर और जल तथा थोड़ा-सा सल्फ्युरिक एसिड तीनों के घोल में बाँस को ८ से २४ घंटे तक डुबोये रखना चाहिए। जापान में इसका व्यवहार सर्वत्र होता है।

कृत्रिम ढंग से रँगाई—बाँस की ऊपरी सतह बहुत चिकनी होती है। इस कारण जल्दी उसमें रंग नहीं पकड़ता। उसके नीचे एक दूसरी त्वचा होती है। इस त्वचा में ऐसे स्थान होते हैं, जिनसे होकर हवा नीचे प्रवेश करती है। इस त्वचा को हटा देने से रँगाई आसान हो जाती है।

चिकनी सतह को भी रँगने की कृत्रिम विधि होती है। इसके लिए एक खास तरीका है। एक खास प्रकार का पेस्ट होता है, जो चिकनी मिट्टी २ भाग, पॉलिशिंग पाउडर १ भाग और लादम १ भाग मिला कर बनता है। इन सबमें नाइट्रिक एसिड मिला देते हैं। फिर, विनेरे ८५ तथा हाइड्रोक्लोरिक एसिड भी मिला देते हैं। इस लेप को बाँस पर चढ़ा देते हैं। इससे बाँस में एक अच्छा ओप आ जाता है।

नाइट्रिक एसिड या सल्फ्युरिक एसिड से रँगने की विधि—नाइट्रिक एसिड के अलावा सल्फ्युरिक एसिड भी बाँस रँगने के काम में आता है। नाइट्रिक एसिड बाँस को भूरा या पीला कर देता है और सल्फ्युरिक एसिड उसे काला बना देता है। इस विधि को ऑरगेनिक विधि कहते हैं।

लेप या पिगमेंट से रगाई—लेप या पिगमेंट से बाँस की सतह का रग नही बदलता, बल्कि उस रग से बाँस की त्वचा को केवल ढक दिया जाता है। अगर बाँस की त्वचा की रगत ठीक है, तो उसपर पेंट या पिगमेंट व्यवहार करना कठिन है, क्योंकि बाँस की त्वचा ऐसी रहती है कि उसपर ठीक से ये सभी चीजें नहीं लगाई जा सकतीं। इसलिए, त्वचा को निकाल देना पडता है अथवा सैंड पेपर से उसे खुरदरा बना देना पडता है।

चीना मिट्टी का रँगाई—चीना मिट्टी के साथ सल्फ्युरिक एसिड मिलाकर उसका लेप देकर गरम करना चाहिए। इससे रग भूरा हो जाता है। अगर लेप गाढा हुआ, तो रग गाढा काला होगा और पतला हुआ, तो रग बिलकुल दूसरी किस्म का हो जायगा। नाइट्रिक एसिड और चीना मिट्टी मिलाकर लेप देकर गरम करने पर काला रग आता है। बाँस का रंग अगर प्राकृतिक या उजला रखना चाहते हैं, तो सामुद्रिक घास (सेवार) को भिगोकर बाँस पर रखकर गरम करना चाहिए। इससे बाँस का वह भाग, जो घास से ढका रहेगा, उजला हो जायगा और शेष भाग का रग स्वाभाविक ही रह जायगा।

बाँस का रग उजला बनाने की एक सबसे सरल विधि—गधक का प्रयोग करके सर्वप्रथम बाँस के छोटे-छोटे टुकडो को लकडी पर सिलसिले से रखते हैं। उसके बाद उसके नीचे किसी बरतन मे गधक रखकर जलाया जाता है। उस जलते हुए गधक के धुएँ से वे टुकडे उजले हो जाते हैं। ५० से ६० ग्राम गधक एक बोझ बाँस को रँगने मे लगता है।

दूसरी विधि—हाइड्रोजन पारॉक्साइड के घुलन में साफ करने की शक्ति है। हाइड्रोजन ऑक्साइड ५ से ८ प्रतिशत होना चाहिए। चौबीस घटे तक घोल में सामान को डुबोकर रखना चाहिए।

तीसरी विधि—ब्लीचिंग पाउडर और जल तथा थोडा-सा सल्फ्युरिक एसिड तीनों के घोल में बाँस को ८ से २४ घटे तक डुबोये रखना चाहिए। जापान में इसका व्यवहार सर्वत्र होता है।

कृत्रिम ढग से रगाई—बाँस की ऊपरी सतह बहुत चिकनी होती है। इस कारण जल्दी उसमें रग नही पकडता। उसके नीचे एक दूसरी त्वचा होती है। इस त्वचा में ऐसे स्थान होते हैं, जिनसे होकर हवा नीचे प्रवेश करती है। इस त्वचा को हटा देने से रँगाई आसान हो जाती है।

चिकनी सतह को भी रँगने की कृत्रिम विधि होती है। इसके लिए एक खास तरीका है। एक खास प्रकार का पेस्ट होता है, जो चिकनी मिट्टी २ भाग, पॉलिशिंग पाउडर १ भाग और लाइम १ भाग मिला कर बनता है। इन सबमें नाइट्रिक एसिड मिला देते हैं। फिर, विनेरे ८५ तथा हाइड्रोक्लोरिक एसिड भी मिला देते हैं। इस लेप को बाँस पर चढा देते हैं। इससे बाँस मे एक अच्छा ओप आ जाता है।

देना चाहिए। सामान को समतल रूप मे डालना आवश्यक है, लम्ब रूप में नही। बाद, बरतन को हीटर पर रखकर ४० से० तापमान मे २० मिनट तक बाँस को रखने के बाद निकाल लेना चाहिए। थोडी देर तक ठडा होने के लिए छोड देना चाहिए। तत्पश्चात् बाँसो को निकालकर पानी से धोकर कपडे से पोछना चाहिए।

रोडामिन (लाल) —इसमे भी उपर्युक्त विधि ही व्यवहृत होती है। बाँस का वजन अगर ३८ ग्राम हो, तो रोडामिन ० ३ से ८ ग्राम तक होना चाहिए। पहले थोडा पानी देकर ठीक से मिला लेना पडता है। तब अधिक पानी देकर फिर एसेटिक एसिड १० ग्राम मिलाया जाता है। पानी पोछकर उसे हीटर पर रखकर ४० से० तापमान मे बाँस के सामान को रख दें। १०० सें० तापमान चढ जाने के बाद सामान को निकालकर उसे कुछ देर तक यो ही छोड दे और फिर ठडे पानी से उसे धोकर कपडे से पोछ देना पडता है।

मिश्रित रग रोडामिन (लाल) और औरामिन (पीला)=नारगी —बाँस अगर ३८ ग्राम हो, तो ऊपर के दोनो रगो का मिला हुआ भाग ० ३८ ग्राम होना चाहिए। उसमे पहले थोडा जल देकर घोल बना लेना चाहिए, फिर अधिक पानी देना चाहिए। उसके बाद एसेटिक एसिड १० ग्राम मिलाना चाहिए। पात्र के बाहरी भाग के जल को पोछ देना चाहिए। फिर, उसे हीटर पर रखना उचित है, जब तापमान ४० सें० हो। १० मिनट मे तापमान १०० सें० हो जायगा। उसके बाद उसमे सामान रखकर २० मिनट तक यो ही छोड देना चाहिए। पश्चात् बाहर निकालकर कुछ देर ठडा होने दीजिए। पीछे ठडे पानी से धोकर सूखने के लिए रख दीजिए।

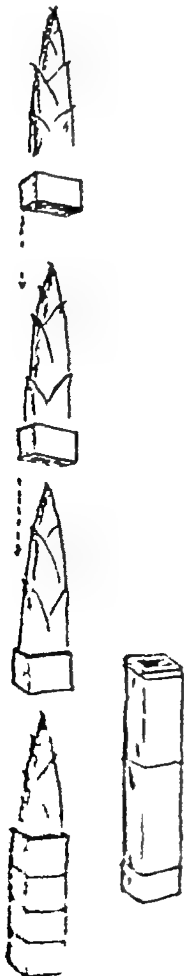
औरामिन और मालकाइट ग्रीन —बाँस का वजन ३८ ग्राम होने पर ऊपर के दोनो रगो का बराबर-बराबर भाग, ० ३८ ग्राम, होना चाहिए। उसमें थोडा जल मिलाकर घोल बना ले और बाद मे अधिक पानी मिला दें। उसके बाद एसेटिक एसिड १० ग्राम मिलाकर पात्र के बाहरी भाग से पानी पोंछ देना चाहिए। फिर, उसे हीटर पर रखना चाहिए किन्तु इसे ४० से० से अधिक तापमान पर नही रखते हैं। वैसा होने पर सामान के फट जाने की आशका रहती है।

क्रम-स०	रग		१ ५ प्रतिशत		प्रतिशत ० २
१७	Malachite Green (मालकाइट ग्रीन)	(½)			
	Auramine O (औरामिन)	(½)	,,	,,	,,
१८	Brilliant Green GX (ब्रिलियेण्ट ग्रीन)		,,	,,	,,
१९	Malachite Green (मालकाइट ग्रीन)		,,	,,	,,
२०	Brilliant Cyanine 6 GX (ब्रिलियेण्ट स्यानिन)		,,	,,	,,
२१	Brilliant Cyanine 6 GX (ब्रिलियेण्ट स्यानिन)	(½)			
	Methylene Blue (मेथेलीन ब्लू)	(½)	,	,,	,,
२२	,, ,, ,,		,,	,,	,,
२३	Victoria Blue B Conc. (विक्टोरिया ब्लू)	(⅓)	,,	,,	,,
२४	,, ,, ,,				
	Crystal Violet (क्रिस्टल वायलेट)	(⅔)	,,	,,	,,

बाँस रँगने के कुछ मौलिक रग

			१ प्रतिशत
२५	Auramine O (ओरामिन)		
२६	Auramine O ,,	(5/6)	
	Acridine Orange RO (एक्रिडिन आरेञ्ज)	(1/6)	,,
२७	,, ,, ,, ,, ,,		,,
२८	Bismark Brown G Conc (बिस्मार्क ब्राउन)		,,
२९	Chrysoidine Powder (क्रिस्वार्यडिन पाउडर)		,,
३०	Bismark Brown G Conc (बिस्मार्क ब्राउन)	(10/20)	
	Malachite Green (मालकाइट ग्रीन)	(1/20)	,,
३१	Fuchsine (फ्कसिन)	(1/3)	
	Safranine OK (सेफरेनिन)	(2/3)	,,
३२	,, ,, ,,		,
३३	Rhodamine B Conc (रोडेमिन)		,,
३४	Safranine OK (सेफरेनिन)	(1/[illegible])	
	Auramine O (ओरामिन)	(1/[illegible])	,
३५	Safranine OK (सेफरेनिन)	(1/[illegible])	
	Chrysoidine Powder (क्रिस्वार्यडिन पाउडर)	(1/[illegible])	,
३६	Bismark Brown G Conc (बिस्मार्क ब्राउन)	([illegible])	
	Methyl Violet (मिथल वायलेट)	([illegible])	

क्रम-सं०	रंग	१ प्रतिशत
६३	Direct Brilliant Rose BD Conc (डाइरेक्ट ब्रिलियेण्ट रोज)	,,
६४	Direct Scarlet B (डाइरेक्ट स्कारलेट)	,,
६५.	Nippon Orange R Conc (निपन आरेञ्ज)	,,
६६	Chrysophenine G Conc (क्रीसोफेनिन)	,,
६७	Japanol Fast Black Conc (जापानोल फास्ट ब्लेक)	३ प्रतिशत
६८	Direct Sky Blue 6 BK (डाइरेक्ट स्काई ब्लू)	१ प्रतिशत
६९	Nippon Dark Green B Conc (निपन डार्क ग्रीन)	,,
७०	Direct Brown KGG (डाइरेक्ट ब्राउन)	,,
७१.	Nippon Brown 3 G (निपन ब्राउन)	,,
७२	Direct Brown RG (डाइरेक्ट ब्राउन)	,,



कृत्रिम तरीके से बाँस को विभिन्न रूप देना

इच्छानुकूल बाँस तैयार करना—कोठ में जब पहले बाँस निकलता है और लगभग दो फीट का हो जाता है, तभी अलग से बने लकड़ी या धातु के त्रिकोण, चतुष्कोण अथवा षट्कोण (यानी इच्छित आकृति के) साँचे को उस छोटे बाँस में पहना देते हैं। एक साथ मनोनुकूल कई साँचे बनाकर रख लेते हैं। जैसे जैसे बाँस बढ़ता जाता है, वैसे वैसे साँचे को अँगूठी की तरह एक-पर-एक रखकर बाँस में पहनाते जाते हैं। इसका प्रदर्शन चित्र १३४ में किया गया है। इस विधि से ऊपर तक बाँस की आकृति इच्छित साँचे के रूप में बनकर तैयार हो जाती है। ऐसे बाँस कमचियों के काम में नहीं आते हैं। इनसे अधिकतर फ्रेमवाले काम लिये जाते हैं—जैसे, लैम्प स्टैंड, बेंच के साँचे, दरवाजे या खिड़की की चौखट, ब्रुश के ढाँचे आदि। इसके अतिरिक्त जहाँ जहाँ लकड़ी को छीलकर तिकोन, चौकोन आदि इन सामानों का व्यवहार होता है, वहाँ वहाँ इन बाँसों का प्रयोग हो सकता है।

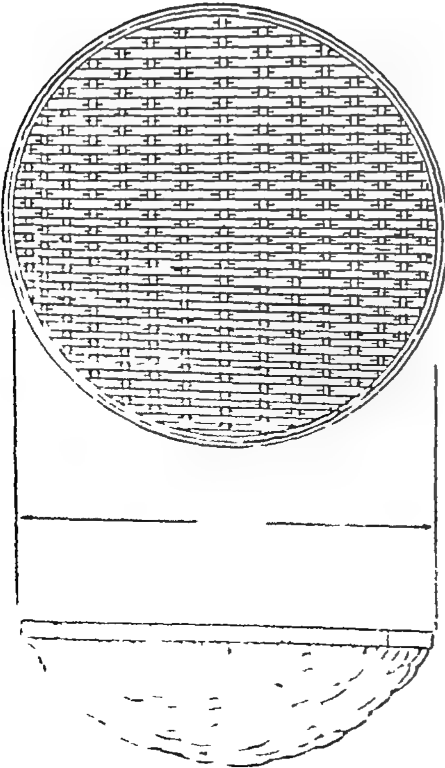
दाग के ऊपर प्राकृतिक दागों की तरह हो

चतुर्थ भाग

बाँस के विविध व्यावहारिक कार्य

पिंजड़ा

पिंजडा-बुनाई—पिंजडा-बुनाई का अपना विशेष स्थान है। इस बुनाई में पिंजडे के पेंदे तथा पार्श्व की बुनाई एक ही प्रकार से होती है।



पिंजडा-बुनाई द्वारा तैयार काम निम्नलिखित श्रेणियों में बाँटे जा सकते हैं—

(क) गोल मुँहवाले कटोरे के आकार का।

(ख) एक सिरे पर गोलाकार बुना रहता है, लेकिन दूसरे सिरे पर मुँह बना रहता है।

(ग) पिंजडे और टोकरी का विशेष अन्तर समझना कठिन है।

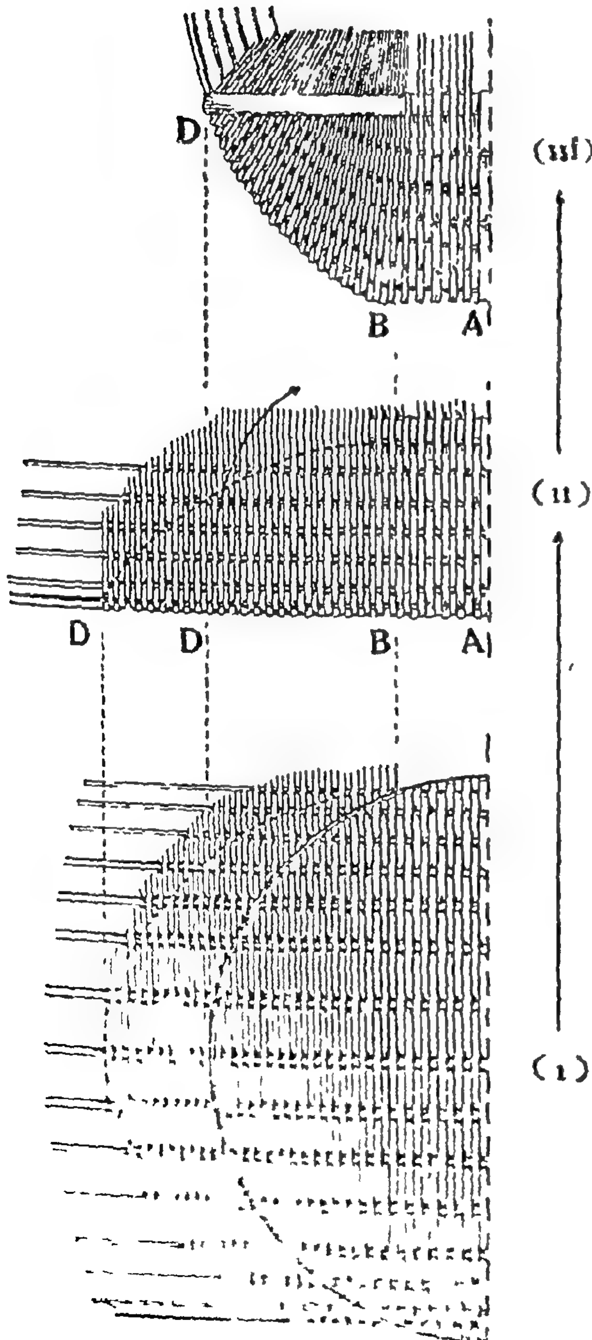
लेकिन, पिंजडा भीगे सामान को रखने के लिए होता है और टोकरी सूखी वस्तु रखने के लिए। अन्न रखने के लिए जो टोकरी बनाई जाती है, उसकी बुनाई त्रिभुजाकार होनी चाहिए, जिससे उसमें अन्न के दाने अटक नहीं जायँ। पिंजडा-बुनाई की मूलभूत बातें तृतीय भाग के प्रारम्भ में द्रष्टव्य हैं।

गोल झुरी या छेंटी

गोल झुरी चित्र १३५ और १३६ में प्रदर्शित है। इसका अनेक कामा

जालीदार झुरी

इसकी बुनाई भी झुरी के ढंग की होती है और फ्रेम के सामान एक ऊपर, एक नीचे करके तब बुनाई का सामान लगाते हैं। चित्र १३८ के नीचे में दिखाये गये प्रथम A और B वाले पार्श्व बुनते हैं और तब C और D वाले पार्श्व। किनारे के घेरे के निकट बुनाई के सामान को पीछे की ओर मोड देते हैं और उसका त्वचावाला भाग ऊपर की ओर रखते हैं। बुनाई की कमची को प्रत्येक पाँच से दस कमचियों पर मोड दिया जाता है।



बुनाई की कमचियाँ चौडी या पतली—दोनों तरह की ठीक होती हैं, लेकिन फ्रेम की कमचियों के अनुसार उनका संतुलन कर लिया जाता है।

भात छानने के लिए चाभ बाँस से बनी टोकरी की बुनाई तथा फ्रेम की कमचियाँ उसी आकार की होती हैं, लेकिन बुनाई और फ्रेम की कमचियाँ समानान्तर होती हैं।

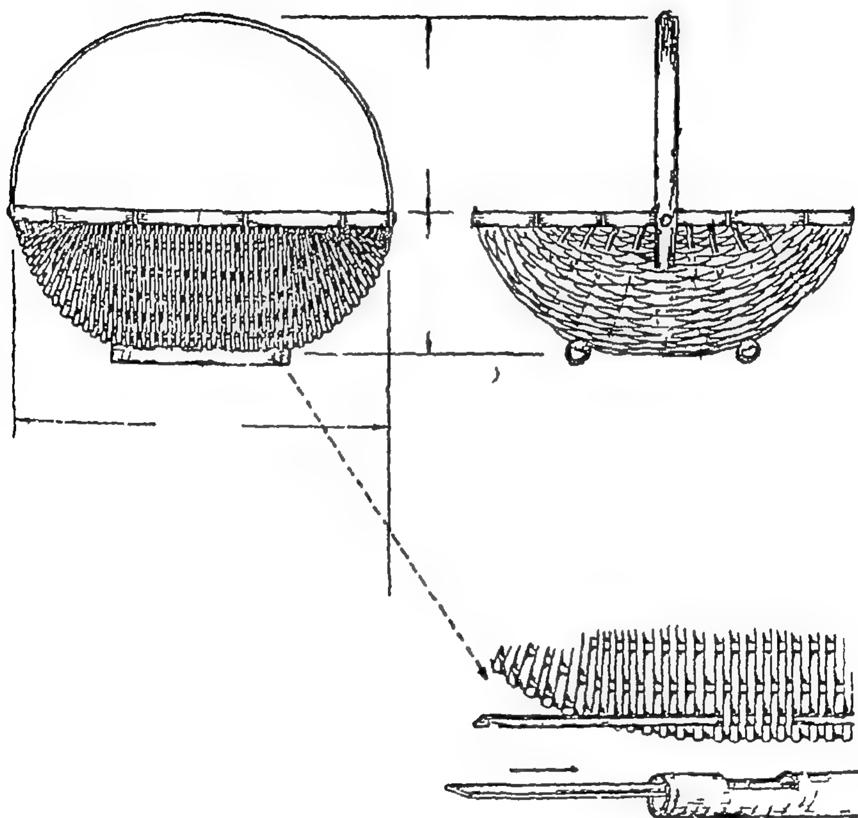
झुरी के मध्य भाग में जब बुनाई की कमची जोडनी होती है, तब जोड के स्थान पर बाँस का चार भागों में बाँटकर उसके मिले हुए रूप में बुनते हैं। अन्यथा, जोडे गये भाग में टोकरी के टूट जाने की आशंका रहती है।

झुरी का पेंदा चित्र १३५ में प्रदर्शित ढंग से बुना जाता है।

[illegible]

बना रहता है। अगर भात को ज्यादा देर रखना है, तो उसे ऐसी ही टोकरी में रखना चाहिए। यह टोकरी भोजन की सामग्री, आलू आदि के बीज, मिठाई की टिकिया आदि को सुरक्षित रखने में व्यवहृत होती है।

सामान्यतः यह फूल पेंदा-बुनाई से तैयार की जाती है। झुरी पेंदा-बुनाई से टोकरी बनाने की अवस्था में इसका आकार पहलदार या कटोरे के आकार का हो जाता है।



पूर्व की टोकरियों से कुछ विभिन्न बातें —

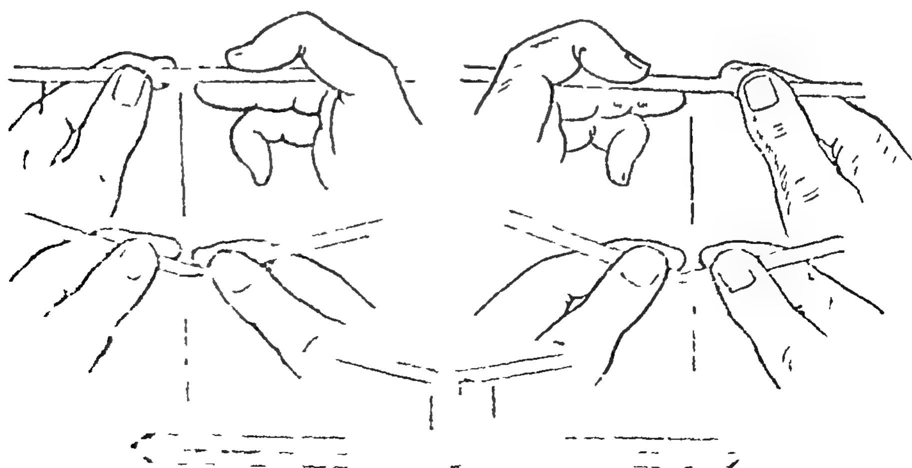
(१) बुनाई के सामानों को खास ढ ग से वनाया जाता है।
(२) बुनाई की विधि में थोडा परिवर्त्तन करना पड़ता है।
(३) किनारा वेणी के रूप म पूरा किया जाता है।

चावल धोनेवाली टोकरी के बाँस के विषय में —बुनाई के कार्य के लिए दो या तीन वर्ष पहले के चाभ वाँस का व्यवहार इसमें किया जाता है और मढाई के काम के लिए एक वर्ष पुराना वाँस का। फ्रेम की सामग्री करीव ६-६ फुट की होती है। इस कारण, टोकरी ६ फुट लम्बे वाँस से वनाई गई कमच्चियों से ही तैयार होती है।

वाँस को फाडने के लिए दुहरी धारवाली छुरी काम में लाई जाती है, लेकिन अनुभवी कारीगर चित्र २१ 'घ' (पृ० ६४) म प्रदर्शित छोटी छुरी को भी काम म लाते हैं ओर वे फाडे हुए सामान को त्रिभुजाकार वनाते हैं। यह टोकरी त्रिभुजाकार ही वनाई भी जाती है। इन सामानों से वनी टोकरी में धोया हुआ चावल नहीं सटता।

चाभ वाँस को ऐसा रूप प्रदान करना वहुत कठिन होता है। मढाई का काम एक वर्ष पुराने वाँस की सामग्री से होता है, जो फाडकर जमा करके रखी जाती है। मढाई का काम करते समय सामान को तीन भागों मे विभक्त कर लेते हैं, उसके पूर्व कई दिनो तक उसे पानी म फूलने के लिए रखते हैं।

किनारे के घेरे का निर्माण —गोलाकार झुरी भी इस गोल टोकरी के समान ही वनाई जाती है। अगर उपयुक्त वाँस नही मिले, तो इन दोनो के घेरे के निर्माण मे मकोर वाँस के निचले भाग से वनी सामग्री का व्यवहार करना चाहिए।



समानान्तर होती हैं, जो किनारे पर घेरे को मढ़े रहती हैं और चित्र १४२ के ऊपरी भाग में दिखाये गये ढंग से झुरी में लगाई गई होती है।

किनारे को पूरा करना—बाहरी किनारे पर लगी कमचियों को, जिनका व्यास मुँह के बराबर होता है, किनारे के घेरे के साथ जोड़ के स्थान पर लगा दिया जाता है और भीतरी किनारेवाली कमचियाँ मुँह के भीतरी भाग में घुसा दी जाती हैं।

किनारे को मढ़नेवाली कमचियों को, व्यवहार करने के पहले जल में डुबो लेना चाहिए और तब मुँहवाले भाग को दाहिनी ओर से मढ़ना चाहिए। मुँहवाले भाग केवल घुमावदार ही मढ़े जाते हैं।

किनारे को घेरनेवाली कमचियाँ पहले पतली बनाई जाती हैं, जो घुमावदार मुँह की ओर होती हैं। बाद, वे चौड़ी बनाई जाती हैं, जो मुँह के पृष्ठ भाग में होती हैं। इस प्रकार बनाया गया किनारा अधिक सुन्दर होता है।

इस बात की सावधानी बरती जानी चाहिए कि घुमावों के बीच रिक्त स्थान नहीं रहे और प्रत्येक घुमाव एक ही प्रकार के कोण बनावे, अर्थात् वे सब एक दूसरे के समानान्तर हों। किनारे पर लगी सामग्री को अंगरेजी अक्षर S के रूप में मढ़ते हैं। इस विधि से मढ़ने के कारण ऊपर से लगाई गई कमचियाँ ढीली नहीं होंगी। जालीदार बुनाई में प्रवेश कराकर ही किनारे मढ़नेवाली कमची के दोनों छोरों को लगाते हैं।

सूप

सूप भी उन्हीं कामों में व्यवहृत होता है, जिन कामों में चावल धोनेवाली टोकरी व्यवहृत होती है। इन दोनों के बनाने की सामग्री को एक-दूसरे में बदल देना बहुत ही आसान है, क्योंकि दोनों के लिए एक ही प्रकार की सामग्री लगती है।

यह सूप ६ प्रकार का होता है और बाहर भेजने के लिए लम्बाई में एक साथ पैक किया जाता है। २५ सबसे बड़े, ३० मझोले में सबसे बड़े, ३५ साधारण मझोले, ४० मझोले में सबसे छोटे, ४५ छोटे, ५० सबसे छोटे सूपों को एक साथ पैक किया जा सकता है।

नोट—पाँच इच और छह इच व्यासवाले बाँस से एक बड़ा सूप और छोटे आकार की सुपलियाँ तैयार होती हैं। एक ही आकार का मुँह बनने से ये सुपलियाँ सुन्दर दीखती हैं ओर बडी, मझोली तथा छोटी आकारवाली सुपलियाँ, एक सेट बनने से, बाहर भेजने मे बहुत सुविधाजनक होती हैं।

बालू रखने की टोकरी

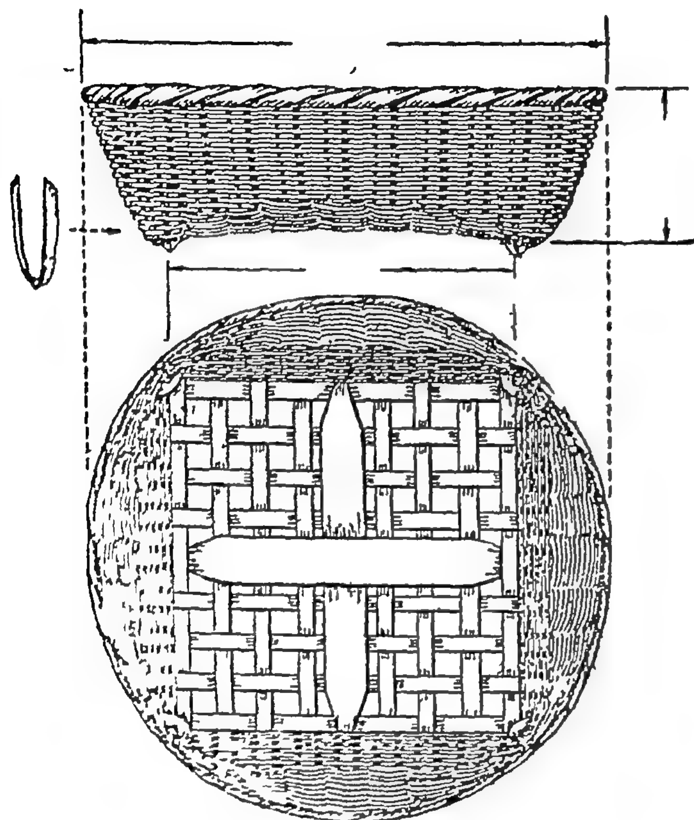
चित्र १४३ मे प्रदर्शित बुनावट इस प्रकार की टोकरी का भी एक प्रकार है। यह कभी-कभी सब्जी अथवा अनाज रखने में भी व्यवहृत होती है।

यह टोकरी भी मोटे तरीके से बनी एक प्रकार से अन्य तरह की टोकरियो-जैसी ही है। लेकिन, इसकी मजबूती अधिक होती है। इसके बनाने की विधि भी अन्य टोकरियो के समान ही होती है। दूसरी टोकरियो से इसके बनाने की विधि में थोडी-बहुत जो भिन्नता है, वह नीचे दी जाती है—

बाँस की तैयारी—पहले जिन टोकरियो की चर्चा की गई है, वे 'चाभ' बाँस से बनाई जाती हैं। यह टोकरी अधिक मजबूत तब होती है, जब 'हरौती' बाँस से बनती है।

इसके बुनने मे इस बात की सावधानी बरती जानी चाहिए कि बाँस की बनी सामग्री की गिरहें टोकरी के गोलाकार अथवा टेढे भाग में आ जावे, अन्यथा टोकरी बनाना बहुत कठिन हो जायगा। बाँस की गाँठ को ऐसा काटना चाहिए, जिससे वह बनानेवाली सामग्री के छोर पर आवे। उसके बाद उसे छुरी से चीरना तथा फाडना चाहिए, जिसकी प्रक्रिया चित्र १४२ में दिखाई गई है।

वर्गाकार जालीदार पेंदेवाला कार्य—पेंदे को वर्गाकार जालीदार बुनाई से बुनते हैं और गोलाकार तथा पार्श्वों को साधारण बुनाई से। इसका नमूना चित्र १४४ में प्रदर्शित है।



(चित्र १४४)

वर्गाकार पेंदे, फूल-पेंदे, जालीदार पेंदे और झुरी पेंदे की बुनाई से तैयार टोकरियों के पार्श्व के भाग देखने में विभिन्न प्रकार के लगते हैं।

इस बुनाई की बनी टोकरी, जिसके पेंदे तथा टेबुल के बीच रिक्त स्थान होता है, पानी को बाहर निकालने में अथवा चलनी के रूप में व्यवहृत होती है।

बड़ी चलनी

यह चलनी पानी बाहर करके

दिखाया गया है। १ इंच से ½ इंच व्यासवाले गोल गिरहदार बाँस लेकर उसे बुनाई में, फ्रेम के सामान के साथ-साथ किनारे के घेरे तक घुसेड़ देते हैं। पाँव लगाने की दूसरी विधि यह है कि चीरे हुए बाँस को बुनाई में घुसेड़कर दो-तीन भाग तक बाँध देते हैं।

मुट्ठे लगाना—जब टोकरी में मुट्ठा लगा दिया जाता है, तब उसका वही काम हो जाता है, जो चावल रखनेवाली टोकरी का होता है। ऐसी हालत में वेणी-गुम्फन बुनाई तथा बाँस को कई भागों में विभक्त कर और उन भागों को एक साथ लगाकर किनारे को पूरा करना आसान होता है। निम्नलिखित बातें विशेष द्रष्टव्य हैं—

(१) फ्रेमवाली कमचियों को बहुत पतला बनाना चाहिए।

(२) समकोण बनाते हुए मोड़ना चाहिए।

(३) किनारे को वर्गाकार रूप में पूरा करते हैं। किनारे की सभी कमचियाँ, पूरा करने के पूर्व, गरम लोहे द्वारा मोड़ दी जाती हैं। इसके लिए पृष्ठ १६० में लिखित मोड़ने की विधियों के साथ चित्र १४६ देखना चाहिए।

वर्गाकार जालीदार बुनाई के द्वारा वर्गाकार वस्तुओं का निर्माण

इस तरह की वस्तुओं के निर्माण के लिए फ्रेमवाली कमचियाँ अत्यन्त पतली हों और उनकी जालीदार बुनाई, जिसकी जाली अत्यन्त छोटी-छोटी हो, को वर्गाकार बुनाई कहते हैं। गोलाकार भाग ताप द्वारा मोड़े जाते हैं और पेंदे के समान ही बुनाई के सामानों द्वारा पार्श्व की बुनाई होती है।

कमची को कई भागों में चीरकर उन भागों को एक साथ मिलाकर उन्हें बाँधकर किनारा तैयार किया जाता है। किनारे को एक बार या लगातार कई बार मढ़ते हैं। इस कार्य में महत्त्वपूर्ण बातें निम्नलिखित हैं—

फ्रेम की कमचियाँ पतली तैयार की जाती हैं। लकड़ी के घन पर एक औजार के द्वारा कमचियों को खींचकर पतला बनाया जाता है, जो पूर्व के पृष्ठ ८६-८७ में बताया जा चुका है। फ्रेम की कमचियाँ सूखी हों। एक ही समय बहुत-सी फ्रेमवाली कमचियाँ बनाने के लिए चित्र ३३ में दिखाये गये ढंग से चीरने की विधि व्यवहृत होती है।

आयताकार पेटी

पुस्तक अथवा वस्त्र रखने के लिए आयताकार पेटी बनाई जाती है। साँचे का आकार चित्र १४५ में दिया गया है। इस साँचे के द्वारा कमचियों की लम्बाई निश्चित की जाती है, और उन्हें मोड़ने में सुविधा होती है। आगे चित्र १४६ में बड़े आकारवाली पेटी के पेंदे की बुनाई दिखाई गई है, जिसमें मोड़ने की प्रक्रिया के साथ मोड़ का स्थान-निर्देश किया गया है। इसके अनुसार पेटी और उसके ढक्कन के आकार में आध इंच से ५/८ इंच का भेद पड़ता है।

किनारा समाप्त करने के पहले सिरे की कमचियों तथा किनारे की कमचियों को मोड़ लेना चाहिए। मोड़ने का चिह्न आगे लिखे गये ढंग से होना चाहिए—

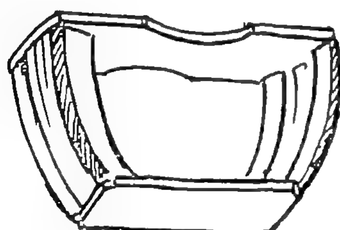
पत्रों और अखवारो को रखने के लिए पेटी और वडे आकार की 'वस्त्र-पेटी' तथा छोटे आकार की पेटी भी वनाई जाती है। इस प्रकार की पेटियाँ वनाने के लिए धब्वेदार वाँस या रँगे हुए वाँस का व्यवहार करते हैं।

सामान्यतः पेटी का ढक्कन वाँस के त्वचावाले भाग की कमचियो से और पेटी के नीचे का भाग वाँस के भीतरवाले अ श की कमचियो से वनाये जाते हैं। पेटी का आकार सुन्दर हो, इसके लिए उसके ढक्कन का वीचवाला भाग उठा हुआ वनता है और पेटी के पेंदेवाला खोखला।

इस प्रकार, भिन्न-भिन्न आकृति की, वाजार करने की, पेटियाँ वनाई जा सकती हैं। चिट्ठी-पत्री रखने के लिए जिस विधि से पेटियाँ वनाई जाती हैं, उसी विधि से ऐसी पेटियाँ भी वनती हैं। चित्र मे दिया गया साँचा वर्गाकार साँचे से कुछ भिन्न हे। किन्तु, वनाने की पद्धति म कोई अन्तर नही है। साँचे के व्यवहार से वस्तुओ के आकार-प्रकार सुव्यवस्थित रहते हैं। इस साँचे के सहारे आकृति जल्दी-जल्दी ठीक की जा सकती है और वस्तुएँ अधिक सख्या में तैयार की जा सकती हैं।

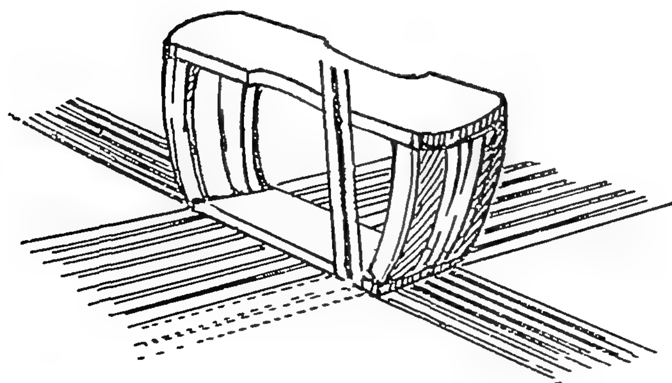
कमचियों को तैयार करने की विधि —बुनाई की कमचियाँ फ्रेम की कमचियो के समान एक ही वार वना ली जाती हैं। इन कमचियो के लिए जो वाँस व्यवहार मे लाया जाना चाहिए, उसका व्यास ६ इच हो और उसकी गिरहें दूर-दूर पर हो।

पेंदे की बुनाई—पेंदे की बुनाई सुपली की बुनाई के समान ही होती है। उसका, तैयार हो जाने के वाद का, आकार ऊपर दिया गया है।



(चित्र १४७)

ताप से मोडना—जब पेंदे की बुनाई खत्म हो जाती है, तव जिन भागो को मोडना रहता है, वहाँ पेंसिल से स्केल के सहारे चिह्न कर देते हैं और वही से उन्हें मोडते हैं। गरम लोहे के व्यवहार से कमचियो को मोडना चाहिए। इस वात की



(चित्र १४८)

किनारे की कमची की चौडाई सिरे की कमची के बराबर होती है, और उसमे बुनाई की कमचियो की चौडाई जोड देते है। किनारे की भीतरी और बाहरी तथा सिरे की कमचियो को मिलाकर वॉध देते हैं और आखिर मे वेत से भी वॉध देते हैं। इसे चित्र १५० मे दिखाया गया है, और फिर चित्र १५१ मे निखरा हुआ वन्धन दिखलाया गया है। चित्र १५० के अनुसार किनारे को सुन्दर रूप देने के लिए, उपरी भाग मे, पतली गोलाकार कमचियो को चारो ओर से वेत लपेटकर स्थान स्थान पर वॉध देते हैं। इस कार्य से उपरी भाग मजबूत ओर सुन्दर हो जाता है।

चित्र १५१ म बुनाई की कमचियो को घुमाने के बाद वेत से सिरे को वॉध देते हैं। ऐसा करते समय वाहर से भीतर की ओर घुमाव देते हैं। जब घूमकर फिर प्रथम स्थान पर आ जाते हैं, तव वेत के सिरे को प्रथम दोनो घुमाव मे डालकर जकड देते हैं।

वस्त्र रखने की टोकरी

यह टोकरी कई आकार की बनाई जाती है। एक प्रकार की टोकरी को, एक छोटी और वडी मिलाकर, एक सेट तैयार किया जाता है। दूसरे प्रकार की टोकरी, जिसे कागज रखने की टोकरी कहते हैं, के ढक्कन तथा अन्य भाग का एक सेट एक बार तैयार किया जाता है। वस्त्रवाली टोकरी की सामान्यत लम्बाई वही होती है, जो सयाने लोगों के कपड़ो को चौपत देने पर उनके रखने के योग्य हो सके।

इसकी भी बनावट प्रायः वही है, जो कागज-पत्र रखनेवाली टोकरी की होती है। केवल भिन्नता यही है कि इसके पेंदे मे मजबूती के लिए ऊपर से वॉस जोडने पडते हैं।

इस काम के लिए बाँस का चुनाव—इस पेटी के फ्रेम तथा बुनाई की कमचियों की चौडाई कुछ ज्यादा होती है। इसलिए, इसमें ७ इच व्यासवाला वॉस व्यवहार किया जाना उत्तम होता है।

वर्गाकार बुनावट की टोकरी

बुनाई की अत्यन्त पतली कमचियो से यह टोकरी बनाई जाती है। वर्गाकार जालीदार बुनाई की विधि से यह टोकरी तैयार होती है। जब यह बुनाई चारखाने के समान होती है, तव इसे 'चारखानेदार बुनाई' कहते हैं।

वर्गाकार बुनाई-पेंदे या वर्गाकार वाँस के कार्य के लिए बुनाई के दूसरे ही सामानो का व्यवहार किया जाता है, लेकिन यह 'चारखानेदार बुनाई' वाला पेंदा केवल फ्रेम के सामानो से बुना जाता है और तव मोडा जाता है। उसके वाद बुनाई के सामान को छोड-कर पार्श्व बुनाई करते हैं।

ये टोकरियाँ फ्रेमवाले सामानो से बनाई जाती हैं और इनका आधार फ्रेम के सामानो की लम्बाई तथा चौडाई द्वारा निश्चित किया जाता है।

जैसा चित्र १५३ मे दिखाया गया है, उसके अनुसार वर्गाकार टोकरी के प्रत्येक किनारे के केन्द्र से, केन्द्र तक की दूरी, पेंदे के किनारे की दूरी होती है। इस वात की

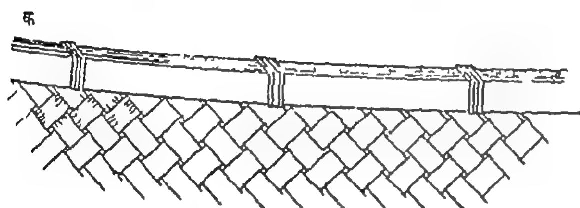
उसके बाद सभी कोनों पर दो या तीन बार बुनना चाहिए, अन्यथा टोकरी छिन्न-भिन्न हो जायगी। टोकरी की ऊँचाई ८ इच होती है। टोकरी के मुँह का व्यास इसके निचले भाग से थोडा छोटा होता है। तब टोकरी देखने मे अच्छी लगती है।

फ्रेम के सामान लगाने की विधि—वर्गाकार बुनाई की टोकरी मे फ्रेम के सामान को एक दूसरे के ऊपर करके बुनते हैं। इनके किनारे को काट देने पर भी ये नहीं टूटते। किन्तु, कीमती टोकरियो के लिए पूर्व के भाग मे लिखित ढग से ही किनारे को पूरा करते हैं।

किनारे को पूरा करना—यह टोकरी सबसे अधिक सस्ती होती है, इसलिए इसका किनारा चित्र ८६ के ऊपरी भाग के अनुसार और पार्श्व बुनाई चित्र १५२ मे प्रदर्शित ढग से पूरे किये जा सकते हैं। इसमे किनारे का बॉस जोडते हैं और मगजीवाले बॉस से प्रत्येक जाल को एक या दो बार मढते हैं।

खिलौने रखने की डलिया

इसकी बुनाई उपर्युक्त टोकरी की बुनाई से कही अधिक सरल है। सीखनेवालो को पहले इसी टोकरी के द्वारा वर्गाकार बुनाई सीखनी चाहिए।



(चित्र १५२)

बनावट—चित्र १५२ मे प्रदर्शित ढग से ही पेंदे की बुनाई पूरी करनी चाहिए। इसके किनारे बॉधने का काम विशेष रूप मे किया जाता है। कारीगर पेंदे में पेंसिल से चिह्न लगाकर उसके अनुसार वर्ग बना लेते हैं। इससे टोकरी का पेंदा स्पष्ट दिखाई पडता है।

चिह्न की हुई लाइनो पर मोडकर चारो पार्श्वों को बुनते हैं, और फिर सबको एक में मिला देते हैं। इसके अतिरिक्त किनारे पर की कमची जोड देते हैं और मगजीवाली कमची से प्रत्येक घर को बुनते हैं। उसके बाद मुट्ठे को जोड देते हैं।

बच्चे लाल, नीले, गुलाबी या भूरे रग से रगे बॉस की कमचियो की बनी डलिया को ज्यादा पसन्द करते हैं। इसलिए, ऐसी डलिया को रंगीन बनाना अधिक उपयुक्त है।

अन्य वर्गाकार बुनाईवाली टोकरियाँ

वर्गाकार बुनाई की अन्य टोकरियो के आकार फ्रेम बनाने के सामान की लम्बाई तथा चौडाई से तय किये जाते हैं।

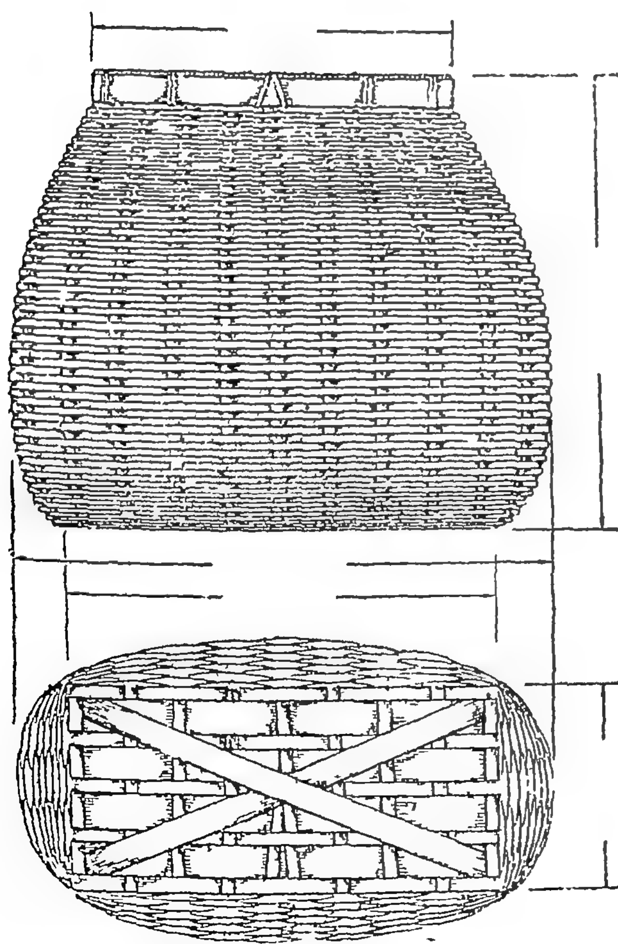
टोकरियो के बनाने की विधियाँ भी वे ही हैं, जो ऊपर मे बताई गई हैं।

पायेदार टोकरी—छोटे के आकार की मौनी (टोकरी) गृहस्थी के कामो मे बहुत

और जोड देना चाहिए अथवा केन्द्र मे स्थित फ्रेम की एक कमची को दो भागो मे बाँट देना चाहिए। पेंदा बुनने की कमचियाँ पतली होनी चाहिए, जो बुननेवाली अन्य कमचियों में से ही चुनी जाती हैं। पेंदे की बुनाई के कोनो पर दो या तीन बार घुमावदार मजबूत बुनाई करनी होती है। इससे बुनाई आसानी से हो सकती है।

गोलाकार बनाना—फ्रेम की कमचियो को मोडने के बाद गोलाकार बनानेवाले बाँस का व्यवहार करना चाहिए। पद मे अस्थायी रूप से बाहर से बाँस बाँध देते हैं। उसके बाद टोकरी को घुटने पर रखकर, बाये हाथ से फ्रेम की कमचियो को मोडते हुए करीब पाँच घुमाव बुनते हैं। तब इसका गोलाकार रूप स्वत हो जाता है।

इस बात की सावधानी रहनी चाहिए कि फ्रेम की कमचियाँ एक दूसरी से समान दूरी पर हों। किन्तु, कोनो पर फ्रेम की कमचियाँ एक-दूसरी से मिली हो और केन्द्र मे अलग-अलग हो।



(चित्र १५६)

बुनाईवाली सामग्री को जोडते समय गाँठवाले भागो पर 'चार बुनाई' की जाती है। अन्यथा टोकरी की बुनावट वही पर खराब हो जायगी।

पार्श्व-बुनाई—टोकरी के पार्श्वों को अगर थोडा चौडा करके बुना जाय, तो टोकरी देखने मे अच्छी लगेगी।

किनारे को पूरा करना—पूर्व के अध्याय मे निर्दिष्ट रीति से ही इस टोकरी के किनारे को भी पूरा करते है। इस पूर्ण-क्रिया में भी पहली ही विधि से फ्रेम की कमचियो को लगाना चाहिए और उसे वेणी-गुम्फन-बुनाई की विधि से पूरा कर लेना चाहिए।

गरदनवाले भाग को छोड़कर पार्श्व की बुनाई की जाती है। पार्श्व की बुनाई इस चित्र के निचले हिस्से में दिखाई गई है और गले की बुनाई ऊपरी हिस्से में।

बाँये हाथ में फ्रेम की कमचियों को दबा दबाकर तथा मोड़कर मजबूती से बुनना चाहिए। इसे फलक ८ वाले चित्र में देखा जा सकता है।

फ्रेम की कमचियों पर पानी छिड़क देना चाहिए, ताकि वह फूल सके और मुलायम रहे तथा बुने जाने पर भी कमचियाँ ढीली नहीं हों।

बुनाई की पतली-पतली कमचियों का व्यवहार करना चाहिए, अर्थात् वर्गाकार सामानों का व्यवहार सर्वोत्तम होता है। फ्रेम के सामानों को बाहर की ओर मोड़कर टोकरी को उलटकर धरती पर रख देते हैं और तब छाती से दबाकर बुनते हैं।

मछली रखने की टोकरी न० ३

यह टोकरी पहली और दूसरी विधि से बनी टोकरी से भिन्न होती है। उस टोकरी से इसका गला कुछ अधिक चिपटा होता है और किनारे की बुनाई एकबन्धनी होती है। चित्र में प्रदर्शित मछली रखने की यह टोकरी इस प्रकार की टोकरियों में सबसे बड़ी होती है। ऐसी टोकरी के लिए जो बाँस व्यवहार में लाया जाता है, उसकी त्वचा को हटा देते हैं और उसे हल्के भूरे रंग में रँग देते हैं। इसके बाद वर्गाकार पटा बुनाई के द्वारा पेंदे को पूरा करते हैं और पार्श्व-बुनाई करते समय अंगरेजी अक्षर X जैसे चिह्न के पास बुनाई की दूसरी कमचियाँ जोड़ी जाती हैं, ताकि पार्श्व के बीच का भाग फैला हुआ रहे। टोकरी की गरदन पर बाँस का घेरा लगा दिया जाता है। इस टोकरी की बुनाई पहले की टोकरियों की अपेक्षा सरल है।

मछली रखने की टोकरी न० ४

इसका भी स्वरूप पहलेवाली टोकरी के समान ही है, किन्तु इसकी आकृति उससे भिन्न होती है। यह टोकरी मछली रखने की टोकरियों में सबसे बड़ी, ऊँची तथा वर्गाकार होती है। इसमें एक भीतरी ढक्कन भी होता है, जिसमें मछली को गिराने के लिए छोटा-सा छेद रहता है। बाँस की केवल एक गाँठवाली बुनाई की कमचियाँ, गाँठों को छिपाने के लिए, इसकी बुनाई में व्यवहृत होती है तथा पार्श्व के बीचवाले भाग विभिन्न प्रकार के बनाये जाते हैं।

पीठ पर ले जाई जानेवाली मछली की टोकरी

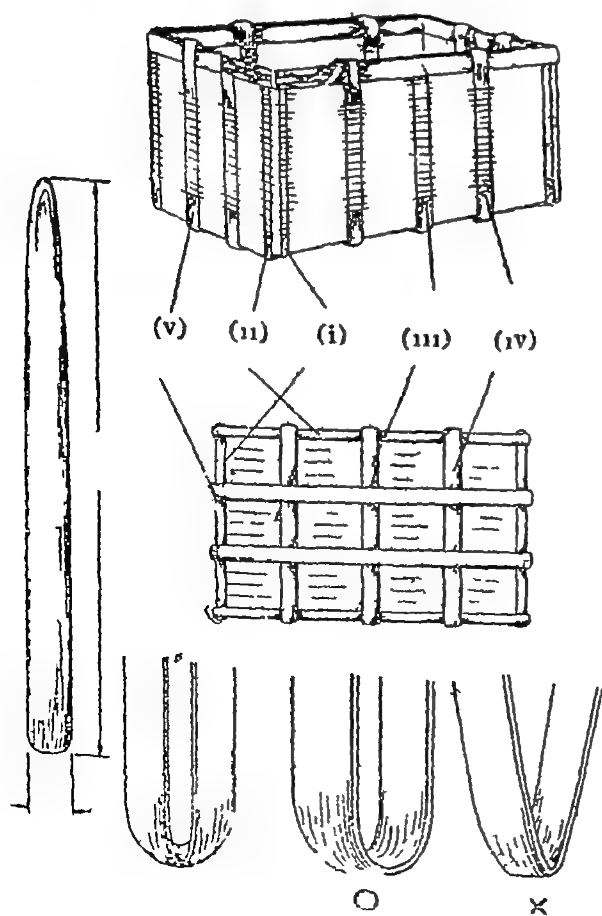
इस टोकरी के बुनने के कई तरीके हैं। यह टोकरी चित्र १५६ वाली टोकरी के सदृश ही होती है। केवल बाहरी भाग के आकार में थोड़ा भेद है। कृषक इस टोकरी में जलपान तथा भोज्य-पदार्थ भी रखकर खेतों पर ले जाते हैं। किसी तरह के खाद्य-पदार्थ ढोने के लिए यह अत्युत्तम है। यह उपर्युक्त न० ८ वाली टोकरी के समान ही समझी जाती है। इसके बुनने में भी कोई विशेष कठिनाई नहीं है। केवल बाहर से बाँस लगाना ही इसमें विशेष बात होती है, जिससे थोड़ा-सा भेद पड़ जाता है।

उन हिस्सों मे, जहाँ ऊपर से बाँस लगाया जाता है, दो समानान्तर बनाये गये भीतरी हिस्से मे बाँस को लगाना चाहिए, क्योंकि ये ऊपर से लगाये गये चौडे बाँस से छिप जाते हैं। अन्य भागो मे त्वचा-युक्त पेंदे का बाँस व्यवहार किया जाता है।

पेंदे के लिए बुनाई का सामान—एक मत चौडी 'दो-बुनाई' की कमचियों से निम्न-लिखित बुनाई दो या तीन घुमाव तक करते हैं और तब बाहर लगाये जानेवाले अस्थायी बाँस को व्यास के रूप मे लगाते हैं। उसके बाद गोलाकार बनाने के लिए मजबूती से कस-कसकर बुनते हैं।

पार्श्व-बुनाई—पहले छोटी टोकरी के लिए बुनाई की चौडी कमचियो को पाँच घुमाव और बडी टोकरी के लिए आठ घुमाव बुनते हैं। बुनाई के द्वारा ही पेंदे का आकार निश्चित किया जाता है। किनारा बुनाई अथवा पार्श्व-बुनाई इसी आकार-प्रकार पर निर्भर करती है।

प्रत्येक घुमाव मे नया सामान व्यवहार करना पडता है। इसलिए, टोकरी के छोटे पार्श्व में, चार किनारों को और चार छोरों को, फ्रेम बनानेवाले सामान के भीतर मोड दिया जाता है। इसके साथ ही एक ही बाँस का बना सामान व्यवहार करने से गिरहें एक ओर भीतर चली जाती हैं और इससे टोकरी देखने मे अच्छी लगती है।

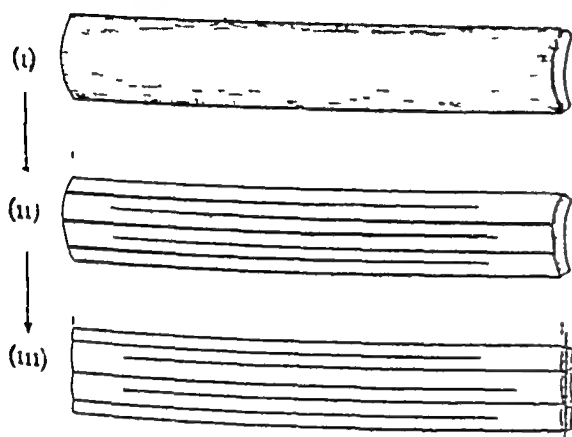


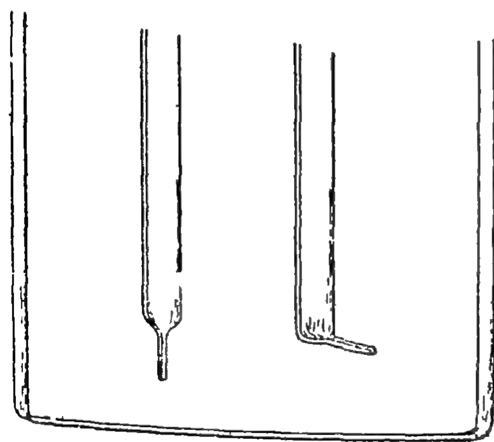
(चित्र १५७)

किनारे के नीचे—पार्श्व-बुनाई पूरी हो जाने पर, बाँस के भीतरी भाग की बुनाई के १/४ सामान से किनारे के नीचे तीन घुमाव बुनना चाहिए। उसके बाद किनारे की बुनाई के पास से फ्रेमवाली कमचियो को काट देना चाहिए, क्योंकि इस प्रकार की टोकरी का किनारा बाहरी बाँस के पेंदे से लगाकर मजबूत बना दिया जाता है, जिससे किनारा नही टूटता।

किनारे के नीचे, चारों कोनो पर, चित्र १५७ में प्रदर्शित ढग

चित्र १५८ के अनुसार पेंदेवाली सामग्री से तथा फ्रेमवाली कमाचियों से भी पद को बुनना चाहिए। चारों पार्श्व बुनाई की कमाचियों से बुने जाते हैं तथा कुटकी बाँस से पेंदे को बुनते हैं। कुटकी के छोरों को बाँस के फ्रेम से चारों तरफ छिपा देते हैं। इस कारण, इस टोकरी के बनाने के लिए बाँस को ठीक आकार में पहले ही काट लेते हैं और तब बनाते हैं।





(चित्र १५९)

इसकी बुनाई बाँस से बननेवाली सभी वस्तुओं की बुनाई से सरल होती है। अच्छे कारीगर द्वारा बुने जाने पर ये थोंग भी अच्छी दीख पड़ती हैं। चित्र १५८ में रद्दी कागज रखने की एक टोकरी दिखाई गई है।

फ्रेम का सामान--कुटकी बुनाई में कभी कभी फ्रेम बनानेवाले सामान को पतली कमाचियाँ कहते हैं। कुटकी बाँस के समानान्तर ही फ्रेम बनाने के सामान को भी लगाते हैं। पेंदा बनाने के लिए फ्रेमवाले इस सामान को तिरछे लगे फ्रेम के सामानों के द्वारा बीच से दबा दिया जाता है। सभी फ्रेमवाली कमाचियों को ताप द्वारा मोड भी देते हैं। ताप द्वारा मोडने की प्रणाली पहले बतलाई जा चुकी है।

कुटकी बाँस--चित्र १५९ में दिखाई गई रीति के अनुसार बाँस को दाहिनी ओर से तीन भागों में बाँटते हैं। लेकिन, उसके दोनो छोर जुटे ही रहते हैं। फिर, उन विभक्त भागों को दो-दो भागों में बाँट देते हैं, लेकिन उनका भी छोर सटा ही रहना चाहिए।

उसके बाद इस बाँस को ईप्सित मुटाई में चीर लेते हैं। इन चीरों को रँग देने पर टोकरी देखने में बहुत सुन्दर लगती है।

कोने पर के बाँस--कभी-कभी इस बाँस को 'टेढा बाँस' कहते हैं। इसे भी चित्र १५९ के निचले भाग में दिखाया गया है। यह बाँस सिरे पर एक से डेढ इंच लम्बाई में मोटा गया है और तब डेढ सूत चौडा काटकर कोनो पर घुसेड दिया जाता है।

वाले बाँस के सिरों को पतला बना देते हैं। बाद, बाँधने के समय उसे काट देते हैं। इसके अतिरिक्त भीतरी तथा बाहरी किनारों को मोड़ देते हैं। इतनी क्रिया समाप्त होने के बाद मध्य किनारे के तथा कोने के बाँस में छेद करके उनमें काँटी ठोक देते हैं। भीतरी भाग में रखनेवाली चीजों की सुरक्षा के लिए मोटा कागज या कपड़ा साट देना आवश्यक है।

बाजार करने की टोकरी

यह पेटी ढक्कन और मुट्ठे के साथ बनाई जाती है। दूकान से वस्तुएँ खरीद करने में इसका व्यवहार सुविधाजनक होता है। महिलाएँ अधिकतर इसे व्यवहार में लाती हैं।

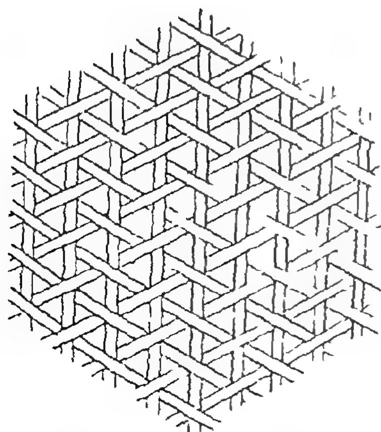
उपर्युक्त रद्दी कागज रखनेवाली टोकरी के बनाने की समस्त प्रक्रिया इसमें भी लागू होती है। अन्तर केवल यही है कि इसमें एक ढक्कन होता है और पकड़ने के लिए मूठ भी लगाई जाती है।

षट्कोण जालीदार बुनाई— इस बुनाई का जाल षड्भुजाकार होता है, इसलिए इस बुनाई को षट्कोण जालीदार बुनाई कहते हैं। बहुतायत ऐसी टोकरियाँ, प्रायः सभी कार्यों में व्यवहृत होती हैं और इनकी बुनाई अनेक प्रकार की बनी अन्य वस्तुओं के बनाने के काम में आती हैं। पहले-पहल फ्रेम खड़ा करने या बुनाई के काम की प्रक्रिया चित्र १६१ के अनुसार लागू होती है।

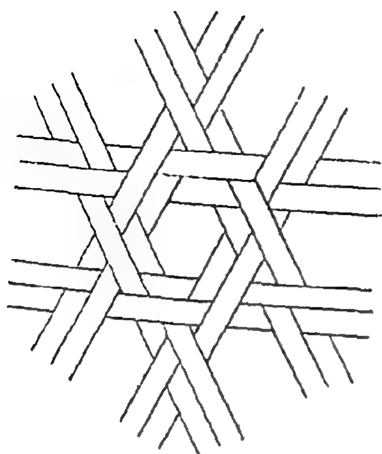
कार्य के हिसाब से इन टोकरियों का निम्नलिखित रूप में वर्गीकरण होता है—

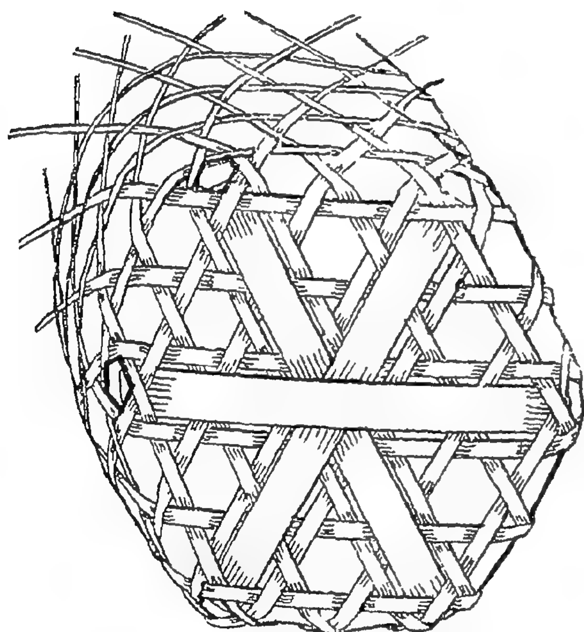
(१) **षट्कोणवाले फ्रेम का बना टोकरियाँ**—(क) साधारण कोण के फ्रेमवाली। (ख) अंडाकार, जिसमें पेंदे की बुनाई होती है। (ग) कोन मारकर बनाई गई। (घ) सर्प टोकरी।

(२) **षट्कोण जालीदार को ढकने या भरनेवाली बुनाई**—(क) पट्टा के पत्ते की बुनाई, जिसमें एक जालीवाला ढक्कन होता है। (ख) पट्टा के पत्ते की बुनाई, जिसमें दो जालीवाला ढक्कन होता है। (ग) सर्वसाधारण पट्टा के पत्तेवाली सादी बुनाई।



(चित्र १६२)


(चित्र १६७)


(चित्र १६६)

कमचियों का एक दूसरी के आमने-सामने पार करते समय ऊपर तथा नीचे लगाते जाना चाहिए।

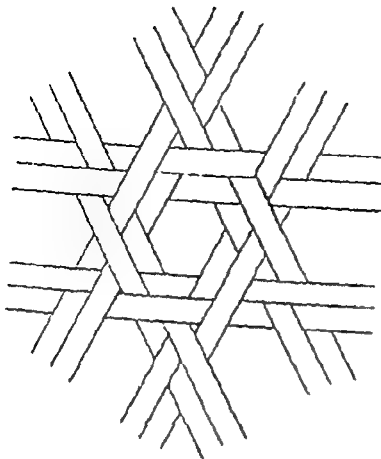
षट्कोण फ्रेम की गोलाकार पार्श्व-बुनाई—यह ऊपर मे बताया जा चुका है कि षट्कोण जालीदार बुनाई केवल चारस बुनाई है। टोकरी बनाने के लिए पार्श्व बुनाई आवश्यक है। उसकी विधियाँ नीचे दी जाती है—

(क) पेंदे मे अस्थायी रूप से बाहरी बाँस घुसेडते हैं। चित्र १६६ में दिखाये गये तरीके से ये अस्थायी बाहरी बाँस घुसेडे जाते हैं और वैसा करने मे पेंदे का केन्द्र-भाग चौरस के बजाय पतला कर दिया जाता है। इसका परिणाम उत्तम होता है।

(ख) गोलाकार बुनाई करने के पूर्व फ्रेम की कमचियो को कोने पर मोड लेते हैं। यह बात भी पहले ही बताई जा चुकी है।

(ग) उसके बाद फ्रेम की कमचियों को मोडकर पेंदे के समान ही बुनाई की कमचियों से इसे बुनना चाहिए। जब गोलाकार बुनाई पूरी हो जाय, तब पेंदे के षट्कोण के प्रत्येक पचमुख जाली में षड्भुजाकार जाली बन जायगी। उन पचभुजाकार जाल के ६ फ्रेम पर षड्भुजाकार जाल बनाये जाते हैं और अगर जाल यथासभव छोटे हुए, तो गोलाकार बनाया जाना बहुत सुन्दर लगेगा। इस विधि की सारी चीज चित्र १६६ में देखी जा सकती हैं।

(घ) बुनाई की कमचियो को लगातार जोडवाले भागो के करीब तीन इच ऊपर मोड देते हैं और उन्हें फ्रेम की कमचियो मे घुसेड देते हैं।



(चित्र १६७)

(चित्र १६६)

कमचियों को एक दूसरी के आमने-सामने पार करते समय ऊपर तथा नीचे लगाते जाना चाहिए।

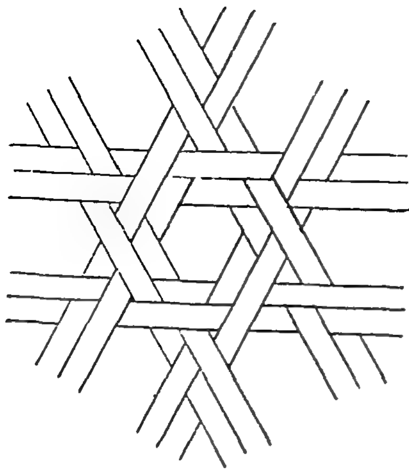
पट्कोण फ्रेम की गोलाकार पार्श्व-बुनाई—यह ऊपर मे बताया जा चुका है कि पट्कोण जालीदार बुनाई केवल चौरस बुनाई है। टोकरी बनाने के लिए पार्श्व बुनाई आवश्यक है। उसकी विधियाँ नीचे दी जाती है—

(क) पेंदे मे अस्थायी रूप से बाहरी बाँस घुसेड़ते हैं। चित्र १६६ मे दिखाये गये तरीके से ये अस्थायी बाहरी बाँस घुसेड़े जाते हैं और वैसा करने में पेंदे का केन्द्र-भाग चौरस के बजाय पतला कर दिया जाता है। इसका परिणाम उत्तम होता है।

(ख) गोलाकार बुनाई करने के पूर्व फ्रेम की कमचियो को कोने पर मोड़ लेते हैं। यह बात भी पहले ही बताई जा चुकी है।

(ग) उसके बाद फ्रेम की कमचियो को मोड़कर पेंदे के समान ही बुनाई की कमचियो से इसे बुनना चाहिए। जब गोलाकार बुनाई पूरी हो जाय, तब पेंदे के पट्कोण के प्रत्येक पचमुख जाली में षड्भुजाकार जाली बन जायगी। उन पचभुजाकार जाल के ६ फ्रेम पर षड्भुजाकार जाल बनाये जाते हैं और अगर जाल यथासम्भव छोटे हुए, तो गोलाकार बनाया जाना बहुत सुन्दर लगेगा। इस विधि की सारी चीज चित्र १६६ में देखी जा सकती है।

(घ) बुनाई की कमचियो को लगातार जोड़वाले भागो के करीब तीन इन्च ऊपर मोड़ देते हैं और उन्हें फ्रेम की कमचियों में घुसेड़ देते हैं।



(चित्र १६५)

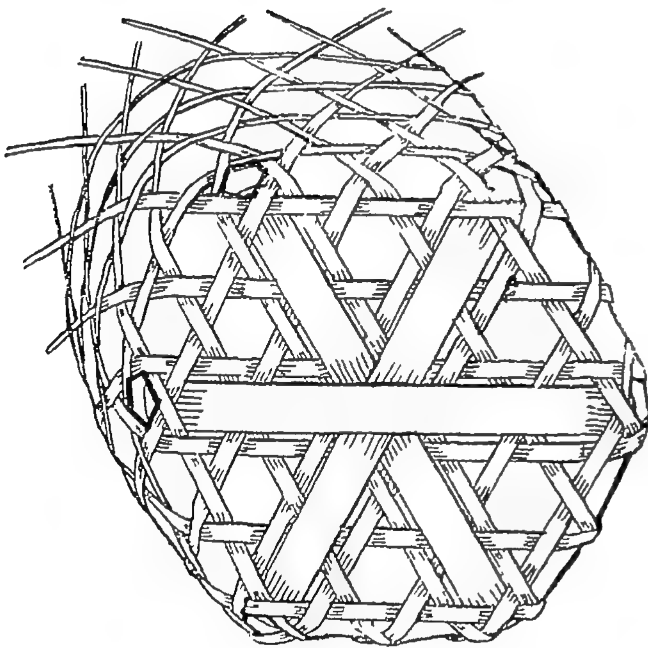


कमचियों को एक दूसरी के आमने-सामने पार करते समय ऊपर तथा नीचे लगाते जाना चाहिए।

षट्कोण फ्रेम की गोलाकार पार्श्व-बुनाई—यह ऊपर में बताया जा चुका है कि षट्कोण जालीदार बुनाई केवल चारस बुनाई है। टोकरी बनाने के लिए पार्श्व बुनाई आवश्यक है। उसकी विधियाँ नीचे दी जाती है—

(क) पेंदे में अस्थायी रूप से बाहरी बाँस घुसेडते हैं। चित्र १६६ में दिखाये गये तरीके से ये अस्थायी बाहरी बाँस घुसेडे जाते हैं और वैसा करने में पेंदे का केन्द्र-भाग चौरस के बजाय पतला कर दिया जाता है। इसका परिणाम उत्तम होता है।

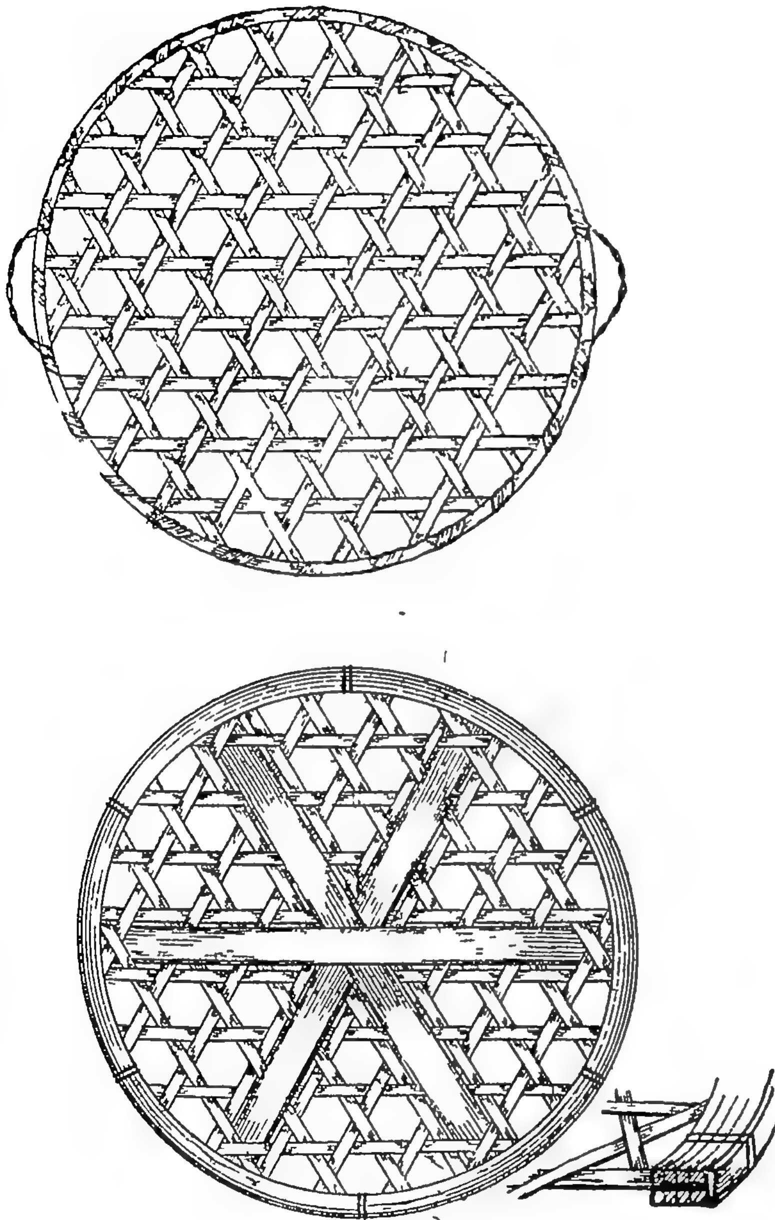
(ख) गोलाकार बुनाई करने के पूर्व फ्रेम की कमचियों को कोने पर मोड लेते हैं। यह बात भी पहले ही बताई जा चुकी है।



(चित्र १६६)

(ग) उसके बाद फ्रेम की कमचियों को मोडकर पेंदे के समान ही बुनाई की कमचियों में इसे बुनना चाहिए। जब गोलाकार बुनाई पूरी हो जाय, तब पेंदे के षट्कोण के प्रत्येक पचमुख जाली में षड्भुजाकार जाली बन जायगी। उन पचभुजाकार जाल के ६ फ्रेम पर षड्भुजाकार जाल बनाये जाते हैं और अगर जाल यथासंभव छोटे हुए, तो गोलाकार बनाया जाना बहुत सुन्दर लगेगा। इस विधि की सारी चीज चित्र १६६ में देखी जा सकती हैं।

(घ) बुनाई की कमचियों को लगातार जोडवाले भागों के करीब तीन इंच ऊपर मोड देते हैं और उन्हें फ्रेम की कमचियों में घुसेड देते हैं।



(चित्र १६७)

पूर्ण हुए छोर को, बाहरी किनारेवाले बाँस पर दो घुमाव बनाकर, जकड़ दिया जाता है। इसके अतिरिक्त ऐसी भी टोकरियाँ हैं, जिनमे सर्वत्र षट्कोण जाल बनाये जाते हैं।

गोलाकार वाष्प-स्थाली

चित्र १६७ मे यह स्थाली दिखाई गई है। यह शकरकद तथा चावल का पिट्ठा उबालने के काम म आती है। उबालने की प्रक्रिया यह है कि पहले चूल्हे पर एक बटलोही मे पानी रखकर नीचे से आग जलाते हैं। फिर, बटलोही के मुँह पर इस स्थाली को रख देते हैं और तब इसमें उबालनेवाला सामान सजा देते हैं। बटलोही में रखे गरम पानी के वाष्प से कुछ देर मे सामान पक जाता है। स्थाली का आकार बटलोही के मुँह क आकार से निश्चित किया जाता हे। स्थाली के पदे का व्याम बटलोही के मुँह के व्यास के बराबर होना चाहिए।

निर्माण—केवल चौरस षट्कोण जाल बुनकर गोलाकार बना देत हैं।

(१) घुमाववाले ढग से किनारा पूरा करने के लिए किनारे का घेरा स्थाली के आकार के अनुसार बनाते हैं और उसे चौरस बुनाई पर रख देते हैं। फ्रेम के सामान के

गोलाकार पार्श्व-बुनाई—बाहरी बाँस घुसेटकर गोलाकार बुनना चाहिए और पार्श्व में ६ चरण तक बुनकर ५ इंच ऊँचा बुनना चाहिए।

पटुए के पत्ते जैसी बुनाई—चित्र १६८ (क) वाले चित्र में सिरे की बुनाई के बाहरी फ्रेम की कमचियों के भाग घुमाकर भीतर मोड़ दिये गये हैं और षट्कोण जाल के मध्य से समानान्तर में फ्रेम की कमचियाँ ले जाई गई हैं। फिर, (ख) में भीतर के फ्रेम की कमचियाँ बाहर मोड़कर जाल के मध्य तक बाईं ओर ले जाई गई हैं। इसके पूर्व ही (क) के फ्रेम की कमचियों को प्रत्येक जाल के बीच में घुमा दिया गया है। इसलिए, यह बुनाई पटुए के पत्ते जैसी लगती है।

पेंदे का किनारा—फ्रेम की कमचियाँ, जो पेंदे की बुनाई से ऊपर तक ही रहती हैं, दो चरण बुनी जाती हैं और अन्तिम चरण नीचेवाले पेंदे के किनारे के लिए व्यवहार होता है। पेंदावाला हिस्सा उक्त चित्र के (ग) वाले भाग में प्रदर्शित है।

सामान्य रीति से फ्रेम की कमचियों को लगाते हैं अथवा मढ़ाईवाली कमचियों से घुमाव देकर भी फ्रेम की कमचियाँ लगा देते हैं।

मढ़ाईवाली कमचियों के ८ प्रथम छोर में नीचेवाले किनारे के बाँस को दो घुमाव बुनते हैं। पश्चात्, भीतरी किनारे का एक घुमाव बुनने के बाद मढ़नेवाली कमचियों में बाहरी किनारे-वाला बाँस जोड़ दिया जाता है और तब कमचियों को बाहरी बाँस के बीच लगाया जाता है। उसके बाद किनारे की घुमावदार बुनाई में उसे घुसेड़ दिया जाता है।

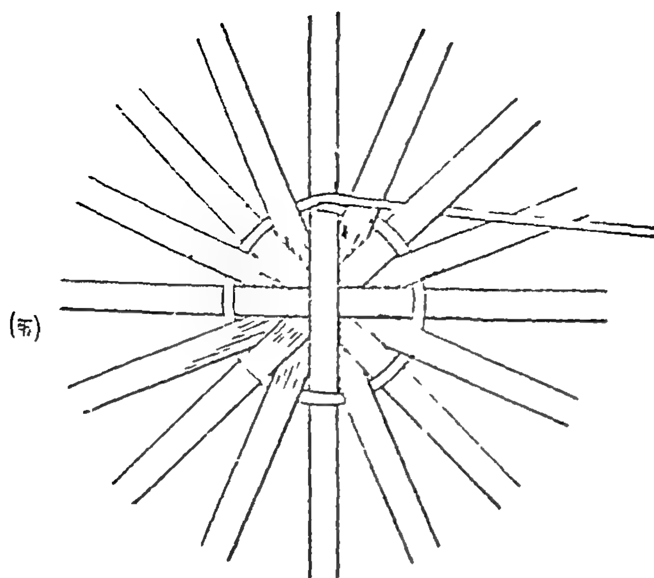
क

ख

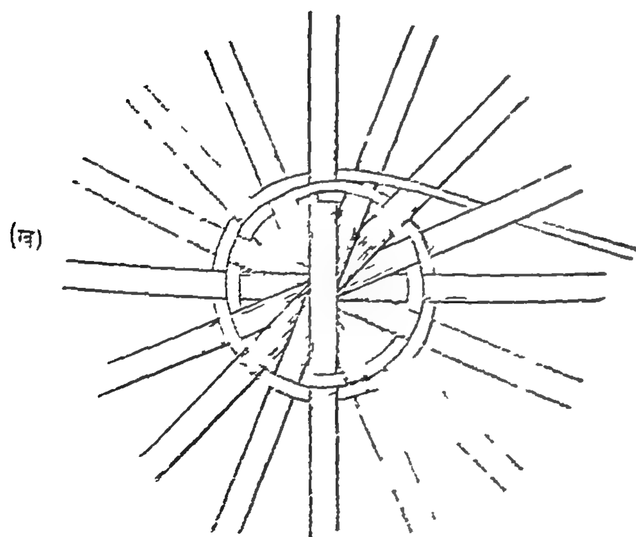
ग

(चित्र १६८)

(क)



(ख)



(चित्र १६६)

को काटकर हटा देते हैं। बुनाई को आसान बनाने के लिए सर्वप्रथम बाँस के, त्वचा से नीचे, बाय भाग को थोड़ा काटकर पतला बनाकर बुनाई की कमचियाँ बनाते हैं और केन्द्र में फ्रेम की कमचियों को उस स्थान पर पतला काटते हैं, जहाँ मोड़ करना होता है।

फ्रेम की कमचियाँ व्यास के रूप में लगाई जाती हैं और परिधि पर उनकी संख्या सम होती है। एक कमची से जालीदार पिंजड़ा बुनाई नहीं हो सकती। एक ही बुनाई की कमचियों में निम्नलिखित तरीके से यह बुनाई की जाती है —

(१) बुनाई की कमची एक भाग में फ्रेम की दो कमचियों के ऊपर होकर जाती है।

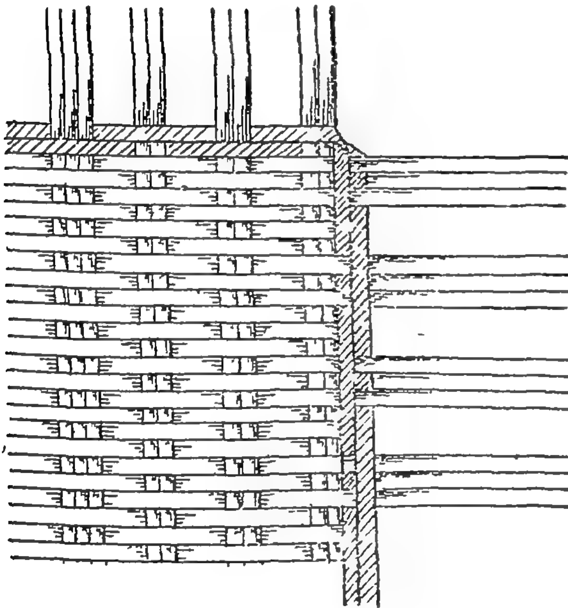
(२) फ्रेम की एक कमची को दो भागों में विभक्त कर देते हैं।

बनावट के खयाल से जब कमचियो का श्रेणीकरण किया जाता है, तब यह वर्गाकार जाल-बुनाई की वस्तुओ के समान होता है। श्रेणीकरण निम्नलिखित प्रकार से होता है —

(१) जाल-बुनाई पेंदावाली बुनाई में केवल पेदा ही इस विधि से बुना जाता है।

(२) जाल-बुनाई द्वारा वर्गाकार पेंदे के फ्रेम की कमचियाँ ताप द्वारा मोडी जाती हैं। फिर, अन्य बुनाई की कमचियो से पार्श्व बुने जाते है।

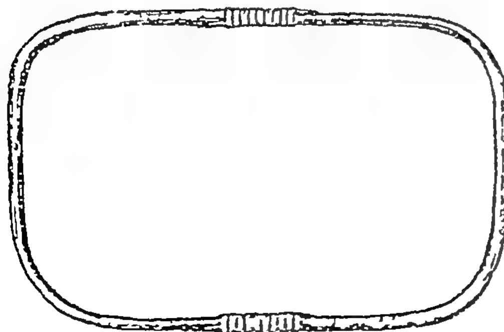
(३) जाल-बुनाईवाली टोकरी बुनाई के अन्य कमचियो का बिना व्यवहार किये पार्श्व-पेंदा बुनने की कमचियो से ही बनाया जाता है।



ऐसी टोकरियो के पार्श्व अधिकतर जालीनुमा पिंजडा-बुनाई द्वारा बुने जाते हैं। इसलिए इसके पार्श्व, वर्गाकार जालीनुमा पेंदा अथवा वर्गाकार पेंदा तथा फूल पेंदेवाली टोकरियो के ही समान दिखाई पडते है। लेकिन, इन टोकरियो को बनाना जरा कठिन होता है, क्योकि इनके पेंदे वर्गाकार और पार्श्व गोल बुने जाते हैं।

गोल बनाने के लिए कारीगर को पेंदे की बुनाई की कमचियो से मुलायम तथा कुछ अधिक चौडी और लम्बी कमचियाँ बनानी पडती हैं।

छोटी टोकरियो के लिए बुनाई का सामान एक ही चाहिए, लेकिन बडी के लिए ४ सूत मुटाई के बाँस से बनी दो कमचियाँ व्यवहृत होती हैं। तब उन कमचियो को 'पेंदा-बुनाई-सामग्री' कहते है। पेंदा बुनाई की सामग्री से बुनने की रीति यह है कि छोटी टोकरियो के लिए पेंदे को दो जालो के ऊपर बुनाई की कमचियाँ रखनी चाहिए।



(चित्र १७३)

पूर्णरूप से खोल दी जायँ, उस हालत में एंठना बन्द कर देते हैं और तब मुलायम कमचियों से बुनते हैं। एंठ करके बुनाई करीब १ २५ इंच १०-१५ घुमाव होती है और उसके बाद १ से १.५ इंच तक जालीनुमा पिंजड़ा बुनाई की जाती है।

ऐंठ कर बनाई गई (जाल-बुनाई को जाली-बुनाई (गोलाकार-क्रिया) में परिवर्तित करना—

ऐसी कुछ टोकरियाँ होती हैं, जो सिर्फ एंठकर जाल बुनाई से बुनी जाती हैं। परन्तु, सामान्यतः बुनाई को जालीनुमा-पिंजड़ा-बुनाई में परिवर्तित कर ही टोकरी गोलाकार बनाई जाती है। जब बुनाई को जाल-बुनाई से जालीनुमा-पिंजड़ा बुनाई में परिवर्तित कर दिया जाता है, तब कभी कभी पेंदा टेढ़ा हो जाता है। इसलिए, चारम बुनने की सावधानी बरती जानी चाहिए। कभी-कभी कोने को ठोककर भी पेंदे को ठीक किया जाता है।

गोलाकार बनाने में मोटे तथा लम्बे सामान से बुनाई की जाती है। ३ से ४ घुमाव बुनाई के बाद बाये हाथ से फ्रेम के सामान को मोड़ते हैं और मजबूती से बुनते हैं। इससे टोकरी गोलाकार हो जाती है। ६ या ७ घुमाव के बाद गोलाकार नहीं बनाया जाय, तो बुनाई बहुत ढीली हो जाती है।

मुट्ठेवाली कलात्मक चँगेरी

यह चँगेरी चित्र १७४ में प्रदर्शित है, जो उच्च कोटि की कलात्मक चँगेरी है। यह जाल-बुनाई के द्वारा बुनी गई है और इसमें आधारवाला तल्ला जोड़ा गया है। बनाने में यह चँगेरी अन्य टोकरियों से अधिक भिन्न नहीं होती है। इसके विशिष्ट भाग जो भिन्न होते हैं, वे निम्नलिखित हैं—

तल्ले को जोड़ना—(१) तल्ले के लिए फ्रेम की कमचियाँ गोलाकार ढंग से एक इंच भीतर लगाई जाती हैं। किनारे की पूर्ति के समय सामानों को दो भागों में विभक्त कर दिया जाता है। तल्ले के फ्रेमवाली कमचियाँ उसी बुनाई की कमचियों की जाली में लगाई जाती हैं।

(२) वर्गाकार कमचियों से तीन घुमाव बुनने के बाद गोलाकार बनाना आरम्भ किया जाता है।

(३) फ्रेम की कमचियों को बाहरी मोड़ से लगाते हैं।

(४) किनारवाला बाँस लगाते समय तल्ले का किनारा एक घुमाव बनाते हुए पूरा करते हैं।

मुट्ठे का बाँस—फ्रेम की कमचियों में जहाँ मुट्ठा लगाया जाता है, वहाँ से किनारे के ऊपर तक के भाग निकले रहते हैं। दोनों किनारे पर तीन-तीन मोटी कमचियों को, जो मुट्ठे के बाँस कहलाते हैं, उन फ्रेम की कमचियों के साथ बाँध दिया जाता है। इसकी विशिष्टताओं में कमचियों की बनावट सर्वोपरि है। ये जितनी सुन्दर, स्वच्छ तथा बारीक होंगी उतनी ही अच्छी चँगेरी तैयार होगी।

बिस्मार्क ब्राउन (Bismark Brown) G Come		३०० से ४०० ग्राम
मिथिल वॉयलेट (Methyl Violet)		५ ग्राम
रोडामिन रेड (Rodamin (Red)		५ ग्राम
पानी	B	५४० से ६०० ग्राम

तापमान ८० से १०० सेंटी०

समय १० से १५ मिनट

किन्तु, वस्तुओ की मुटाई के अनुमार समय मे कमी-वेशी भी की जा सकती है। जो वस्तु पतली कमचियो से वनी हे, उसके लिए उपरिलिखित समय ठीक है। मगर यदि कोई वस्तु मोटी कमचियो से वनाई गई है, तो उसके लिए ज्यादा समय की आवश्यकता होगी। समय की निश्चितता का ज्ञान अनुभव के आधार पर ही हो सकता है।

उपर्युक्त क्रिया में सर्वप्रथम रगो का मिश्रण वनाकर गरम करते हैं। जव उसका ताप ८० सेंटीग्रेड से कम हो जाय, तव उसमे वस्तुओ को डाल देते हैं और १५ से २० मिनट उसमे रहने वाद निकाल लेते हैं। निकालने के वाद वस्तु को किसी उपयुक्त चीज से चारो ओर से दवाकर रख देते है। यदि दवाकर नही रखा जाय, तो उसकी आकृति मे विकृति आ जाने की सम्भावना रहती है। यदि वह वस्तु अच्छी तरह ठडी हो जाय, तो उसे वहाँ से हटाकर ठडे पात्र या ठडे स्थान मे रख देना पडता है।

रगो के मिश्रण करने तथा घोल बनाने की विधि

उपर्युक्त परिमाण में सर्वप्रथम रोडामिन ओर मिथिल रगो मे वॉयलेट को मिलाते हैं। वाद, विस्मार्क रग के रोडामिन और मिथिल रगो मे वॉयलेट ५ ग्राम मिलाकर किसी वडे पात्र मे गरम करते हैं, तव वस्तु को इसमें डालते हैं। (समय ऊपर दिया गया है।)

किन्तु, सवसे जो कम खर्चीली विधि हे, वह यह है—

(१) चीना स्याही (China Ink) ३ भाग और पानी एक भाग लेकर—दोनो का अच्छी तरह मिला देते हैं। इसके वाद उसमे थोडा-सा वोंड पेस्ट (Bond Paste) मिलाकर एक चौडे ब्रश के द्वारा लगा देते हैं।

(२) कही-कही वाजार मे चीना स्याही का चूर्ण मिलता है, जिसका व्यवहार उत्तम होता है। इस विधि के अनुमार चीना स्याही के चूर्ण का एक भाग ओर श्वेत खली (Chalk) ३ भाग लेकर खरल मे डालकर अच्छी तरह मिलावट करते हैं। वाद, वस्तु, जो रोडामिन रग मे रँगी गई हे, के ऊपर उपर्युक्त स्याही लगा दी जाती है ओर तव, सूखने के लिए छोड देते हैं।

(३) वाजार मे तरल चीना स्याही भी मिलती है, उसमे चित्रकार ड्राइग तथा नक्शे आदि वनाते हैं। इसको भी रोडामिन रग मे रँगी वस्तु पर लगाते हैं।

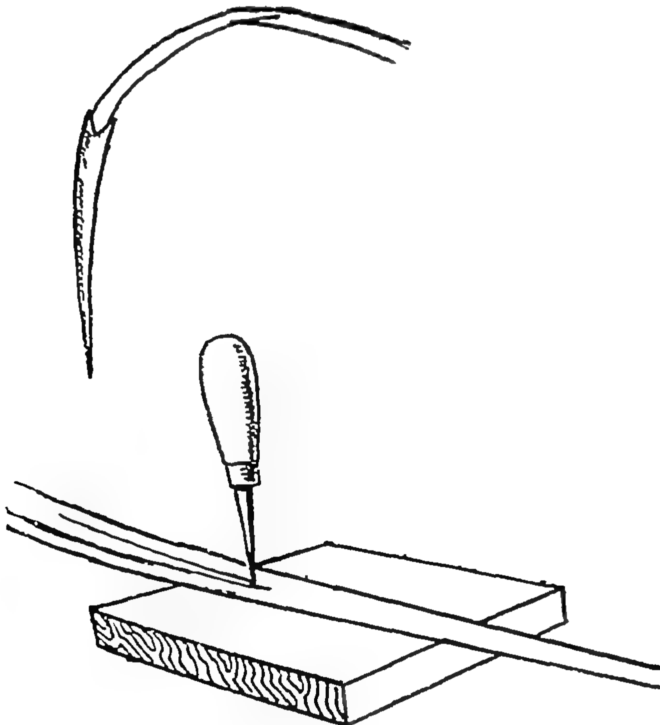
पञ्चम भाग

अन्य उपयोगी वस्तुओ का निर्माण

बाँस का कोई भी हिस्सा फेंकना या जलाना बहुत बडा अपराध समझा जाना चाहिए। क्योंकि, इसके पत्ते, जड, कोपल, टहनियाँ—सभी काम में लाये जाते हैं और इनसे उत्तम-से-उत्तम कलात्मक हस्तशिल्प की सामग्री तैयार की जा सकती है। इन उत्तम वस्तुओं से जहाँ एक ओर लोगों की रोजी-रोटी की समस्या भी हल होगी और देश का आर्थिक विकास होगा, वही हमारा हस्तशिल्प-उद्योग का भविष्य भी उज्ज्वल बनेगा।

पत्तो का उपयोग

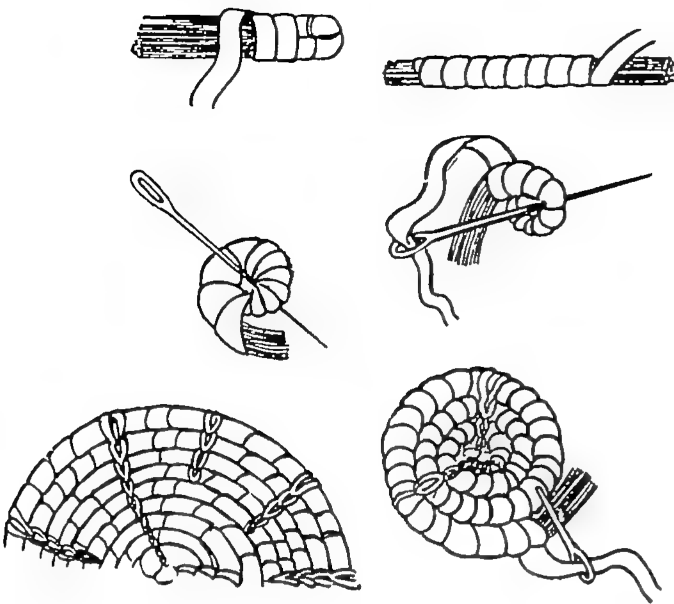
(१) इसके पत्ते मछली या मास ढकने के काम में आते हैं।
(२) इनसे चटाई भी बुनी जाती है।
(३) बाँस के पत्तो से चप्पल बनाये जाते हैं।
(४) इनसे हैंडबैग आदि भी बनाये जा सकते हैं।



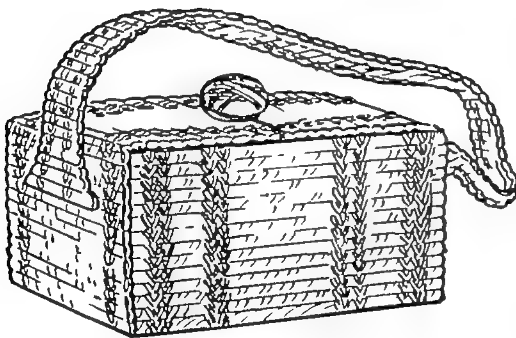
(चित्र ७०)

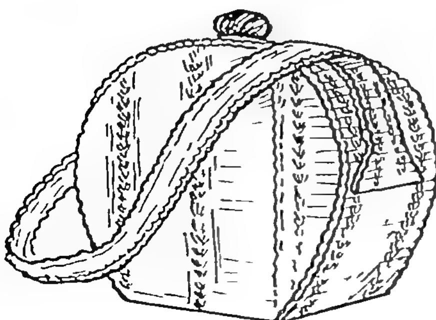
कोपल का उपयोग

बाँस की कोपल, (जिसे कही कही सुपली भी कहते हैं), से अनेक प्रकार की सुन्दर चीजें तैयार की जाती हैं। इससे वस्तुओं के निर्माण करने में मूँज (मूँज घास) की सहायता ली जाती है। मूँज का पतेल छप्पर छाने के काम मे आता है। इसी मूँज से रस्सी भी तैयार की जाती है। इन दोनो से बननेवाली वस्तुओं के निर्माण मे



(चित्र १७६)





(चित्र १८०)

पानी झाडकर घोल मे खडा करके दो दिनो तक छोड देते हैं। घोल मे कोपले तव रखी जायँ जव घोल मे फँफूदी दिखाई पडने लगे।

दो दिनो के वाद जव कोपले (सुपली) निकाली जायँ, तव उन्हें ठडे पानी में—झरने या धारा का पानी हो तो और अच्छा—धोकर दो-तीन दिनो तक धूप मे रख देना होता है। इसके धूप मे सुखाने की विधि यह है कि कोपलो को लकडी के तख्ते पर रखकर पिन लगा देते हैं। इस विधि से कोपलें अच्छी तरह सीधी हो जाती हैं। पर, ऐसी कोपलो की बनी वस्तुओ से प्रकृतिगत कोपलो की बनी वस्तुएँ अधिक टिकाऊ होती हैं। क्योकि, साफ की गई कोपलें रासायनिक द्रव्यो के व्यवहार के कारण कुछ कमजोर हो जाती हैं, किन्तु साफ की गई कोपलो की बनी वस्तुएँ देखने मे वहुत ही सुन्दर लगती हैं। ऐसी कोपलो से वनी वस्तुओ के तैयार करने के तरीके चित्र १७६ मे और तैयार वस्तुओ के नमूने चित्र १८० मे दिखाये गये हैं।

वाँस का गिलास

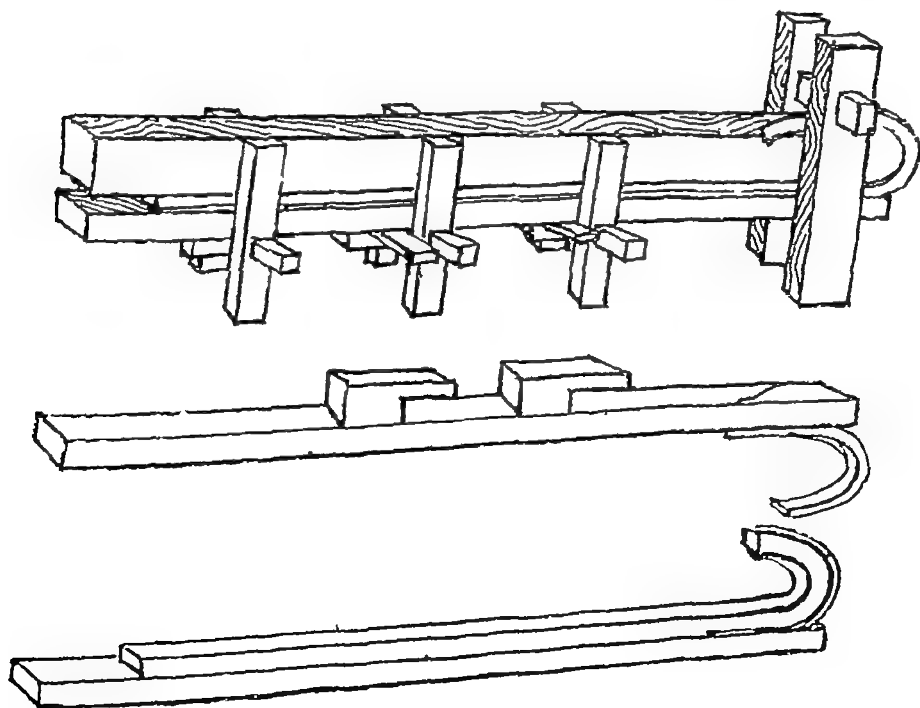
गिलास वनाने के लिए वाँस को अक्टूवर महीने तक काट लेना चाहिए। वाद,

बॉस की डालियो से वस्तुओ का निर्माण

बाँस की मोटी डाल को काटकर, माला की कण्ठी की तरह, उसे छोटे-छोटे टुकडे मे विभक्त कर लेते हैं। इन कण्ठियों को विभिन्न प्रकार की बुनियादी रगो मे रँगकर गूँथ लेते है। भोजन जिस टेबुल पर किया जाता है, उसपर रखने के लिए इससे दस्तर-खान (चटाई), हाथ का बैग आदि बनाते हैं। इनसे अच्छे और सुन्दर खिलौने भी बनाये जाते हैं। किन्तु, कण्ठियो को काटने के लिए बिजली की मशीन से चलनेवाली गोल आरी का व्यवहार करते है, तभी यह लाभदायक होता है, अन्यथा हाथ की आरी से काटने मे श्रम अधिक लगता है और सामान कम तैयार होता है।

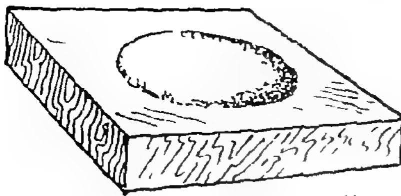
कमचियो की जोड़ से छड़ी

कई मोटी कमचियों को एक साथ सटाकर (प्लाइ ऊड की तरह) छडी बनाने की प्रथा हमारे देश में प्राय नही है। इस ढग से बनी छड़ी खासी मजबूत और सुन्दर होती है। ऐसी छडी को गोल आकृति देने में कठिनाई भी है, किन्तु अच्छे कारीगर इसे भी कर लेते हैं। इस तरह की छडियो के बनाने की विधि नीचे दी जाती है—

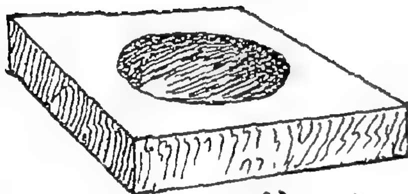


(चित्र १८७)

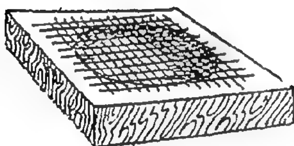
(१) पहले बॉस की गाँठों को रन्दे से साफ कर चिकना और बराबर कर लेते हैं, तब कमचियो को चीरते हैं। इसकी कमचियाँ दो तरह की होती हैं—एक छिलकेवाली

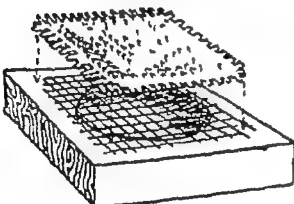


(चित्र १८३)

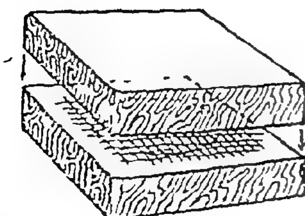


(चित्र १८४)





(चित्र १८५)



(चित्र १८६)

(१२) इसके स्थान पर फेनल ग्लू (Phenal glue) भी कमचियों को साटने के काम मे आता है।

(१३) रेडियो हीटर से कमचियों को निकाल लेने के बाद कुछ देर ठंडा होने के लिए छोड देते हैं।

(१४) इसके बाद फिर इस पर रंदा मारते हैं और सैंड पेपर से साफ कर देते हैं।

(१५) इन कामो के बाद उसपर चपडे की हल्की परत चढ़ा देते हैं और तब छडी तैयार हो जाती है।

बाँस की चटाइयो को साटकर प्लाइ ऊड की तरह बनाना

इस काम के लिए भी, पूर्वोक्त विधि के अनुसार ही, कमचियो को तैयार करते हैं और इनसे बनी चटाइयों को पूर्वोक्त रीति से ही, साटकर प्लाइ ऊड के तख्ते की तरह बना लेते हैं। विधि नीचे दी जा रही है—

(१) ऐसे कामों के लिए तीन प्रकार की चटाइयाँ बनाई जाती हैं।

(२) ऐसी चटाइयों के बनाने के लिए पहले एक लकडी का साँचा बना लेना होता है। वस्तु की जिस तरह आकृति चाहते हैं, उसी तरह का ढक्कनदार साँचा बनाया जाता है। साँचे के निचले और ऊपरी हिस्से को चित्र १८३ और चित्र १८४ मे दिखाया गया है।

(३) इस साँचे के अन्दर लोहे के तारों की एक जाली बनाकर लगा देते हैं, जिससे ऊपर से रखी चटाई साँचे में दबाते समय डिस्प्लेसमेंट के कारण सटने नहीं पाती है। तारों की बनी जाली को साँचे में

(२) इसे साँचे मे रखने और ढक्कन से ढँकने के पहले—इन दोनों में पाराफीन (Paraphin) लगा देते हैं।

(३) बाद, साँचे को थोडा गरम करते हैं और उसे कपडे से अच्छी तरह पोंछ देते हैं।

(४) साँचे के आकार के कार्ड-बोर्ड भी काट लिये जाते हैं, जो साँचे और चटाई के बीच मे रखे जाते हैं।

(५) इसी के आकार के अनुसार चटाई को भी काट लेना अच्छा होता है।

(६) कार्ड-बोर्ड को नरम करने के लिए उसे दोनों तरफ पानी से अच्छी तरह पोंछ देना श्रेयस्कर होता है।

(७) इसके बाद कार्ड-बोर्ड मे ब्रश से एक प्रकार की बनाई गई गोंद लगा देते हैं।

(८) पश्चात्, चटाई पर भी बोंड का लेप कर देना होता है।

(९) निचले साँचे मे क्रमबद्ध करके पहले कार्ड-बोर्ड रखते हैं और उसके ऊपर चटाई, फिर ऊपर से कार्ड बोर्ड रखते हैं और उसके ऊपर से ढक्कनवाला साँचा रखकर प्रेसर से कस देते हैं। प्रेसर के दो चित्र यहाँ प्रदर्शित हैं, जिनको चित्र १८८ और चित्र १८९ मे दिखाया गया है। थोडी देर, प्रेसर मे सामान को कसे ही सूखने के लिए छोड देते हैं। बाद, प्रेसर को ढीलाकर एक विशेष प्रकार का बोंड लगाकर गरम पानी के सहारे सामान को निकाल लेते हैं।

(१०) तत्पश्चात्, सैंड पेपर से साफ कर चपडे की परत चढा देते हैं और तब सामान तैयार हो जाता है।

बाँस का चिलमन तथा परदा आदि

(५) इसके बाद कुछ कमचियो को रगीन बनाकर और मशीन की सहायता से चिलमननुमा वस्तुओ का निर्माण करते हैं।

हमारे यहाँ ऐसी वस्तुओं के निर्माण का व्यवसाय करने का ढग बिलकुल नही के बराबर है। एक सेट मशीन के द्वारा सैकडो बेरोजगारो को रोजी मिल सकती है और गृह-शिल्प-उद्योग भी पूर्ण उन्नत हो सकता है। अच्छा यह होगा कि साफ करने, चीरने, फाडने आदि कार्यों के लिए यदि मशीन का व्यवहार हो, तो बुनाई का काम बहुत बडे पैमाने पर बढ़ जाय।

मछली पकड़ने की बसी

हमारे देश मे बसी को बाँसो की डालियो से या विभिन्न जाति के पतले बॉसो से बनाते हैं। बसी का व्यवहार तथा निर्माण का कार्य भारत के सभी प्रान्तो मे है। केवल शहर मे ही आकर्षक ढग की बसी काम में लाई जाती है। इस व्यापार का क्षेत्र हमारे यहाँ बहुत विस्तृत है। यहाँ एक ही बॉस या एक ही डाल से छोटी-बडी सभी तरह की बसियाँ बनती हैं। पर, यदि बाँसों को कई टुकडो में करके और एक के अन्दर दूसरा टुकडा घुसाकर बसियाँ बनाई जायँ, तो वह बडी ही उपयोगी होती हैं। कई टुकडो में बनाई गइ बसी चित्र १९१ में दिखाई गई है। इन्हें बाहर ले आने और ले जाने में सुविधा होती है।

जापान में इस तरह की खण्डित बसी अत्यन्त आकर्षक ढग की बनाई जाती है, जिसको देखकर मनुष्य का मन प्रसन्न हो जाता है। उसकी मनोहरता के चलते मछली नही पकडनेवाला व्यक्ति भी घर में, केवल शोभा के लिए, एक बसी खरीदकर रखना चाहेगा। इस तरह की बसी बनाने की विधि नीचे दी जाती है—

(१) पूर्वनिर्देशानुसार पहले बॉस को सीधा कर लेते हैं और तब उसे अच्छी तरह राख या धान के भूसे से साफ कर लेते हैं।

(२) विभिन्न मुटाई के बॉस को बराबर लम्बाई में काट लेते हैं।

(३) बाँस के टुकडो की भीतरी गाँठों को विशेष प्रकार के औजारो से निकाल देते हैं। औजारो की रूपरेखा चित्र १९० में प्रदर्शित है। यह औजार तीन तरह के होते हैं। चित्र के दाहिने किनारे मे तीनो के रूप दिये गये हैं।

(४) दोनो किनारों को और ऊपरी गाँठों को रेती से साफ कर देते हैं। पतली और लम्बी रेती मे भीतरी भाग को भी ऐसा घिसकर साफ करते हैं, जिससे एक के अन्दर दूसरा बाँस घुस सके।

(५) टुकडे-टुकडेवाले बाँसों के दोनों छोरों को बटे और मजबूत सूत से घना करके घेरे के साथ सटा-सटाकर चौडाई मे बाँध देते हैं। सूत का घेरा देते समय उस पर लाह का लेप लगा देते हैं, जिससे वह पूर्ण स्थायी तथा मजबूत हो जाता है। बाद, घेरा दे देने पर लाह का एक दुहरी लेप भी लगा देते हैं। कोई-कोई लाह के लेप की जगह धान-चूर्ण का लेप लगाते हैं, जिससे बसी और भी मजबूत हो जाती है।

होगा कि जो कई सौ सालों तक टिकेगा। बॉस के बने छोटे पात्र या टोकरी मे भी इस प्रकार से चटाई साटकर सामानो को सुरक्षित रखने का बक्सा बनाया जा सकता है।

इन वस्तुओ के बनाने की विधि जापान तथा चीन मे प्राय एक ही प्रकार की है, पर बर्मा मे भिन्न है। लाह का कार्य भारत मे अति प्राचीन काल से होता था, यानी मौर्ययुग से भी पहले। इसका एक उदाहरण तो महाभारत मे भी है, जिसके अनुसार पाण्डवो का नाश करने के लिए दुर्योधन ने जतुगृह (लाह का घर) का निर्माण कराया था। पर दुर्भाग्यवश आज लाह की महत्ता हम उतना नही समझ रहे है।

जापानी प्रणाली—वस्तु के ऊपर पहले पतला सा लाह का अथवा काजू का पेंट चढाते हैं। इसके बाद सूखने के लिए छोड देते हैं। तत्पश्चात, उसपर पीली मिट्टी मे लाह मिलाकर और उसे फटकर चिकना बनाया जाता है। इसे वस्तु पर लगा देते हैं। ऐसा करके वस्तु को थोडी देर धूप मे रख देते हैं, जिससे वह सूख जाय। बाद मे पुन. उपर्युक्त चीजो का पोत चढाया जाता है और इस बार काफी देर तक वस्तु को धूप में सुखाते हैं। उसी तरह सूख जाने पर सैंड पेपर से रगडकर भली भाँति वस्तु को चिकना कर लेते हैं।

पश्चात्, वस्तु पर लाह का प्रयोग करते हैं। इस प्रयोग में पहली बार लाह का लाल या पीला रग चढाया जाता है। दूसरी बार लाह का काला या लाल रग देते हैं और तीसरी बार लाह का स्वाभाविक रग अथवा उसे भूरे रग का बनाकर वस्तु पर चढाते हैं। तीसरी बार मनोनुकूल रग दिया जा सकता है। प्रत्येक बार रग देने पर दूसरे रग देने के पहले, वस्तु को सुखा लेना नितान्त आवश्यक है और हर बार सैंड पेपर से उसे साफ कर लेना भी जरूरी होता है। इस तरह सभी रगो को चढाकर, सुखाकर तथा साफ हो जाने पर लकडी के कोयले का व्यवहार किया जाता है। लकडी के कोयले से धीरे धीरे घिस-कर वस्तु पर चढा हुआ ऊपरी रग हटाकर भीतरी रग का उभार किया जाता है, जिससे वस्तु की रूप-रेखा चित्र-विचित्र दिखाई पडने लगती है और वह कुशल कलाकार के रेखाकन-सी लगने लगती है।

उपर्युक्त क्रिया समाप्त हो जाने पर भीगे कपडे से अच्छी तरह वस्तु को पोछकर सूखने के लिए छोड दिया जाता है। बाद, चपडे का एक पोत चढा दिया जाता है, जिससे वस्तु में अत्यन्त चमक आ जाती है। ये सारी क्रियाओं के करने मे चार दिनों का समय अपेक्षित होता है।

सुनहले तबक की प्रयोग-विधि

कारीगर सेकाइओ पिगमेंट (Sekaio Pigment) रग और अरबियन गम (Arbian gum)—इन दोनो को पानी में मिलाकर रग तैयार करते हैं। इस रग को चढा लेने पर लाह का लेप लगाकर रूई से वस्तु को पोछ देते हैं तथा सुनहली पत्ती देकर जल से धोते हैं। धोने के बाद जिस स्थान पर रग या लाह नही रह जाते, उसी स्थान पर सुनहली पत्ती दिखाई पडने लगती है। शेष स्थानो पर सुनहला रग बचा रह जाता है।

भारतवर्ष मे भी टोकरी, सूप, डगरा आदि सामानों को मजबूत बनाने के लिए केवल गोबर-मिट्टी तथा अलकतरा का प्रयोग होता है, जो अत्यन्त प्राचीन प्रणाली है।

बाँस पर खुदाई-शिल्प की प्रणाली

इस प्रणाली के द्वारा साधारण-से-साधारण बाँस पर भी मनोनुकूल चित्रो का रेखाकन करके अद्भुत तथा अत्यन्त आकर्षक वस्तुएँ तैयार की जा सकती हैं, जिन्हें सजाकर अपने कमरे की शोभा बढाई जा सकती है। इस प्रणाली से प्रस्तुत की गई वस्तुओ को बाजार में बेचकर अपनी आर्थिक स्थिति भी सुधारी जा सकती है। इस तरह के बाँस-शिल्प का विकास ससार के देशों मे नहीं के बराबर है, किन्तु जापान तथा चीन मे इस शिल्प का पूर्ण विकास हुआ है।





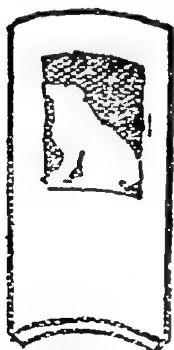


















(चित्र १९६)

जिसका व्यवहार अनेक स्थलों पर होता है। इसे चित्र १९४ में देखा जा सकता है।

(२) **केवरी**—यह त्रिकोणरेखावाली खुदाई होती है, जो चित्र १९५ में दिखाई गई है। यह कार्य तिरछी धारवाली छुरी से भी किया जाता है और विशेषतः अक्षर लिखने का कार्य इससे होता है।

(३) **उक्कीवरी**—यह कार्य चित्र १९३ के पहलेवाले औजार से ही करते हैं। इसकी विशेषता यह है कि आकृति काढ लेने पर उसके चारों ओर के हिस्से को निकालकर, उन स्थानों में तथा नीचे के स्थान में, भाव का प्रदर्शन करते हैं। जैसे फूल आदि ऊपर तथा नीचे बनाकर दिखलाते हैं।

(४) **निकुवरी**—इसकी क्रिया उपर्युक्त उक्कीवरी के ठीक विपरीत होती है।

(५) **हिरावरी**—इसमें खुदाई का काम समतल भूमि की तरह नीचा करके दिखाया जाता है। इसमें अर्द्धाकार आकृति का औजार व्यवहृत होता है।

(६) **हितोवरी**—इस विधि के अनुसार चौडाई लिये त्रिकोणाकार खुदाई का कार्य होता है।

(७) **मिगाकी उकोसियावरी**—यह विधि भी अर्द्ध गोलाकार और त्रिकोणवाले औजार से सम्पन्न होता है, जो चित्र १९३ का तीसरा औजार है।

(८) **उकुसोवरी**—यह एक कोणवाले औजार से सम्पादित होती है। यह खुदाई ठीक लकडी पर की खुदाई-जैसी होती है।

(९) **मिया उम्मीवरी**—यह विधि भी अर्द्धाकार तथा एक कोणवाले औजार से सम्पन्न की जाती है। जिस तरह ब्लॉक बनाने के लिए जस्ते अथवा ताँबे की पट्टी पर 'एचिंग' का काम होता है उसी तरह इस विधि के अनुसार पत्थर पर चित्र बनाया जाता है। इसी का नाम

(क) एक तो खुदाई का काम तब होना चाहिए, जब बाँस पर रंग आदि चढ़ाने का काम हो गया हो।

(ख) दूसरी बात यह है कि जब बाँस पर गोलाकार औजार का व्यवहार करने लगें, तब बाँस को घुमा घुमाकर करें नहीं तो बाँस के गोल होने के कारण औजार के फिसल जाने की सम्भावना अधिक रहती है, जिससे या तो हाथ कट जाता है अथवा बाँस मे खरोंच पड़ जाती है।

इन बातों के साथ ही निम्नलिखित कार्य सम्पन्न कर लेने के पश्चात् ही खुदाई-शिल्प का काम करना चाहिए—

(१) सबसे पहले बाँस को पानी से धोकर और कपड़े से पोछकर उसका छिलका छुरी से हटा लेना चाहिए। इसकी विधि भी चित्र में दिखाई गई है।

(२) बाद, बाँस को गरम करके ब्रश के द्वारा 'बिस्मार्क-ब्राउन' रंग लगाया जाता है। पश्चात्, सूखने के लिए कुछ देर छोड़ दिया जाता है अथवा आग दिखाकर सामान को सुखा लिया जाता है।

(३) उपर्युक्त विधि के अनुसार बाँस पर तीन बार 'बिस्मार्क ब्राउन' चढ़ाया जाता है और हर बार सुखाया जाता है।

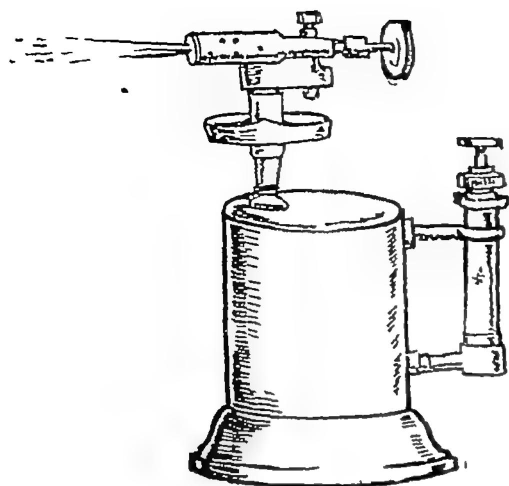
(४) बाद, मोटे कपड़े से घिसकर बाँस पर चमक लाना पड़ता है।

(५) बाँस पर जो चित्र बनाया जायगा, पहले पेंसिल से उसकी आकृति बना लेनी पड़ती है।

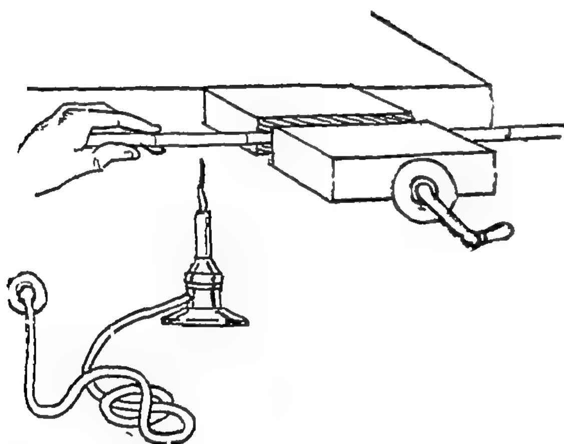
(६) चित्र के जिस स्थान मे गाढ़ा रंग दिखलाना है, उस स्थान मे काला चीना रंग चढ़ा देना चाहिए।

(७) काला चीना रंग को आग दिखाकर सुखा लेना अत्यन्त आवश्यक होता है।

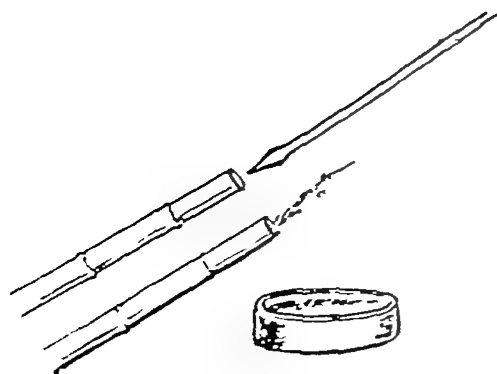
(८) बाद, कपड़े के द्वारा बाँस पर वार्निश करनी चाहिए, जो अत्यन्त हल्का हो। नहीं तो पहले का चढ़ाया गया रंग लुप्त हो जायगा और वार्निश की ही प्रधानता



(चित्र २००)



(चित्र २०१)



(चित्र २०२)

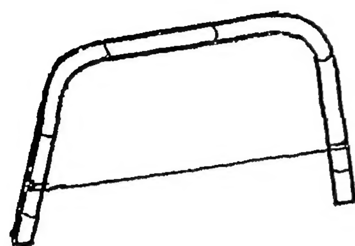
कुर्सी, टेबुल आदि का निर्माण

बाँस से टेबुल, कुर्सी, खटिया आदि बनाने की प्रणाली हमारे देश में भी प्राचीन है। किन्तु, इन सामानों को बनाने की प्रक्रिया हमारे यहाँ कोई एक निश्चित रीति से नहीं होती है या न इसकी कोई वैज्ञानिक पद्धति ही है। प्रत्येक प्रान्त के कारीगर अपने प्रदेश में प्रचलित परम्परा के अनुसार बाँस की उक्त वस्तुएँ बनाते हैं। वे किसी एक पद्धति का अवलम्बन नहीं करते, नाना विधियों का प्रयोग करते हैं। इस तरह के बने सामानों में न तो नियमितता होती है या न आकर्षण ही होता है। केवल उपयोगिता की दृष्टि से ही कारीगर वस्तुओं का निर्माण करते हैं।

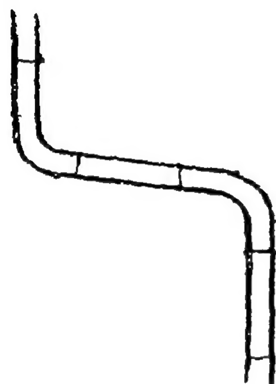
भारत में आजकल कुछ आधुनिक रीति से कुर्सी आदि सामानों का निर्माण हो रहा है। किन्तु, ये न तो पर्याप्त हैं और न उच्च कोटि के ही होते हैं। जापान में जिस वैज्ञानिक और निश्चित पद्धति से फर्नीचर तैयार होते हैं, वे पूर्ण आकर्षक और टिकाऊ बनाये जाते हैं। उनकी [illegible] सफाई से ही [illegible] [illegible]

उसी अवस्था मे हाथ से पकडकर रखते ह और ठढा होने पर छोडते हैं। फिर उसे भीगे कपडे से पोछकर अच्छी तरह ठढा कर लिया जाता है। इस तरह कई बार बॉस को गरम करके टेढा या सीधा किया जाता हे। एकाएक गरम कर टेढा या सीधा करने के प्रयास मे या तो बाँस फट जायेगा या टूट जायेगा। इस बात पर कारीगर को खूब ध्यान रखना पडता है।

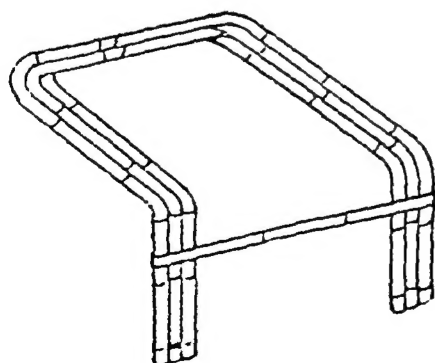
उपर्युक्त विधि सम्पन्न हो जाने पर आवश्यकतानुसार बॉस को तेज आरी से काट लेना चाहिए। बाद मे फाइबर (Fiber) ब्रश के सहारे या बालू (Stone-powder) से मलकर धो देना चाहिए। फिर साफ सुथरे कपडे से बॉस को पोछ लेना चाहिए। यदि अच्छी बालू उपलब्ध नही हो तो धान की भुस्सी से ही साफ कर लेना चाहिए। अगर फोंफला ही बाँस उपलब्ध है, तो कारीगर को चाहिए कि भीतर की गाँठ निकाल दे और बाँस मे तमाम बालू भर दे। ऐसे बाँस को सेंक कर टेढा या सीधा कर लिया जाता हे। इच्छित काम हो जाने पर शीघ्र बालू को निकाल देना चाहिए, अन्यथा बाँस फट जायेगा। गाँठ के निकालने और बालू भरकर सेकने के बाद बालू निकाल देने की विधि चित्र २०२ मे दिखाई गई हे। यदि बाँस मे छिद्र अत्यन्त कम है, तो उसके भीतरी अश को नही निकालना चाहिए। ढाँचा तैयार करनेवाले बाँस को जहाँ टेढा करना होता है, उसी स्थान पर सेका जाता हे। इसलिए सकने के पहले उस स्थान पर उभय पार्श्वो मे निशान लगा देना चाहिए। ढॉचेवाले सभी बाँसो को इसी विधि से टेढा करना पडता है। यदि बाँसो को जोडने की आवश्यकता हो, तो उन्हें परस्पर लकडी की कील ठोंक कर जोड देना चाहिए।



(चित्र २११)



(चित्र २१२)



दोनो किनारो के फ्रेमो को जोडने के के लिए कारीगर को चाहिए कि फ्रेमवाले बॉस की गाँठ से आगे हटकर उसे तिरछा काटे। फिर दूसरे फ्रेमवाले बाँस को उसी प्रकार, विपरीत रूप में, तिरछा काटना चाहिए। इस विधि से काट कर जब दोनो को जोडा जाता है, तब ठीक रूप मे बॉस मिल जाते हैं और जोड़ने का चिह्न दिखाई नही पडता है। तिरछा काट लेने पर बाँस के पोले भाग के बराबर की लकडी की एक कील, कुछ ज्यादा भीतर तक, ठोक दी जाती है और फिर दूसरे फ्रेम के छेद मे उस कील को घुसाकर ठीक से बाँसो को जकड दिया जाता है। अगर बाँस पोला नही हो तो चित्र २०२ मे प्रदर्शित ढग से उसे पोला कर लेना चाहिए। कील के द्वारा जब फ्रेम ठीक से जुड जाता है, तब ऊपर से काँटी ठोक दी जाती है, जिससे जोड खूब मजबूत हो जाती है। जोडने का ढग चित्र २०८ मे दिखाया गया है।

कारीगर जब दोनो फ्रेम को जोड लेते हैं, तब उन्हें पैरवाले भाग के बीच मे, कुर्सी के बीच भाग मे, उसकी मजबूती के लिए, आडी देनी पडती है। आडीवाले बॉस को, जहाॅ से मोडा जायगा, वहाॅ, दोनो ओर के हिस्से मे काटकर पतला बना लिया जाता है, जिससे वह गरम करने पर आसानी से मुड जाता है। पहले चटाईवाले भाग का और अग्रभाग का मापकर मोडनेवाले स्थान पर निशान लगा देना चाहिए। आडीवाला बाँस जब मुड जाता है, तब पैर के फ्रेम मे सटाकर काँटी ठोक दी जाती है। लगाई गई आडी का प्रदर्शन चित्र २०९ मे किया गया है।

[illegible] कारीगर पहले कुर्सी [illegible]

गई है। यदि रदे से गाँठ अच्छी तरह बराबर न हो तो उसे रेती से रेतकर बराबर कर दिया जाता है। इसके बाद भी बालू रगड़कर बाँस को पूर्ण चिकना कर लेना पड़ता है। ये विधि उन मोटी कमचियों के लिए है, जिन्हें बुनावट वाले स्थान में फ्रेम के रूप में देना पड़ता है। बाकी साफ की हुई मोटी कमचियों को चूल्हे अथवा ग्लास लैंप की सहायता से सेंककर इच्छित दशा में टेढ़ा कर लेना पड़ता है। इस विधि का प्रदर्शन चित्र २०० और २०१ में किया गया है। प्रत्येक मोटी कमची को टेढ़ा कर लेने पर दोनों शेषांश को फ्रेम के भीतर रखकर तब सभी कमचियों को बराबर में मोड़ दिया जाता है। अब प्रत्येक कमची को सजाकर फ्रेम के अन्दर रखकर रस्सी से बाँध देते हैं और तब काँटी ठोंक कर जकड़ देते हैं। जिन स्थानों पर काँटियाँ ठोंकी जाती हैं, उन स्थानों पर बेंत की मोटी त्वचा लपेट कर बाँध देते हैं, जिससे काँटियाँ छिप जाती हैं। इतनी विधि के बाद कुर्सी तैयार हो जाती है, जिसका रूप चित्र २१८ में प्रदर्शित है। पश्चात् कुर्सी के सभी भागों पर चपड़े का लेप (कोटिंग) चढ़ा देते हैं। इस लेप से बाँस या बेंत वाले अंश में सर्वत्र एक चमक आ जाती है और कुर्सी सुस्निग्ध तथा बैठने में आरामदेह हो जाती है।

इन्हीं सब विधियों से थोड़ा हेर-फेर करके टेबुल, बेंच तथा अन्य सामग्रियाँ भी बनाई जा सकती हैं।

लाह के लेप बनाने की पद्धति

कारीगर को चाहिए कि लाह का लेप ऐसा तरल बनावे, जिससे सामान में नेत्र-मोहक चिकनापन आ जाय। चीन और जापान में जो लाह का लेप तैयार होता है, उसकी बड़ी विशेषता यही है कि बनी वस्तु को इस तरह चमका देता है, जिससे देखनेवाले लुभा जाते हैं। अब यहाँ चीनी या जापानी लेप की तरह भारतीय लाह को तरल बनाने की विधि बतलाई जा रही है।

(१) **लाह का Ethyl alcohol (C_2H_5OH) में घोल बनाना**—पहले दोनों को एक शीशे के बर्तन में रखकर उसमें बहुत थोड़े परिमाण में अलकोहल (Alcohol) मिला देते हैं और ६० सेंटिग्रेड परिमाण के ताप में लाकर घोल तैयार कर लेते हैं। बाद में आवश्यकता के अनुसार अलकोहल मिलाकर गाढ़ा या पतला घोल बनाते हैं।

लाह के गलाने की पद्धति—(१) एक शीशे के बर्तन में ६० ग्राम लाह के साथ मेथील अलकोहल (Methyl alcohol) लगभग ०/१० CH3OH, ५०० सी० सी० (500 c c) दो घंटे तक गरम किया जाता है। बाद में छनना कागज से उसे छान दिया जाता है।

यदि इस उपाय से लाह खूब स्वच्छ नहीं होता हो, तो उसमें क्लोरोफार्म (Chloroform) मिलाकर छान लेना चाहिए। इससे लाह बिलकुल स्वच्छ हो जाता है। लाह में मोम (Wax) और रोजन (Rosin) रहता है। यह क्लोरोफार्म

पहले सामान को अच्छी तरह सुखा लिया जाता है। उसके बाद लकडी के अच्छे कोयले से उसे खूब घिसकर साफ तथा चिकना किया जाता है। इसके बाद कपडे से सामान को अच्छी तरह पोंछकर उसपर उक्त लेप को एक परत लगा देते हैं। पहला लेप सूख जाने पर पुन एक परत लेप कर देते हैं, जिससे वस्तु के ऊपर, सामान मे, खूब चमक आ जाती है।

इस विधि से फर्निचरो को स्वच्छ, चमकदार और आकर्षक बनाना व्यावसायिक और कलात्मक दृष्टि से सफल कहा जायगा।

परिषद् के महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

		मूल्य
१	हिन्दी-साहित्य का आदिकाल—आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी	३ २५
२	यूरोपीय दर्शन—स्व० महामहोपाध्याय रामावतार शर्मा	३ २५
३	हर्षचरित : एक सांस्कृतिक अध्ययन—डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल	६ ५०
४	विश्वधर्म-दर्शन—श्रीसाँवलियाबिहारीलाल वर्मा	१३ ५०
५	सार्थवाह—डॉ० मोतीचन्द्र	११ ००
६	वैज्ञानिक विकास की भारतीय परम्परा—डॉ० सत्यप्रकाश	८ ००
७	सन्त कवि दरिया : एक अनुशीलन—डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री	१४ ००
८	काव्य-मीमांसा (राजशेखर-कृत)—अनु० स्व० पं० केदारनाथ शर्मा	६ ५०
९	श्रीरामावतार शर्मा-निबन्धावली—स्व० महामहोपाध्याय रामावतार शर्मा	८ ७५
१०	प्राङ्मौर्य बिहार—डॉ० देवसहाय त्रिवेद	७ २५
११	गुप्तकालीन मुद्राएँ—स्व० डॉ० अनन्त सदाशिव अलतेकर	६ ५०
१२	भोजपुरी भाषा और साहित्य—डॉ० उदयनारायण तिवारी	१३ ५०
१३	राजकीय व्यय-प्रबन्ध के सिद्धान्त—श्रीगोरखनाथ सिंह	१ ५०
१४	रबर—श्रीफूलदेव सहाय वर्मा, एम० एस्-सी०	७ ५०
१५	ग्रह-नक्षत्र—श्रीत्रिवेणीप्रसाद सिंह, आइ० सी० एस्०	४ २५
१६	नीहारिकाएँ—डॉ० गोरख प्रसाद	४ २५
१७	हिन्दू धार्मिक कथाओं के भौतिक अर्थ—श्रीत्रिवेणीप्रसाद सिंह	३ ००
१८	ईख और चीनी—श्रीफूलदेव सहाय वर्मा	१३ ५०
१९	शैवमत—मूल लेखक और अनुवादक डॉ० यदुवंशी	८ ००
२०	मध्यदेश : ऐतिहासिक और सांस्कृतिक सिंहावलोकन—डॉ० धीरेन्द्र वर्मा	७ ००
२१-२४	प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण (खण्ड १ से ४ तक)	७ २५
२५-२८	शिवपूजन-रचनावली (चार भागों में)—आचार्य शिवपूजन सहाय	३६ २५
२९	राजनीति और दर्शन—डॉ० विश्वनाथ प्रसाद वर्मा	१४ ००
३०	बौद्धधर्म-दर्शन—स्व० आचार्य नरेन्द्रदेव	१७ ००
३१, ३२	मध्य एशिया का इतिहास (दो खण्डों में)—महापण्डित राहुल सांकृत्यायन	२० ७५
३३	दोहाकोश—मूल कवि : बौद्धसिद्ध सरहपाद, छायानुवादक : महापण्डित राहुल सांकृत्यायन	१३ २५
३४	हिन्दी को मराठी सन्तों की देन—आचार्य विनयमोहन शर्मा	१२ २५
३५	रामभक्ति-साहित्य में मधुर उपासना—डॉ० भुवनेश्वरनाथ मिश्र 'माधव'	१० ७५
३६	अध्यात्मयोग और चित्त-विकलन—स्व० वेंकटेश्वर शर्मा	७ ५०